बुन्देलखण्ड में अमेरिकी मिशनरियों की गतिविधियों का इतिहास

(१८९६ - १९४७ ई०)

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

में

पी० एच० डी० उपाधि हेतु

शोध प्रबन्ध

१९९४ - ९५

शोध निर्देशक

डा. कैलाश खन्ना

एम.ए., पी.एच.डी.

रीडर, इतिहास विभाग,

बुन्देलखण्ड कालेज,

झाँसी
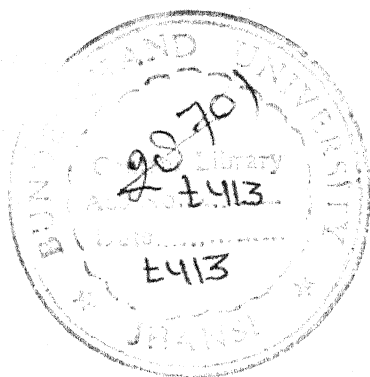
प्रस्तुतकर्ता

अजीत सिंह आनन्द

DR. KAILASH KHANNA
M.A.,Ph.D.,
READER, DEPTT. OF HISTORY
BUNDELKHAND COLLEGE, JHANSI.

CERTIFICATE

This is to certify that the research work embodied in the thesis submitted for the degree of Ph.D. in History, entitled," बुन्देलखण्ड में अमेरिकी मिशनरियों की गतिविधियों का इतिहास (1896-1947 ई)" is the original research work done by AJEET SINGH ANAND.

He has worked under my guidance and supervision for the required period.

(DR. KAILASH KHANNA)

प्राक्कथन

ब्रिटिश शासन की पराधीनता के दंश से पीड़ित बुन्देलखण्ड क्षेत्र के दरिद्रनारायण को अपनी सेवा, करूणा एवं मैत्री की शीतल छाया से राहत देने की ईसाइ मिशनरियों की गतिविधियों के मूल्यांकन की समस्या अत्यन्त जटिल है । एक ओर इनके आलोचक इनकी गतिविधियों को धर्मान्तरण कराने की पृष्ठभूमि में देखते हुये इनके व्दारा किये गये मानव सेवा के कार्यो को अवमूल्यित करके देखते है, दूसरी ओर हमें इन मिशनरियों के श्रम और दरिद्रनारायण की इनके द्वारा हुई सेवा अभिभूत करती है । इसी मूल्यांकन की सही दिशा खोलने के रूप में मुझे यह शोध प्रबन्ध लिखने की प्रेरणा प्राप्त हुई ।

बुन्देलखण्ड के आर्थिक सामाजिक एवं शैक्षणिक पिछडेपन के कारण ईसाइ मिशनरियों को यह भूमि अपने कार्यक्षेत्र के लिये आधिक उर्वर प्रतीत हुई । ब्रिटिश शासन ने 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम को विफल करने के पश्चात् इस क्षेत्र को अपने दमन चक्र से और भी उत्पीडित किया । इस उत्पीडन के परिणाम स्वरूप समाज के पिछडेपन में वृद्धि हुई तथा मानव सेवा के लिये ईसाइ मिशनरियों ने जो गतिविधियाँ चलाई उनसे उनके प्रति दुखी व असहायों की चेतना जुडती गयी ।

19 वीं शताब्दी के अन्त में ब्रिटिश शासन काल में अमेरिका की कुछ मिशनरियों का ध्यान भारत के बुन्देलखण्ड क्षेत्र की ओर आकर्षित हुआ और उन्होन यहां के आर्थिक एवं सामाजिक पिछडेपन से प्रेरित होकर इसे अपनी गतिविधियों का केन्द्र बनाया । इस क्षेत्र में आने वाली मिशनरियां मुख्यतः फ्रेन्डस फारेन मिशनरी सोसायटी, ओहियो ईयरली मीटिंग के सदस्यों व्दारा मिशनरी कार्यो के लिये समय-समय पर भारत में मिशनरियों को भेजा गया, बुन्देलखण्ड में इन मिशनरियों ने सर्वप्रथम नोगांव छावनी को अपना केन्द्र बनाया तथा 1896 ई0 में बुन्देलखण्ड के नोगांव क्षेत्र में अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की स्थापना की गयी । आगामी वर्षो में इस मिशन व्दारा इस क्षेत्र में धर्म प्रचार, चिकित्सा एवं शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किये ।

अमेरिका से आने वाली विभिन्न ईसाइ मिशनरियों व्दारा भारत के अनेक क्षेत्रों में मिशन स्थापित करने के पीछे उनका कोई न कोई उद्देश्य अवश्य था। सम्भवतः ईसाइ धर्म का प्रचार ही इन सभी मिशनरियों का मुख्य उद्देश्य था जिन्हें ब्रिटिश सरकार से अपने उद्देय की पूर्ति में पूर्ण सहायता मिली ।

बुन्देलखण्ड में इन मिशनरी गतिविधियों का क्या प्रभाव पडा तथा इन मिशनरियों की सहायता के पीछे ब्रिटिश सरकार का प्रमुख उद्देश्य क्या था इत्यादि प्रश्नों ने मुझे इस विषय पर शोध कार्य करने के लिये प्रेरित किया। यद्यपि यह
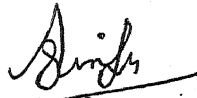
मिशनरी धर्म प्रचार के उद्देश्य से बुन्देलखण्ड में आये किन्तु इन्होने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये चिकित्सा एवं शिक्षा के क्षेत्र में अनेक कल्याणकारी कार्य किये । अकाल पीड़ितों की सहायता करके, अनाथालयों इत्यादि की स्थापना करके इन्होंने निसन्देह बुन्देलखण्ड की प्रगति में योगदान दिया ।

" बुन्देलखण्ड में अमेरिकी मिशनरियों की गतिविधियों का इतिहास " नामक शोध कार्य के लेखन में मैं सर्व प्रथम ईश्वर को धन्यवाद देता हूँ जिसकी कृपा से यह कार्य पूर्ण हो सका । इस कार्य में मेरे निर्देशक डा0 कैलाश खन्ना, रीडर, इतिहास विभाग, बुन्देलखण्ड महाविद्यालय झाँसी निरन्तर मेरी मदद करते रहे , मै उनका हृदय से आभारी हूँ । बुन्देलखण्ड कॉलेज इतिहास विभाग के अध्यक्ष डा0 एस0पी0पाठक के मार्गदर्शन के प्रति भी मैं कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ । बुन्देलखण्ड महाविद्यालय के प्राचार्य डा0 जे0पी0 अग्निहोत्री के प्रति मैं आभार प्रकट करता हूँ । जिनके प्रोत्साहन और सहयोग के फलस्वरूप मुझे इस विषय पर शोध कार्य करने की प्रेरणा मिली । जीवन की दौड में बच्चों के जीत जाने और स्वयं हा[illegible] कामना करने वाले अपने पूज्य माता पिता के प्रति मैं हार्दिक रूप से कृतज्ञ हूँ जिनके आशीर्वाद से मुझे शोध कार्य में पग पग पर सहायता मिली ।

राष्ट्रीय अभिलेखागार नई दिल्ली के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के प्रति भी मैं आभार व्यक्त करना चाहता हूँ । जिन्होने इस कार्य के लिये अध्ययन

सुविधा उपलब्ध करा कर मेरी सहायता की । मै ब्रिटिश लाइब्रेरी, अमेरिकन लाइब्रेरी नई दिल्ली, सचिवालय लाइब्रेरी लखनऊ, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय लाइब्रेरी झाँसी, बुन्देलखण्ड महाविद्यालय लाइब्रेरी झाँसी, कलेक्ट्रेट अभिलेखागार, झाँसी के अधिकारियों एवं कर्मचारियों का हृदय से आभारी हूँ जिन्होने मुझे इस शोध कार्य से सम्बन्धित अध्ययन सामग्री एकत्र करने में सहायता प्रदान की । इसके अतिरिक्त विभिन्न चर्चो के पादरियों एवं धर्माध्यक्षों से प्राप्त ज्ञान के आधार पर इस विषय में शोध करना सम्भव हो सका, मैं उनके प्रति भी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, विशेष रूप से फादर पी0 एस0 राम, नई दिल्ली एवं फादर मिशन चर्च, झाँसी तथा ज्ञानी स0 मोहिन्दर सिंह, गुरूद्वारा सीपरी बाजार झाँसी से मुझे समय समय पर इस विषय पर वार्ता करने एवं उनके मार्ग दर्शन से लाभान्वित होने का सुअवसर प्राप्त हुआ । मैं इन सभी का हृदय से आभारी हूँ ।

(अजीत सिंह आनन्द)

विषय - सूची

अध्याय : प्रथम

बुन्देलखण्ड की भौगोलिक स्थिति एवं संक्षिप्त ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

बुन्देलखण्ड भारत के केन्द्र में स्थित है । इसकी भौगोलिक सीमाओं का निर्धारण प्रायः इस प्रकार किया जाता है कि वह क्षेत्र जिसके उत्तर में यमुना नदी, उत्तर-पश्चिम में चम्बल नदी, दक्षिण में जबलपुर तथा सागर, दक्षिण-पूर्व में बघेलखण्ड तथा विन्धयाचल की पहाड़ियां स्थित हैं, उसे हम बुन्देलखण्ड के नाम से पुकारते हैं । अपनी भौगोलिक स्थिति तथा पठारी स्वरूप के कारण यह क्षेत्र सामरिक रूप से हमेशा महत्वपूर्ण बना रहा है । यमुना, चम्बल, बेतवा, धसान और केन इस क्षेत्र की महत्वपूर्ण नदियां हैं । ब्रिटिश जिले हमीरपुर, जालौन, झांसी, ललितपुर और बांदा के अतिरिक्त ओरछा, समथर एवं सनद प्राप्त की हुई रियासतें जैसे अजयगढ़, अलीपुर, धुरवई, टोडी फतेहपुर, बिजना, बंका-पहाड़ी, बावनी, बरौन्ध, बेरी, बीहट, बीजावर, चरखारी, कालिंजर की चौबे जागीर, कामता रजौला, नैगांव-रिबाई, पालदेव, पहरा, तराउन, छतरपुर, गरौली, गौरिहार, जासो, जिगनी, खनियाधाना, लुगासी, पन्ना और सरिला बुन्देलखण्ड में शामिल थे ।[1]

1· एटकिन्सन ई·टी·-स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टोरिकल एकाउन्ट ऑफ दि नॉर्थ वैस्ट प्रोविन्स ऑफ इण्डिया भाग-1 {बुन्देलखण्ड} इलाहाबाद 1874 - पृष्ठ-1·

बुन्देलखण्ड 23° 52′ से 26° 26′ उत्तरी अक्षांश तथा 77° 53′ से 81° 39′ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है ।[1] ऐसा कहा जाता है कि इसका प्राचीन नाम "दर्शाण" था । "दर्शाण" नाम दस नदियों के कारण पड़ा, जो इस प्रकार हैं :- धसान, पार्वती, सिन्ध, बेतवा, चम्बल, यमुना, नर्मदा, केन, टोंस और जामनेर ।[2]

बुन्देलखण्ड के मैदानी भाग में बहुत सी पर्वत श्रेणियां हैं । फ्रैंकलिन ने इस पर्वत श्रृंखला को तीन भागों में विभक्त किया है - विन्धयाचल, पन्ना तथा बन्धेर ।[4] विन्ध्याचल पर्वत श्रेणी सिन्ध नदी पर स्थित सिहोन्दा से शुरू होकर दक्षिण-पश्चिम में नारवाड़ तक जाती है तथा वहां से दक्षिण-पूर्व में होती हुई उत्तर-पश्चिम में अजयगाढ़ तथा कालिंजर से होकर जबलपुर और इलाहाबाद के बीच स्थित बरदारह तक जाती है । समुद्र तट से इसकी ऊंचाई कहीं भी 2000 फीट से अधिक नहीं है । वह पठारी भाग जो इस पर्वत श्रृंखला के साथ स्थित है वह 10 से 12 मील चौड़ा है ।

---

1. इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, वाल्यूम - II - पृष्ठ 264
2. मोतीलाल त्रिपाठी - बुन्देलखण्ड दर्शन पृष्ठ- 27-28.
3. फ्रैंकलिन -मेमायर ऑफ बुन्देलखण्ड तथा इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया भाग-II-पृष्ठ-264.

इस पठार के दक्षिणी भाग में दूसरी पर्वत श्रृंखला जिसे पन्ना श्रृंखला कहा गया है, स्थित है । समुद्रतट से इसकी ऊंचाई 1050 फीट से 1200 फीट के लगभग है । इस श्रृंखला के दक्षिण पश्चिम में बन्धेर श्रृंखला है, जिसके पठार की औसत ऊंचाई समुद्रतट से लगभग 1700 फीट है जो कहीं कहीं 2000 फीट ऊंचा भी है । क्षेत्र में कहीं-कहीं अलग-अलग पहाड़ियां भी हैं जिनके कारण क्षेत्र को मुगल सम्राटों के आक्रमण से समय-समय पर अभूतपूर्व सुरक्षा प्राप्त हुई है । इन पहाड़ियों से निकलकर अनेक छोटी-छोटी नदियां यमुना में मिलती हैं, जिनमें से सिन्ध तथा उसकी सहायक नदियां पाहुज, बेतवा, धसान, बिरमा, केन, बंगई, पैसुनी तथा टोंस प्रमुख हैं । यह सभी नदियां आम तौर पर उत्तर-पूर्व दिशा में बहती हैं । इनमें से केवल केन नदी खेने योग्य है ।[1] इस प्रकार क्षेत्र में बहुत सी नदियां हैं किन्तु क्षेत्र पहाड़ी होने के कारण सिंचाई का सदैव से महत्वपूर्ण स्थान रहा

1· इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया - भाग - II पृष्ठ - 266·

है और इस उद्देश्य से क्षेत्र में बहुत सी छोटी-छोटी झीलें भी बनायी गई हैं ।[1]

इस क्षेत्र की जलवायु शुष्क है तथा तेज गर्मी पड़ती है । अक्तूबर से मई तक हवाएं दक्षिण-पश्चिम की ओर चलती हैं तथा शेष महीनों में गंगा की घाटी से हवाएं चलती हैं ।[2]

हमें यहां बुन्देलखण्ड के जिस क्षेत्र का अध्ययन करना है उसका अभिप्राय ब्रिटिश बुन्देलखण्ड से है जिसमें जालौन, झांसी, हमीरपुर, बांदा और इलाहाबाद जिले का वह भाग शामिल है जो यमुना और गंगा के दक्षिण में स्थित है ।[3] अतः बुन्देलखण्ड में लगभग 11600 वर्ग मील का क्षेत्र शामिल है, जो यमुना एवं चम्बल के संगम के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है ।[4]

संक्षिप्त ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

ऐसा कहा जाता है कि इस क्षेत्र का नाम बुन्देलखण्ड

---

1. इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया - भाग - II पृष्ठ-266.
2. वही -
3. इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया-भाग-IX, 1908 पृष्ठ-68.

बुन्देला ठाकुरों के नाम पर पड़ा । बुन्देला इस क्षेत्र में निवास करने वाली सबसे महत्वपूर्ण जाति थी ।[1] बुन्देला शब्द "बून्द" से लिया गया है जिसका सम्बन्ध इस जाति के संस्थापक एक गहरवाड़ से है । ऐसा माना जाता है कि विन्ध्याचल में विन्ध्यासिनी देवी के मस्तिष्क पर गिरने वाली उसके खून की बूंदों से उसके पुत्र का जन्म हुआ था ।[2] एक अन्य कथा के अनुसार बुन्देलखण्ड नाम "विन्धया" अथवा बांदी अर्थात् दासी §एक गुलाम लड़की§ से निकला है ।[3]

बुन्देला इस क्षेत्र में निवास करने वाली एक महत्वपूर्ण जाति थी । इस जाति का उदय किस प्रकार हुआ , इसके बारे में ठीक-ठीक जानकारी प्राप्त नहीं होती । किन्तु प्रचलित लोक कथाओं के आधार पर कहा जाता है कि "बुन्देला" शब्द का सम्ब्न्ध राजा पंचम से है, जो काशी §बनारस§ और कान्तित के गहरवाड़ राजाओं का वंशज था ।[4] पंचम ने अपने भाइयों द्वारा राज्य से निष्कासित किये जाने पर विन्धयाचल में शरण ली और वह विन्ध्याभासिनी

1· इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया-भाग-1×, 1908 पृष्ठ - 68·

2· वही

3· वही

4· ई·टी·एटकिन्सन - स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एंड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस

भवानी का भक्त हो गया । वहां रहते हुए उसने स्वयं को देवी की बलि के रूप में प्रस्तुत करने का प्रण किया । अपने इस प्रण को पूरा करने के लिए जब उसने अपने शरीर पर घाव किया तभी अचानक भवानी प्रकट हुई और उसे ऐसा करने से रोका । उसकी भक्ति से प्रसन्न होकर देवी ने उसे आर्शीवाद दिया कि उसका राज्य उसे वापस मिल जाएगा तथा खून की वह बूंद जो उसके शरीर के घाव से निकल कर गिर पड़ी थी, उसके बदले में उसके वंशजों को बुन्देला कहा जाएगा ।[1] इस प्रकार पंचम की बलि से बुन्देला वंश का उदय हुआ ।[2]

इतिहासकार इलियट उपरोक्त कथा को बुन्देला वंश के उदय का कारण नहीं मानते । उनके अनुसार हदिकातलेकलीम ‖ Hadikat'laklim ‖ की निम्न घटना बुन्देला जाति के उदय का अधिक मौलिक कारण प्रस्तुत करती है ।[3] इसके अनुसार हरदेव, जो गहरवाड़ जाति का था, खैरागढ़ से एक बांदी को साथ लेकर आया

1· ई·टी·एटकिन्सन-स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल एकाऊंट ऑफ नार्थ वैर्स्टन प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया-भाग-I ‖बुन्देलखण्ड‖-इलाहाबाद 1874 पृष्ठ 19·

2· इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया-भाग 1× पृष्ठ-68·

3· ई·टी·एटकिन्सन - स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल एकाऊंट ऑफ नार्थ वैर्स्टन प्रोविन्सस

तथा ओरछा के समीप रहने लगा । वहां उसे करार के खंगार राजा से अपनी पुत्री के विवाह का निमंत्रण मिला। शुरू में उसने ऐसा करने से मना कर दिया किन्तु बाद में इस शर्त पर विवाह की स्वीकृति दे दी कि राजा अपने सगे सम्बन्धियों के साथ उसके यहां आकर उसके साथ भोजन करे ताकि जाति के भेदभाव को पूरी तरह से समाप्त किया जा सके ।[1] खंगार राजा ने इसकी स्वीकृति दे दी । भोज में उसे तथा उसके परिवार-जनों को ज़हर देकर उनकी हत्या कर दी गई । इस प्रकार गहरवाड़ों ने बेतवा और धसान नदियों के बीच स्थित उस क्षेत्र पर अधिकार कर लिया जो अभी तक खंगार जाति के अधीन था । "बुन्देला" या "बन्देला" नाम इसलिए पड़ा क्योंकि इस विवाह के फलस्वरूप जो पुत्र पैदा हुआ वह एक बांदी अर्थात् दासी का पुत्र था ।[2]

इस कथा के आधार पर एक बात स्पष्ट रूप से मानी जाती है कि बुन्देलखण्ड में कुछ लोग दक्षिण से आये जिन्होंने धीरे-धीरे पुराने हिन्दू राजाओं को वहां से हटा दिया जो आन्तरिक झगड़ों और मुसलमानों के आक्रमणों

1· ई·टी·एटकिन्सन - स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एंड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I {बुन्देलखण्ड} इलाहाबाद- 1874 पृष्ठ-20·

तथा ओरछा के समीप रहने लगा । वहां उसे करार के खंगार राजा से अपनी पुत्री के विवाह का निमंत्रण मिला। शुरू में उसने ऐसा करने से मना कर दिया किन्तु बाद में इस शर्त पर विवाह की स्वीकृति दे दी कि राजा अपने सगे सम्बन्धियों के साथ उसके यहां आकर उसके साथ भोजन करे ताकि जाति के भेदभाव को पूरी तरह से समाप्त किया जा सके ।[1] खंगार राजा ने इसकी स्वीकृति दे दी । भोज में उसे तथा उसके परिवार-जनों को ज़हर देकर उनकी हत्या कर दी गई । इस प्रकार गहरवाड़ों ने बेतवा और धसान नदियों के बीच स्थित उस क्षेत्र पर अधिकार कर लिया जो अभी तक खंगार जाति के अधीन था । "बुन्देला" या "बन्देला" नाम इसलिए पड़ा क्योंकि इस विवाह के फलस्वरूप जो पुत्र पैदा हुआ वह एक बांदी अर्थात् दासी का पुत्र था ।[2]

इस कथा के आधार पर एक बात स्पष्ट रूप से मानी जाती है कि बुन्देलखण्ड में कुछ लोग दक्षिण से आये जिन्होंने धीरे-धीरे पुराने हिन्दू राजाओं को वहां से हटा दिया जो आन्तरिक झगड़ों और मुसलमानों के आक्रमणों

1· ई·टी·एटकिन्सन - स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एंड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I ﴾बुन्देलखण्ड﴿ इलाहाबाद-1874 पृष्ठ-20·

2· वही

के कारण बहुत कमजोर हो चुके थे ।[1] बुन्देलखण्ड में इस जाति का प्रभुत्व लगभग 13वीं शताब्दी में स्थापित हुआ। इतिहासकार फ्रैंकलिन बुन्देला जाति की उत्पत्ति पंचम के पुत्र बीर सिंह से मानते हैं । इसमत के अनुसार तैमूर के आक्रमण के समय इस क्षेत्र में बुन्देला जाति का उदय हुआ ।[2]

इस प्रकार इस क्षेत्र का इतिहास सदियों पुराना है । किन्तु यहां हमारा लक्ष्य बुन्देलखण्ड के इतिहास का विस्तृत विवेचन करना नहीं है बल्कि इस क्षेत्र की उस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर एक दृष्टि डालना है जिसके कारण यहां अंग्रेजी सत्ता का विकास हुआ और धीरे-धीरे विभिन्न मिशनरियों का आगमन हुआ ।

17वीं शताब्दी के आखिरी वर्षों में बुन्देला राजा छत्रसाल इस क्षेत्र में प्रसिद्ध हुआ । अपने पिता की मृत्यु के समय उसकी आयु 14 वर्ष थी । उसने अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिये तथा अपने परिवार

---

1. ई·टी·एटकिन्सन - स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-1 (बुन्देलखण्ड)-इलाहाबाद-1874 पृष्ठ-20·

की खोई हुई शक्ति पुनः प्राप्त करने के लिये किसी प्रभुत्वशाली शासक एवं नेता की सेवा करने का निश्चय किया । उसने औरंगजेब के विरूद्ध मालवा और बुन्देलखण्ड के राजाओं को संगठित करने का प्रयास किया ।[1] उसे अपने प्रयासों में काफी सफलता भी प्राप्त हुई । उसने ओरछा के सरदार को वहां बने मन्दिरों को नष्ट होने से बचाने के लिए प्रेरित किया और इस प्रकार उस लड़ाई का प्रारम्भ हुआ जो तब तक चलती रही जब तक कि बुन्देला पूरी तरह स्वतंत्र नहीं हो गए ।[2] उसके इन प्रयासों में उसके भाई रतन सिंह द्वारा सहयोग नहीं दिया गया क्योंकि रतन सिंह के विचार में छत्रसाल द्वारा किये गये प्रयासों में सफलता की बहुत कम आशा थी । 1671 ई॰ में बुन्देला जाति का प्रमुख चुने जाने पर छत्रसाल पन्ना की तरफ बढ़ा। उसने हर दिशा में शत्रुओं को नष्ट किया तथा अंग्रेजी सेना को क्षेत्र में आने से रोका । इस प्रकार उसने न केवल मुगलों के विरूद्ध सफलता प्राप्त की बल्कि क्षेत्र के उन हिन्दू सरदारों पर भी विजय प्राप्त की जिन्होंने

---

1. ई॰टी॰एटकिन्सन-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाउंट ऑफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद-1874 पृष्ठ-20॰
2. वही पृष्ठ-25॰

उसकी अधीनता मानने से इन्कार कर दिया था या जिन्होंने उसकी योजनाओं के कार्यान्वयन में उसका साथ नहीं दिया था ।[1] इनमें धरेर का सरदार तथा बंका का आनन्द राय शामिल थे । बंका के आनन्द राय को यद्यपि आस-पास के मुसलमान गवर्नरों द्वारा पूरी सहायता प्राप्त थी तथापि गढ़कोटा में बुरी तरह पराजित होना पड़ा ।[2] इस युद्ध के बाद छत्रसाल ने बन्सा और बड़ी पिटारी को लूटा और बाकीखान के क्षेत्र में जा घुसा । यहां उसने सैय्यद बहादुर को हराया और सिन्ध, ग्वालियर, कन्जिया, दयापुर तथा दमोह शहरों को नष्ट किया । इस प्रकार उसने पश्चिमी बुन्देलखण्ड पर पूरी तरह से अधिकार कर लिया। गढ़कोटा को अपने अगले युद्ध का केन्द्र बनाकर वहां से उसने रामदुल्ला के नेतृत्व में लड़ने वाले आस-पास के मुसलमान शासकों को पराजित किया । इसके बाद उसने दक्षिण की ओर ध्यान दिया और सम्राट के लिये भेंट ले जाने वाली एक सौ गाड़ियों के काफिले को लूट लिया। इस पर बुन्देला जाति के प्रभुत्व को खत्म करने के लिये

---

1. ई॰टी॰ एटकिन्सन-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एंड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I {बुन्देलखण्ड} इलाहाबाद- पृष्ठ-25॰
2. वही

तहावुरखान के नेतृत्व में तुर्कों की एक बड़ी सेना इस क्षेत्र में भेजी गई । वह सिरावा में बुरी तरह पराजित हुआ और इतना अपमानित होकर लौटा कि उसे दुबारा सेना का नेतृत्व करने का अवसर बड़ी मुश्किल से प्रदान किया गया । उसने बुन्देलखण्ड पर पुनः आक्रमण किया किन्तु उसे अधिक सफलता नहीं मिली ।[1]

इसी बीच बुन्देला सेनाओं ने वर्तमान बांदा, हमीरपुर, झांसी जिलों को नष्ट करते हुए कालिंजर के किले पर अपना अधिकार कर लिया था । छत्रसाल की बढ़ती हुई शक्ति को देखकर अनवर खान, मिर्जा सदरउद्दीन तथा हामिद खान को एक-एक करके छत्रसाल के विरूद्ध बड़ी सेना के साथ भेजा गया किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली । अब तक बुन्देलों ने जालौन के दक्षिण परगनों पर आक्रमण कर दिया था , एरेच को जला दिया था, कुचुर, कुमुर तथा कालपी को लूट लिया था और उरई तथा भड़ेक को नष्ट कर डाला था । इसके बाद छत्रसाल ने भरहत पर आक्रमण

1· ई·टी·एटकिन्सन-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाउंट ऑफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया - भाग -I {बुन्देलखण्ड} इलाहाबाद-1874 पृष्ठ-25

कर दिया, क्योंकि यहां के निवासियों ने पूर्व अवसर पर उसकी अधीनता मानने की जो शपथ ली थी उसे तोड़ने की कोशिश की । कोटरा, सैय्यद लतीफ के अधीन था, जिसने दो महीने तक बुन्देलों की घेरा बन्दी का सामना किया । अन्ततः एक लाख रुपया लेकर घेरा उठा लिया गया ।[1] इसके पश्चात् छत्रसाल कालपी और मौधा से कर वसूल करने के लिये आगे बढ़ा । उसने महोबा के जमींदारों से भी संघर्ष किया जिन्होंने लगभग बीस गांवों के निवासियों को उसकी सत्ता को चुनौती देने के लिये प्रेरित किया था । यह संघर्ष धरेर के निकट हुआ । परिणामस्वरूप बहुत से गांव वालों की मृत्यु हो गई तथा मसकारा को लूट लिया गया । इस संघर्ष के बाद वह जलालपुर आ पहुंचा । जब इन लड़ाइयों की खबर मुगल दरबार में पहुंची तो बुन्देलखण्ड पर अधिकार करने के लिये अब्दुल समद को भेजा गया । उसने छत्रसाल से युद्ध किया जिसने औरंगाबाद के बालदेव को दायीं, धौवा के रायमान को बायीं ओर की तथा स्वयं मध्य सेना का नेतृत्व किया । इस घमासान युद्ध में छत्रसाल

1· ई·टी·एटकिन्सन - स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया - भाग I ﴾बुन्देलखण्ड﴿ इलाहाबाद-1874 पृष्ठ-26·

की विजय हुई ।[1] इस युद्ध में छत्रसाल घायल हो गया था । अतः उसने पन्ना में कुछ समय तक विश्राम किया, किन्तु जैसे ही उसके घाव ठीक हो गये उसने हरी लाल गज सिंह के क्षेत्र पर आक्रमण करके उससे धन वसूल किया तथा भेलसा के आस-पास के गांव तथा शहरों को जला दिया ।[2] क्षेत्र में इस तहस-नहस की खबर सुनकर बहलोल खान द्वारा बुन्देला शक्ति को रोकने की कोशिश की गई किन्तु उसे सफलता न मिली । अपनी पराजय से निराश होकर उसने आत्महत्या कर ली ।[3]

बहलोल खान की मृत्यु के पश्चात् छत्रसाल ने साहौदा के मुराद खान के विरूद्ध संघर्ष किया जिसने उसकी अधीनता स्वीकार करने से इन्कार कर दिया था । इस संघर्ष में मुराद खान तथा उसके बहुत से सहयोगी मारे गये तथा दलिल खान ने भविष्य में उसे रकम देना स्वीकार कर लिया । इसके पश्चात् मातुन्द

---

1. ई·टी·एटकिन्सन-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट आँफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस आँफ इण्डिया -भाग-I {बुन्देलखण्ड} इलाहाबाद- 1874 पृष्ठ-26·
2. वही पृष्ठ - 27·
3. वही

के किले पर बुन्देलों ने आक्रमण किया और उस पर अपना अधिकार कर लिया ।[1]

बहादुरशाह ﴾1707 - 1712 ई॰﴿ के शासनकाल में छत्रसाल को मुगल दरबार में सम्मानित किया गया और उसके द्वारा विजित स्थानों पर उसके प्रभुत्व को मान्यता दे दी गई ।[2] 1713 ई॰ में फर्रुखशियर दिल्ली की गद्दी पर बैठा । उसने इस क्षेत्र के कुछ परगने एरेच, भान्डेर, कालपी, कोंच, सिहोंदा, मोदाहा, जालौन और सीपरी मोहम्मद खां बंगेश, जो फर्रूखाबाद के नवाब के नाम से प्रसिद्ध था, को सम्राट की सहायता के फलस्वरूप दे दिये ।[3] 1721 ई॰ में मोहम्मद खाँ बंगेश को इलाहाबाद का गवर्नर नियुक्त किया गया । किन्तु सूबेदार या जागीरदार की हैसियत से उस क्षेत्र पर उसका अधिकार नहीं था ।[4] अक्तूबर, 1728 ई॰ में जैतपुर पर अधिकार करने के साथ ही बुन्देलखण्ड क्षेत्र में नवाब का पूर्ण प्रभुत्व स्थापित हो चला था लेकिन मार्च, 1729 ई॰ में इस क्षेत्र में मराठों के उदय ने नवाब की विजय को हार में परिवर्तित कर दिया ।[5] इस प्रकार छत्रसाल और बाजीराव की

---

1. ई॰टी॰एटकिन्सन-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया-भाग I ﴾बुन्देलखण्ड﴿ इलाहाबाद-1874 पृष्ठ-27॰
2. ड्रेक ब्रोकमैन डी॰एल॰-बांदा गजेटियर पृष्ठ-142॰
3. वही
4. उ॰प्र॰जिला गजेटियर, हमीरपुर, 1988 पृष्ठ-43॰
5. वही

सेनाओं ने मिलकर मोहम्मद खां बंगेश को हरा दिया ।[1]

छत्रसाल ने मराठों की सहायता से अपने खोये हुये क्षेत्र पर अधिकार कर लिया । उसे यह आभास हो चुका था कि मराठों की सहायता के बिना उसके राज्य की सुरक्षा सम्भव नहीं थी । अतः उसने अपने राज्य का कुछ भाग मराठों को देने का फैसला किया । अपनी मृत्यु के कुछ समय पूर्व उसने एक वसीयत की जिसके अनुसार पेशवा बाजीराव को अपने राज्य का एक तिहाई भाग इस शर्त पर देना स्वीकार कर लिया कि मराठों द्वारा शेष भाग पर उसके उत्तराधिकारियों का अधिकार बना रहने दिया जायेगा । वे क्षेत्र जो पेशवा को दिये गये उनमें कालपी, हट्टा, सागर, झांसी, सिरोंज, गुना, गढ़कोटा और हरदीनगर शामिल थे जिससे 31 लाख रूपया वसूल होता था ।[2] छत्रसाल के राज्य के शेष भाग को दो हिस्सों में बांटा गया - पन्ना राज्य, जिसमें कालिंजर, मोहान, ग्रेच तथा कुछ दूसरे क्षेत्र थे, जो उसके बड़े पुत्र हरदीशाह को मिले और जैतपुर राज्य

1· सरदेसाई जी·एस·–न्यू हिस्ट्री ऑफ मराठा भाग-II (बम्बई 1948) पृष्ठ 105-107·

2· वही पृष्ठ 105-106·

जिसमें हमीरपुर, बांदा, अजयगढ़, चरखारी, जैतपुर और कुछ दूसरे क्षेत्र थे जो उसके दूसरे पुत्र जगतराज को मिले ।[1] पन्ना राज्य से लगभग 38 लाख रुपये कर वसूली होती थी और जैतपुर राज्य से लगभग 31 लाख रुपये कर वसूल होता था ।[2] लेकिन ये राज्य आपसी झगड़ों के कारण इतने कमजोर हो चुके थे कि कोई भी आसानी से इन पर अधिकार कर सकता था ।[3] 1747 ई॰ में पेशवा ने बुन्देलखण्ड के राजाओं के साथ एक नई सन्धि की जिससे उसके क्षेत्र में इतनी वृद्धि हो गई कि कर वसूली लगभग 16 $\frac{1}{2}$ लाख रुपये बढ़ गई तथा पन्ना की हीरे की खानों में भी उसका बराबर भाग रखा गया ।[4]

बालाजी बाजीराव पेशवा के बाद माधोराव 1761 ई॰ में गद्दी पर बैठा लेकिन 1772 ई॰ में उसकी मृत्यु हो गई । उसके बाद उसका भाई नारायणराव गद्दी पर बैठा किन्तु रघुनाथ द्वारा उसकी हत्या कर दी गई । राज्य के दरबारियों द्वारा नारायणराव के बालक पुत्र को

1· सरदेसाई जी·एस·-न्यू हिस्ट्री ऑफ दि मराठा (बम्बई 1948) भाग-II पृष्ठ 105-106 तथा एटकिन्सन ई·टी·- स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद 1874 पृष्ठ-28·

2· एटकिन्सन ई·टी·-पृष्ठ 28

3· वही : पृष्ठ -30·

4· वही

गद्दी पर बैठाया गया तथा बालाजी पंडित जो नाना फड़नवीस के नाम से प्रसिद्ध हुए, को उसका संरक्षक नियुक्त किया गया ।[1] 6 मार्च, 1775 ई॰ को रघुनाथ तथा बम्बई सरकार के बीच हुए समझौते के अनुसार सरकार ने रघुनाथ की सहायता करने का निश्चय किया तथा कर्नल कीटिंग को इस समझौते को पूरा करने के लिये भेजा गया । इसी बीच कलकत्ता के सुप्रीम कोर्ट द्वारा इस समझौते की वैधता को मानने से इन्कार कर दिया गया तथा बंगाल से सीधे कर्नल अपटॉन को 1 मार्च, 1776 को पुरन्दा की सन्धि की शर्तों को पूरा करने के लिये भेजा गया । इसी बीच एक युद्ध हुआ तथा कर्नल गोदाई को ब्रिटिश सरकार के पक्ष में समझौते के लिये भेजा गया । उसे हिम्मत बहादुर से भी युद्ध करना पड़ा । सालबाई की सन्धि के अनुसार अंग्रेजों ने रघुनाथ का पक्ष छोड़ने का फैसला कर लिया ।[2] हिम्मत बहादुर ने अपनी सहायता के लिये अली बहादुर (1790 - 1802 ई॰) को बुलाया जिसकी मदद से वह बुन्देलखण्ड पर आक्रमण

1· एटकिन्सन ई॰टी॰--स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया - भाग I बुन्देलखण्ड (इलाहाबाद, 1874) पृष्ठ 30

2· वही पृष्ठ 30-31

करना चाहता था । 28 अगस्त, 1802 को जब अली बहादुर ने कालिंजर पर घेरा डाला हुआ था उस समय उसकी मृत्यु हो गई ।[1]

बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी सत्ता का प्रारम्भ

1801 ईस्वी में सिन्धिया तथा होल्कर के बीच युद्ध हुआ । सिन्धिया तथा पेशवा की संयुक्त सेनाओं को पूना में 25 अक्तूबर, 1802 ई॰ को पराजित होना पड़ा । 31 दिसम्बर, 1802 ई॰ को बेसिन की सन्धि पर हस्ताक्षर किये गये जिसके अनुसार पेशवा ने 26 लाख रुपये की जागीर के मूल्य पर एक ब्रिटिश सेना रखना स्वीकार किया । बाद में इस भूमि को बुन्देलखण्ड में स्थित पेशवा के राज्य की भूमि से बदलने का निश्चय किया गया तथा सेना पर होने वाले खर्च की धनराशि को बढ़ाकर 36 लाख रुपये से अधिक कर दिया गया ।[2] इन शर्तों को 16 दिसम्बर, 1803 ई॰ को हुई नई सन्धि में शामिल किया गया । पूना के युद्ध में पेशवा की हार के पश्चात् अली बहादुर के पुत्र शमशेर बहादुर ने अपने पिता द्वारा विजित क्षेत्रों पर अधिकार घोषित किया ।[3]

1· इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया (सेन्ट्रल इण्डिया) पृष्ठ-367

2· एटकिन्सन ई·टी·-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद-1874 पृष्ठ-35·

3· वही

1803 ई॰ में बेसिन संधि से बुन्देलखण्ड का वह क्षेत्र, जो मराठों के अधीन था, उस पर अंग्रेजों का अधिपत्य हो गया ।[1] 1804 ई॰ के अन्त में बुन्देलखण्ड में अंग्रेजों का शासन प्रभावशाली बनाने के लिये एक कमीशन की नियुक्ति की गई जिसमें मि॰ ब्रुक को अध्यक्ष नियुक्त किया गया । कैप्टन बेली जो गवर्नर जनरल का एजेन्ट था, एवं सेनाओं के आफिसर कमान्डिंग को इस कमीशन में सदस्य नियुक्त किया गया ।[2] ब्रूडी को जज तथा मैजिस्ट्रेट एवं जे॰डी॰ इरस्किन को कलैक्टर के पद पर नियुक्त किया गया ।[3]

कैप्टन बेली नवम्बर, 1804 ई॰ में एक सहायक मीर जाफर के साथ ब्रिटिश सेना के मुख्यालय पहुंचा । उसका शासन मौलिक रूप में सैनिक तथा राजस्व वसूल करने वाला था । लेकिन उसके कार्यों पर राजा हिम्मत बहादुर का प्रभाव पड़ा क्योंकि राजा हिम्मत बहादुर से प्राप्त जानकारी के आधार पर ही कैप्टन बेली ने अपना राजस्व प्रबन्ध शुरू किया था ।[4]

---

1. एचीन्सन सी॰यू॰-ट्रीटीस, इंगेजमेन्टस एण्ड सनद पृष्ठ 187॰
2. एटकिन्सन ई॰टी॰-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाउंट ऑफ दि नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद - 1874 पृष्ठ 38॰
3. वही
4. वही

कैप्टन बेली द्वारा 1805 ई॰ में प्रस्तुत रिपोर्ट में दी गई जानकारी के अनुसार बांदा 18 सितम्बर, 1803 ई॰ को, अगासी 13 सितम्बर, 1803 ई॰ को, कोरी तथा पारसेला क्षेत्र 6 फरवरी, 1804 ई॰ को ब्रिटिश राज्य में मिला लिये गये ।[1] ये क्षेत्र केन नदी के पूर्वी तट पर स्थित थे । केन नदी के पश्चिमी तट पर स्थित क्षेत्रों की सूची में जिन जिलों के नाम दिये गये हैं उसमें कालपी 8 दिसम्बर, 1803 ई॰ को, कोटरा तथा सैय्यद नगर 16 दिसम्बर, 1803 ई॰ को, कुन्छ 28 दिसम्बर, 1803 ई॰ को, राठ क्षेत्र 26 नवम्बर, 1803 ई॰ को, जलालपुर 29 जनवरी, 1804 ई॰ को, खरका 16 जनवरी, 1804 ई॰ को, पनवाड़ी 7 फरवरी, 1804 ई॰ को तथा सूपा क्षेत्र 18 मार्च, 1804 ई॰ को ब्रिटिश राज्य में मिला लिये गये ।[2]

बुन्देलखण्ड एजेन्सी का गठन

बुन्देलखण्ड में स्थानीय राज्यों तथा रियासतों को मिलाकर बुन्देलखण्ड एजेन्सी का गठन किया गया । यहां

---

1. एटकिन्सन ई॰टी॰-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नॉर्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद-1874 पृष्ठ 39॰
2. वही

सबसे पहले 1802 ई. में हुई बेसिन की सन्धि से अंग्रेजी प्रभुसत्ता का प्रारम्भ हुआ जब कैप्टन जान बेली को यहां के शासन प्रबन्ध के लिये पालिटिकल अधिकारी नियुक्त किया गया ।[1] 1811 में शान्ति व्यवस्था स्थापित हो जाने के बाद गवर्नर जनरल के एजेन्ट की नियुक्ति बुन्देलखण्ड में की गई जिसका मुख्यालय बांदा में स्थित था । 1818 ई. में यह मुख्यालय बांदा से हटाकर कालपी कर दिया गया । 1824 ई. में हमीरपुर तथा पुनः 1832 ई. में बांदा को गवर्नर जनरल के एजेन्ट का मुख्यालय बना दिया गया ।[2] 1835 ई. में इस क्षेत्र का शासन उत्तर पश्चिमी प्रान्त के लेफ्टिनेन्ट गवर्नर को सौंपा गया जिसका मुख्य केन्द्र आगरा में था । 1849 ई. में बुन्देलखण्ड का प्रशासन सागर तथा नर्बदा के कमिश्नर को हस्तान्तरित कर दिया गया तथा उसके सहायक के रूप में झांसी में एक अधिकारी की नियुक्ति की गई । तत्पश्चात् यह स्थान बदलकर झांसी से नौगांव कर दिया गया ।[3] 1854 ई. में मध्य भारत एजेन्सी का गठन हुआ और इस क्षेत्र का प्रशासन मध्य भारत के गवर्नर जनरल के एजेन्ट को सौंप दिया गया। 1862 ई. से 1871 ई. तक बघेलखण्ड एवं बुन्देलखण्ड

---

1. इन्ट्रोडक्शन नोट टू बुन्देलखण्ड एजेन्सी रिकार्डस- भाग I 1865-1915.
2. वही
3. वही

एजेन्सियों का कार्य संयुक्त रूप से किया जाता रहा । 1865 ई॰ में पॉलिटिकल सहायक को बदलकर पॉलिटिकल एजेन्ट की नियुक्ति की गई । 1896 ई॰ में बरोन्दा, जासो तथा पांच चौबे जागीरें क्रमश पालदेव, बहरा, तराउन इत्यादि बुन्देलखण्ड से बघेलखण्ड में हस्तान्तरित कर दी गईं। वित्तीय बचत के उद्देश्य से 1 दिसम्बर, 1931 ई॰ को बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड दोनों एजेन्सियों को मिला दिया गया तथा इस संयुक्त एजेन्सी के अधिकारी को बुन्देलखण्ड में पॉलिटिकल एजेन्ट का नाम दिया गया तथा नौगांव को इसका मुख्यालय बना दिया गया ।[1]

बुन्देलखण्ड तथा बघेलखण्ड को मिलाने से 1931 ई॰ में इस क्षेत्र में 33 रियासतें तथा जागीरें शामिल थीं: इनमें अजयगढ़, अलीपुरा, बंका पहाड़ी, बाउनी, बरोन्दा, बेरी, भैसुन्दा, बीहट, बीजावर, बिजना, चरखारी, छत्तरपुर, दत्तिया, धुरवाई, गरौली, गौरीहार, जासो, जिगनी, कामताररज्जौला, कोठी, लुगासी, मेहर, नागौड़, नैगांव रिबाई, ओरछा (टीकमगढ़), पहरा (चोबपुर), पालदेव (नयागांव), पन्ना, समथर , सरीला, सोहावल तराउन तथा टोरी फतेहपुर शामिल थे ।[2] सन्धि की हुई रियासतों

---

1. इन्ट्रोडक्टरी नोट टू बुन्देलखण्ड एजेन्सी रिकार्डस, भाग-I 1865-1915.

2. वही

के मुखिया को पूर्ण अधिकार प्राप्त थे । जिन राज्यों से ब्रिटिश सरकार द्वारा सन्धि की गई थी, वे थे - रीवा, ओरछा, दतिया तथा समथर । उनके यह सम्बन्ध मित्रता तथा मराठों से इन रियासतों की रक्षा के वायदे पर आधारित थे, जबकि सनद प्राप्त की हुई रियासतों के साथ यह सम्बन्ध मिश्रित प्रकार के थे ।[1] इनमें से बहुत से सरदारों को पेशवा द्वारा बेसिन की सन्धि के अनुसार दी गई भूमि में से कुछ भाग प्राप्त था । इन्हें अलीबहादुर के समय में प्राप्त अधिकार कुछ शर्तों पर ब्रिटिश सरकार द्वारा दे दिये गये थे ।[2]

सनद प्राप्त की हुई रियासतें तीन प्रकार की थीं:- ﴾।﴿ वे जिनमें उत्तराधिकार के आधार पर ब्रिटिश सरकार द्वारा सनद जारी की गई थी, ﴾।।﴿ वे जिनमें उन सरदारों के नाम सनद जारी की गई थी जिन्होंने मराठा आक्रमणों से पहले तथा बाद में अपनी सत्ता स्थापित कर ली थी तथा ﴾।।।﴿ वे जिनकी स्थापना ब्रिटिश सरकार द्वारा क्षेत्र में शान्ति स्थापित करने के उद्देश्य से की

---

1. एटकिन्सन ई.टी.-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नॉर्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया- भाग I ﴾बुन्देलखण्ड﴿ इलाहाबाद- 1874 पृष्ठ-46.

2. वही

गई थी ।[1] प्रारम्भ में सरकार ने इन रियासतों की सुरक्षा की जिम्मेदारी इनके मुखिया सरदारों पर ही छोड़ देने की नीति अपनाई और उनसे कर न लेने का निश्चय किया । किन्तु शीघ्र ही यह अनुभव किया गया कि इन रियासतों को स्वतंत्र न छोड़कर उन्हें ब्रिटिश सरकार पर निर्भर रखा जाये ।[2]

सनद प्राप्त की हुई ये रियासतें ब्रिटिश सरकार की प्रभुसत्ता स्वीकार करने के लिये वचनबद्ध थीं । एटकिन्सन के अनुसारइनकी संख्या 32 थी जिसमें से आठ पर छत्रसाल के उत्तराधिकारियों का शासन था ।[3]

1849 ई· में जैतुपर राज्य को ब्रिटिश शासन में मिला लिया गया जिसे 1853 ई· में हमीरपुर जिले में मिला लिया गया ।[4] 1858 ई· में पारस राम की खाड़ी की जागीर को बांदा जिले में ब्रिटिश शासन में मिला लिया गया और 1858 ई· तराउन जागीर को विद्रोह करने के कारण बांदा में मिला लिया गया ।[5] इसी प्रकार धीरे-धीरे

1· एटकिन्सन ई·टी· - स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद - 1874 पृष्ठ-46·

2· वही

3· वही - पृष्ठ 48·

4· वही-पृष्ठ-51 तथा एचिन्सन-ट्रीटी, इंगेजमेन्टस एण्ड सनद पृष्ठ 142·

अन्य क्षेत्र भी ब्रिटिश शासन में मिला लिये गये ।

बुन्देलखण्ड में 1857 ई॰ का विद्रोह

बेसिन की सन्धि के बाद बुन्देलखण्ड क्षेत्र में अंग्रेजी राज्य की स्थापना हुई जो 1857 ई॰ तक लगभग पूरे क्षेत्र मे अपना नियंत्रण स्थापित कर चुका था । 1857 ई॰ में हुए विद्रोह में इस क्षेत्र के लोगों ने सक्रिय भूमिका निभाई। देश में हुए विद्रोह के अनेक कारण थे जिनमें सैनिक असन्तोष एक महत्वपूर्ण कारण माना जाता है । लार्ड डलहौजी की अपहरण नीति का प्रभाव झांसी पर भी पड़ा । फलस्वरूप लोगों में अधिक असन्तोष फैल गया । झांसी की रानी लक्ष्मीबाई द्वारा 1857 ई॰ के इस विद्रोह में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई गई । इसके अनेक कारण थे । झांसी के राजा गंगाधर राव ने अपने उत्तराधिकारी के रूप में अपनी मृत्यु के एक दिन पूर्व पांच वर्ष के बच्चे को गोद लिया था, जिसका नाम दामोदर राव था । लेकिन सरकार ने इस गोदनामे को मान्यता प्रदान नहीं की ।[1] गंगाधर राव ने अपनी पत्नी महारानी लक्ष्मीबाई को बच्चे के व्यस्क होने तक रियासत की रीजेन्ट

1· मिश्रा, ए·एस· - नाना साहब पेशवा, लखनऊ 1961 पृष्ठ 334-335·

नियुक्त किया ।[1] किन्तु सरकार की हड़प-नीति के कारण इसे मान्यता नहीं दी गई । गंगाधर राव ने ब्रिटिश सरकार को पत्र लिखकर अपने परिवार द्वारा अंग्रेजों की की गई सेवा का उल्लेख किया किन्तु इसका भी कोई प्रभाव नहीं हुआ । अन्ततः झांसी की रियासत को अंग्रेजी शासन का अंग बना लिया गया ।[2] इसके अतिरिक्त झांसी में इस विद्रोह के अन्य कारण भी थे । 1854 ई. तक झांसी क्षेत्र में जानवरों के वध की स्वीकृति नहीं थी, किन्तु क्षेत्र में अंग्रेजी सत्ता के नियंत्रण से सरकार द्वारा यह रोक हटा ली गई जिसका रानी द्वारा विरोध किया गया किन्तु उसे कोई सफलता नहीं मिली ।[3] इसी समय से रानी ने हर सम्भव उपाय द्वारा सरकार की लोगों की धार्मिक भावनाओं में हस्तक्षेप की नीति का विरोध करना शुरू कर दिया था । इसके अतिरिक्त झांसी में रानी के परम्परागत मन्दिर के खर्च के लिये दिये गये कर रहित गांवों को अंग्रेजों ने अपने अधिकार में ले लिया था । सार्वजनिक शौचालयों की स्थापना का भी विरोध किया गया ।[4] अनेक बुन्देला

---

1. मिश्रा, ए.एस.-नाना साहब पेशवा, लखनऊ 1961 पृष्ठ 334-335.
2. पाठक, एस.पी.-झांसी ड्यूरिंग दि ब्रिटिश रूल - पृष्ठ-16.
3. एटकिन्सन, ई.टी.-पृष्ठ 298.
4. वही

तथा मराठा जागीरदार सरकार से इसलिए नाराज थे क्योंकि उनमें से अधिकांश की जागीरें जब्त कर ली गई थीं । इनमें उदगांव, नोनर तथा जिगनी के जागीरदार थे, जो अपनी जागीरें जब्त हो जाने के कारण असन्तुष्ट थे ।[1] इन कारणों से लोगों में अंग्रेजों के प्रति असन्तोष फैल रहा था । तभी यह अफवाह फैली कि कारतूसों में गाय तथा सुअर की चर्बी प्रयोग की जा रही थी तथा बाजार में जो आटा बिक रहा है उसमें हड्डियों का चूरा मिलाया गया है । इस अफवाह पर बहुत से लोगों ने विश्वास किया तथा इसे सच समझा ।[2] बांदा में भी सरकार की साम्राज्यवादी नीति से वहां के जागीरदार तथा वहां का नवाब रूष्ट था । असन्तोष की यह लहर बुन्देलखण्ड के लगभग सभी जिलों में व्याप्त थी ।

5 जून को 12वीं देशी पैदल सेना के पैंतीस जवानों ने झांसी में विद्रोह की घोषणा की तथा स्टार फोर्ट पर अधिकार कर लिया । इस किले में रखा हुआ बारूद तथा खजाना विद्रोहियों ने अपने हाथ में ले लिया । ऐसी स्थिति में सरकार ने पड़ोसी रियासतों जैसे - ओरछा, दतिया और गुरसराय के राजाओं से मदद की मांग की

1· एटकिन्सन, ई·टी· - पृष्ठ 299·

2· वही

लेकिन इन रियासतों के राजाओं ने कोई जवाब नहीं भेजा । उसी दिन झांसी की रानी के समर्थकों की प्रेरणा से यहां की सेना ने विद्रोह करते हुए कैप्टन डनलप, लेफ्टीनेन्ट कैम्पवेल तथा टर्नबुल तथा 12वीं पैदल सेना के दो स्वामी भक्त हवलदारों को गोली से उड़ा दिया।[1] शीघ्र ही असन्तुष्ट बुन्देला जागीरदार जिसमें कटेरा के ठाकुर प्रमुख थे, इस विद्रोह में शामिल हो गये । झांसी के क्रान्तिकारियों ने उसी रात्रि को एक बैठक की जिसमें बख्सीस अली जेल दारोगा की प्रेरणा से यह प्रस्ताव पास हुआ कि झांसी में रहने वाले सभी यूरोपीय अधिकारियों का कत्ल कर दिया जाये तथा झांसी का शासन या तो रानी लक्ष्मीबाई को या सदाशिव राव नारायन परोलवाल को दे दिया जाये ।[2]

7 जून को दो यूरोपीय अधिकारी स्काट तथा परिसिल को कैप्टन स्कीन ने लक्ष्मीबाई के पास इस निवेदन के साथ भेजा कि जैसे ही यूरोपीय लोग स्टार फोर्ट से बाहर निकलते हैं वैसे ही रानी उनको संरक्षण दे दे ।

1· एटकिन्सन, ई·टी· - पृष्ठ 299

2· वही

लेकिन विद्रोहियों ने इन लोगों को भी कत्ल कर दिया। ब्रिटिश सरकार द्वारा इस कत्ल के लिये रानी लक्ष्मीबाई को दोषी ठहराया गया ।[1] जबकि इस भयानक कांड में मुख्य भूमिका बख्सीस अली तथा उसके साथियों द्वारा निभाई गई । झांसी के झोकनबाग में हुए इस कत्ल के लिये रानी दोषी नहीं थी । इसकी पुष्टि करते हुए एक अंग्रेज मार्टिन ने दामोदर राव को पत्र में लिखा - "जून 1857 ई· में झांसी में हुए यूरोपीय लोगों के कत्ल में रानी की कोई भूमिका नहीं थी बल्कि उसने उनके किले में घिर जाने के बाद उन्हें दो दिन तक भोजन उपलब्ध कराया। उसने मेजर स्कीन तथा कैप्टन जार्डन को भाग कर दतिया के राजा की शरण में चले जाने की सलाह भी दी किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया और अन्त में वे सब हमारी अपनी सेनाओं द्वारा मार डाले गये ।"[2] 9 जून को रानी की सत्ता की घोषणा कर दी गई । 11 जून को विद्रोही सैनिक दिल्ली की ओर प्रस्थान कर गये ।[3] इस प्रकार झांसी के लोगों ने 1857 ई· के विद्रोह में सक्रिय भाग लिया ।

1· मिश्रा, ए·एस· - नाना साहब पेशवा 1961 पृष्ठ -346

2· एटकिन्सन, ई·टी· - पृष्ठ - 299·

3· एटकिन्सन, ई·टी·-पृष्ठ-299·

जून, 1857 ई॰ में ललितपुर में भी स्थिति काफी बिगड़ चुकी थी । झांसी के विद्रोह की खबर पड़ोसी जिले ललितपुर में आग की चिंगारी की तरह फैली । परिणामस्वरूप इस जिले के बुन्देला ठाकुरों ने चारों ओर बड़ी संख्या में इकट्ठा होकर लूटपाट करना आरम्भ किया । चन्देरी, तालबेहट तथा ललितपुर विद्रोह की आग से अधिक प्रभावित थे । बानपुर के राजा मर्दन सिंह ने ब्रिटिश शासन को समाप्त करने के लिये इन विद्रोहियों को प्रोत्साहित करना शुरू किया । उसने ग्वालियर की छठी रेजीमेन्ट को भी विद्रोह के लिये प्रेरित किया । इसके साथ ही झांसी के विद्रोहियों से सम्पर्क स्थापित करते हुए विद्रोह को आगे बढ़ाने में मर्दन सिंह ने विशेष भूमिका निभाई । इन विद्रोहियों के डर से ललितपुर के इन्चार्ज कैप्टन जार्डन ने 11 जून को सरकारी खजाने को सैनिक शिविर में रखने का निश्चय किया । इसके बाद ललितपुर के विद्रोही शाहगढ़ की ओर चले गये जहां शाहगढ़ के राजा ने उन्हें संरक्षण प्रदान किया ।[1]

बुन्देलखण्ड के अन्य क्षेत्रों में भी 1857 ई॰

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाउंट ऑफ दि नार्थ वैस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद - 1874 पृष्ठ 354 तथा उ॰प्र॰गजेटियर जिला झांसी पृष्ठ 60

के विद्रोह की लगभग यही स्थिति रही । इलाहाबाद में विद्रोह की खबर सुनकर हमीरपुर के मजिस्ट्रेट लायड ने अपने वफादार चरखारी के राजा तथा बेरी रियासत और बावनी के नवाब से मदद की मांग की । उसे इन रियासतों से कुछ सहायता प्राप्त भी हुई । 12 जून को 53वीं देशी पैदल सेना के कुछ सूबेदारों ने कुछ अन्य लोगों के साथ मिलकर एक सभा की तथा दूसरे दिन हमीरपुर में विद्रोह शुरू हो गया । आस-पास के जमींदारों ने ब्रिटिश सरकार द्वारा अपनी भूमि हड़प लिये जाने का बदला लिया तथा शहरों को लूटा ।[1] विद्रोह के दौरान हमीरपुर में यूरोपीय निवासियों की हत्या कर दी गई। केवल एक इसाई बच सका ।[2]

6 जून, 1857 ई· को उरई में खबर फैली कि झांसी में स्थित पैदल सेना के जवानों ने विद्रोह कर दिया है तथा स्टार किले को अपने अधिकार में ले लिया है ।[3] विद्रोह के भय से जालौन के डिप्टी कमिश्नर ब्राउनी ने 4 लाख 50 हजार रूपये का खजाना ग्वालियर भेज दिया।

1· इम्पीरियल गजेटियर- यूनाइटेड प्रोविन्सस इलाहाबाद - 1905 पृष्ठ 58·

2· वही

3· एटकिन्सन, ई·टी· - पृष्ठ 187·

इसी समय कालपी में डिप्टी कलेक्टर शिवप्रसाद ने कैप्टन ब्राउनी को एक पत्र लिखकर अपने पद से त्यागपत्र देने की इच्छा व्यक्त की । धीरे-धीरे विद्रोह की लहर पूरे जिले में फैल गई ।

बांदा में भी विद्रोह की लहर फैल चुकी थी । 8 जून, 1857 ई॰ को इलाहाबाद के सैन्ट्रल जेल से छूटे कई कैदी बांदा में मऊ घाट पहुंचे तथा उन्होंने खून-खराबे और विद्रोह की खबर फैला दी । इस समय मेन बांदा का कलेक्टर था तथा कोकरिल कर्बी में संयुक्त मैजिस्ट्रेट के पद पर नियुक्त था । बांदा में हुए इस विद्रोह में कोकरिल की हत्या कर दी गई तथा उसके शव को कुत्तों के सामने फेंक दिया गया । इस समय कई अन्य यूरोपीय अधिकारी भी मार डाले गये ।[1]

इस प्रकार पूरे बुन्देलखण्ड में क्रान्तिकारियों ने ब्रिटिश सरकार का डटकर मुकाबला किया । अंग्रेजी शासन की नींव हिल उठी । बांदा के कलेक्टर मेन के शब्दों में, "विद्रोह की खबर आग की तरह फैल गई, गांव वाले हर दिशा में उठ खड़े हुए और उन्होंने लूटमार तथा

1· ड्रेक ब्रोकमैन, डी·एल· - बांदा गजेटियर पृष्ठ - 187·

एक-दूसरे को कत्ल करना शुरू कर दिया । इससे उन्हें पुरानी दुश्मनी तथा लम्बे समय से दबी बदले की भावना को सन्तुष्ट करने का अवसर मिला । नीलामी कराने वाले तथा कुर्की कराने वालों को खदेड़ दिया गया । यात्रियों तथा व्यापारियों को लूटा गया और सरकारी कर्मचारियों को अपनी जान बचा कर भागने को मजबूर कर दिया गया । इन सभी घटनाओं में सरकारी इमारतों तथा हर प्रकार की सम्पत्ति को लूटा गया और उसे नष्ट कर दिया गया । हर आदमी का हाथ अपने पड़ोसी के विरुद्ध उठ रहा था तथा स्थानीय लोगों ने इस विद्रोह में उस पागलपन से हिस्सा लिया जिससे कोई पागल ही खुशी प्राप्त कर सकता है । बुन्देलखण्ड में तलवारें कम थीं किन्तु भाले, लोहे की नोक वाली लाठियां तथा कुल्हाड़ियां लेकर लोग स्वयं को योद्धा समझते तथा स्वयं अपने राजा का चुनाव करते थे ।"[1]

1858 ई. में शान्ति स्थापित हो जाने के बाद अंग्रेज सैनिकों ने झांसी, बांदा, जालौन तथा आस-पास के क्षेत्रों को खूब लूटा, जिससे आगामी वर्षों में गरीबी तथा मंहगाई बढ़ गई । 1858 से 1947 ई.

---

1. एटकिन्सन, ई.टी.-स्टेटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ नार्थ वेस्टर्न प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I {बुन्देलखण्ड} इलाहाबाद - 1874 पृष्ठ 187.

तक सरकार की नीति का एकमात्र उद्देश्य इस क्षेत्र से अधिक-से-अधिक राजस्व वसूल करना था । इसी कठोर राजस्व नीति के कारण क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा रहा ।

बुन्देलखण्ड की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के उपरोक्त विवेचन के बाद यह आवश्यक जान पड़ता है कि उन कारणों की जानकारी प्राप्त की जाए जिसके कारण यह क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा रहा तथा लोगों का दैनिक जीवन प्रभावित हुआ । क्योंकि क्षेत्र के इसी सामाजिक एवं आर्थिक पिछड़ेपन के कारण ही मिशनरियों ने यहां अपने केन्द्र स्थापित किये जिन्हें अंग्रेजी सरकार द्वारा भी सहायता प्रदान की गई ताकि अधिक-से-अधिक लोगों को प्रभावित करके उन्हें इसाई बनाया जा सके जिसे ब्रिटिश शासन के लिये आवश्यक समझा जाने लगा था।

....

अध्याय : द्वितीय

अंग्रेजी शासन काल में बुन्देलखण्ड की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति

बुन्देलखण्ड क्षेत्र आर्थिक रूप से पिछड़ा माना जाता है इसके अनेक कारण हैं । 1802 ई॰ में बेसिन की संधि के पश्चात् इस क्षेत्र में अंग्रेजी सत्ता का विकास हुआ । ब्रिटिश शासन की दमनकारी नीतियों एवं समय-समय पर आने वाली अनेक प्राकृतिक आपदाओं के कारण इस क्षेत्र का समुचित विकास नहीं हो सका, फलस्वरूप यहां अत्याधिक गरीबी, भुखमरी एवं बेरोजगारी व्याप्त रही।

ब्रिटिश शासन की दमनकारी नीतियों का एक मुख्य उद्देश्य यह भी था कि लोगों का जीवन स्तर ऊंचा न उठने दिया जाए ताकि वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति में संघर्षरत अपने शासकों के प्रति वफादार बने रहें।

इसके अतिरिक्त 19वीं शताब्दी में इस क्षेत्र के लोगों को बहुत सी प्राकृतिक विपदाओं का सामना करना पड़ा । समय-समय पर क्षेत्र में भयानक अकाल पड़े । कभी अतिवृष्टि, कभी अनावृष्टि के कारण और कभी कांस घास के उग आने के कारण फसल नष्ट हो गई एवं लोग गरीब हो गये । कृषि की हानि के

अतिरिक्त सरकारी नीतियों के फलस्वरूप क्षेत्र के अनेक कुटीर उद्योग-धन्धों का पतन हो गया । फलतः क्षेत्र का जनजीवन बहुत प्रभावित हुआ ।

अकाल तथा प्राकृतिक आपदाएं

बुन्देलखण्ड में हमेशा से ही सूखे की स्थिति आती रही है तथा झांसी जिले में अधिक वर्षा से आने वाली बाढ़ से हानि होती रही है और जब ये दोनों प्राकृतिक आपदाएं एक साथ आयीं, जैसा कि 1869 ई॰ में हुआ, तो उसका परिणाम एक भयानक विनाश के रूप में सामने आया ।[1]

1809-1810 ई॰ में बांदा जिले में भयानक सूखा पड़ा । लगभग 1828 ई॰ तक कांस घास के फैलने से तथा तूफानों की विनाशलीला से अथवा असमय वर्षा के कारण यहां खाद्य पदार्थों की अत्याधिक कमी हो गई ।[2] इसके बाद 1829-30 ई॰ में क्षेत्र में

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰-स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नॉर्थ वेस्ट प्रोविन्स ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद 1874-पृष्ठ-58॰
2. उत्तर प्रदेश गजेटियर, बांदा-पृष्ठ 109॰

अकाल पड़ा जिसके कारण बांदा जिले की स्थिति बहुत नाजुक हो गई । 1833 ई॰ में वर्षा की कमी के कारण फसलें बुरी तरह नष्ट हो गई । 1834 ई॰ में भी सूखे की स्थिति बनी रही । इसके पश्चात् 1860-70 के दशक में यह जिला कम वर्षा के कारण प्रभावित हुआ ।[1] 1868 ई॰ में बांदा और हमीरपुर में खरीफ की फसलें बुरी तरह से नष्ट हो गईं और 1869 ई॰ में रबी की फसल बहुत कम रही ।

खाद्य पदार्थों की इस कमी ने क्षेत्र के लोगों के जीवर पर असर डाला । उन्हें गरीबी तथा आर्थिक परेशानी का सामना करना पड़ा । इसके साथ-साथ समय-समय पर बहुत सी बीमारियां भी फैलीं, जिससे हजारों लोग मर गए ।[2]

जुलाई, 1869 ई॰ में हमीरपुर जिले में पड़ने वाले अकाल के बारे में संयुक्त मजिस्ट्रेट तथा डिप्टी कलेक्टर जी॰ एडमस ने अपनी रिपोर्ट में लिखा कि इस अकाल के कारण

---

1. उत्तर प्रदेश गजेटियर बांदा - पृष्ठ 109.

2. एटकिन्सन, ई॰टी॰-बुन्देलखण्ड गजेटियर-1874 पृष्ठ-153.

"निर्धन श्रेणी के लोगों के मुख्य भोजन में से अनाज लगभग गायब हो गया था और बिल्कुल निर्धन से ऊपर की श्रेणी के लोगों द्वारा भी भोजन में अनाज के बदले दूसरी चीजों को अपना लिया गया था । तेल निकालने के बाद तेल बीजों का बचा हुआ पदार्थ, महुआ का फल जो प्रायः खाने के काम में नहीं आता था और कमल के पोधे की जड़ तथा तना और दूसरे पानी के पौधे और कुछ गांवों में बरगद तथा सेमल के तने को भोजन के रूप में अनाज के स्थान पर प्रयोग किया जाता था ।"[1] इस रिपोर्ट के अनुसार काल की विभीषिका का वर्णन करते हुए जी·एडमस ने लिखा है, "गरीब मुसलमानों द्वारा भूखे जानवरों का मांस खाने के काम में लाया गया जो सस्ते दाम पर खरीद लिये जाते थे और फिर उन्हें मार दिया जाता था । गाय भैसों का यह मांस सबसे सस्ता भोजन था, जो वह प्राप्त कर सकते थे जिसका प्रायः मूल्य दो सेर अथवा अधिक के लिए एक पैसा होता था । तिल का का तेल निकालने के बाद बचा मिश्रण 6 पैसे सेर था । अलसी का ऐसा मिश्रण 5 पैसा प्रति सेर तथा

1· एटकिन्सन, ई·टी· - स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नॉर्थ वैस्ट प्रोविन्स ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद 1874 पृष्ठ 154

महुआ का सुखा हुआ फल 5 पैसे प्रति सेर था । वर्ष के शुरू में ही हजारों की संख्या में पशु मर गए । सड़कों पर या फिर खेतों में गिरे उनके कंकाल वहीं सड़ते रहे । अगर कोई जानवर गांव में मर जाता था तो उसे वहां से हटाकर गांव के बाहरी क्षेत्र में छोड़ दिया जाता था । भाटीपुरा में इस प्रकार की स्थिति विशेष रूप से दिखायी दी जिसके साथ मलेरिया का प्रकोप तथा पश्चिम से हवा चलने पर मदन सागर झील के सूखे क्षेत्र से उठने वाली दुर्गन्ध भी थी। जब हवा पूर्व से चलती थी तब बड़ी संख्या में खेतों एवं खुली जगह में मरे हुए जानवरों के कंकालों की दुर्गन्ध फैल जाती थी । मदनसागर झील सहित बीजानगर झील को छोड़कर पानी का हर तालाब या तो पूरी तरह सूख गया था या फिर इस हद तक सूख चुका था कि उसमें कालीमिट्टी के बड़े से घेरे में सड़ते हुए पानी के पौधों के बीच बहुत थोड़ा सा पानी दिखायी पड़ता था । यद्यपि गर्मी के मौसम के बाद यह दुर्गन्ध खत्म हो गई थी किन्तु पहली वर्षा होते ही यह पुनः शुरू हो गई ।[1]

1· एटकिन्सन, ई·टी· - बुन्देलखण्ड गजेटियर - पृष्ठ 154-155·

बुन्देलखण्ड के अन्य जिलों में भी अकाल की लगभग यही स्थिति रही । झांसी जिले में 1868-69 ई॰ में पड़े अकाल के बारे में हेन्वी ने लिखा है, "इस क्षेत्र में प्रायः 30 से 40 इंच वर्षा होती है । 1867 ई॰ में 45 इंच पानी गिरा । 1869 ई॰ 46 इंच वर्षा हुई किन्तु जून से नवम्बर, 1868 ई॰ के बीच केवल 14 इंच वर्षा हुई तथा वह भी सम्मान रूप से नहीं थी । इस सूखे के बाद 1869 ई॰ में अधिक वर्षा के कारण बाढ़ आ गई । सड़कें टूट गईं, पुल बह गए तथा कई सप्ताह तक क्षेत्र में यातायात ठप्प हो गया । जुलाई के अन्तिम सप्ताह में झांसी में 36 घंटों में 15 इंच पानी बरसा । इन आपदाओं के कारण फसलें बुरी तरह प्रभावित हुईं । 1868 ई॰ में केवल उन स्थानों को छोड़कर जहां काली मिट्टी थी जो नमी सोख सकती थी या जहां सिंचाई की सुविधा उपलब्ध थी, खरीफ की फसल लगभग नष्ट हो गई और 1869 ई॰ में रबी की फसल औसत के आधे से भी कम रही ।[1]

हेन्वी लिखते हैं, "1869 ई॰ में आयी बाढ़

1· एटकिन्सन, ई॰टी॰- स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टॉरिकल अकाऊंट ऑफ दि नॉर्थ वैस्ट प्रोविन्स ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद 1874 पृष्ठ 254·

के कारण जिले में खाद्य पदार्थों की बहुत कमी हो गई थी । जुलाई, 1869 ई॰ के पहले यातायात के लिये जानवर खरीदना बिल्कुल असम्भव हो गया था क्योंकि पानी तथा चारे की बहुत अधिक कमी हो गई थी ।[1] जुलाई के बाद सड़कें तथा पुल नष्ट हो गए । तब झांसी और उसके आस-पास के क्षेत्रों में भोजन की पूरी तरह कमी हो गई । स्थानीय अधिकारियों के अनुरोध पर कमिश्नर ने 10,000/- रूपये का अनाज कानपुर से मंगाए जाने का प्रबन्ध करने का आदेश दिया किन्तु निजी व्यापार में कम से कम हस्तक्षेप किये जाने के उद्देश्य से कानपुर के क्लेक्टर को इस कार्य को किसी अच्छे व्यापारी द्वारा किये जाने के लिये कहा गया और ऐसा सम्भव न होने की दशा में ही यह कार्य सरकार द्वारा किये जाने का फैसला किया गया । इस व्यवस्था के फलस्वरूप कीमतें कम हो गई और बाजार में बड़ी मात्रा में सामान उपलब्ध हो गया ।"

हेन्वी की रिपोर्ट के अनुसार,"जब तक सड़कें

1· एटकिन्सन, ई·टी·-बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ-254·

खुली थीं, उत्तर में कानपुर तथा दक्षिण में सागर से अनाज आयात किया गया । हमीरपुर से भी कुछ अनाज भेजा गया । जून, 1868 ई॰ से लेकर 1869 ई॰ में वर्षा के अन्त तक लगभग दो लाख मन गेहूं, चना तथा अरहर आयात किया गया । किन्तु केवल अकाल, बाढ़ तथा भोजन की कमी ही प्राकृतिक आपदाएं न थीं, बल्कि अकाल के बाद बीमारी का प्रकोप भी इस जिले में बढ़ा । 1869 ई॰ के पहले छः महीनों में चेचक का प्रकोप बढ़ा, लू लगने से बहुत से लोग मर गए ।"[1] जिले के डिप्टी कमिश्नर के अनुसार, "लोग भूखे-प्यासे और कमजोर हालत में पानी पीते ही गिर जाते थे और मर जाते थे ।"[2] 1869 ई॰ में वर्षा ऋतु में हैजे का प्रकोप फैला, दूषित तथा निम्न स्तर का भोजन करने के कारण फैले बुखार से लोगों की परेशानी दुगुनी हो गई ।[3] प्राप्त आंकड़ों के अनुसार झांसी में 1868 ई॰ में 3180 लोग मरे जबकि 1869 ई॰ में इस जिले में मरने वालों की संख्या 20331 हो गई थी ।[4]

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰-स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एंड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नॉर्थ वैस्ट प्रोविन्स ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखंड) इलहाबाद 1874-पृष्ठ-254
2. वही
3. वही
4. वही

जालौन जिले में भी अकाल की स्थिति लगभग ऐसी ही थी । इस जिले में औसतन 25 इंच वर्षा होती है तथा औसत तापमान 81° है । जिले के लोगों द्वारा 1783 ई॰ का अकाल बहुत अच्छी तरह याद किया जाता था जबकि गेहूं एक रूपये §बालासाही रूपया§ का छः सेर बेचा गया । 1833 ई॰ के अकाल के समय गेहूं नौ या दस सेर प्रति रूपया था और 1837 ई॰ में पांच सेर था । 1848-49 ई॰ में भी अकाल के कारण भोज्य पदार्थों की बड़ी मात्रा में कमी हो गई थी और विशेष रूप से जिले के दक्षिणी भाग में भूमिकर में बहुत सी रियायतें देनी पड़ीं ।[1]

1868-69 ई॰ में अकाल के कारण पूरा जालौन जिला प्रभावित रहा । 1868 ई॰ में 9 अगस्त से लेकर सितम्बर मध्य तक पूरा जिला सूखे की चपेट में रहा । सितम्बर मध्य में भारी वर्षा हुई । फसल क्षतिग्रस्त हो गई । 1869 ई॰ में रबी की फसल औसत से आधी थी । यद्यपि इन दोनों फसलों के नष्ट हो जाने के कारण पूर्ण अकाल नहीं पड़ा किन्तु खाद्य सामग्री की यह कमी 1869 ई॰ की ग्रीष्म ऋतु तक बनी रही । विशेष रूप से जालौन तथा उरई

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰-स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एंड हिस्टारिकल अकाउंट ऑफ दि नॉर्थ वेस्ट प्रोविन्स ऑफ इण्डिया भाग - I§बुन्देलखंड§ इलाहाबाद 1874 - पृष्ठ 203॰

के परगने इससे प्रभावित हुए जहां बड़ी संख्या में करों की वसूली स्थगित करनी पड़ी ।[1] असिस्टेंट कमिश्नर के आदेश पर उरई में प्रति व्यक्ति आधा सेर तथा प्रति बालक एक चौथाई सेर के हिसाब से अनाज बांटने की व्यवस्था की गई ।[2] इस प्रकार लगभग पांच महीने तक 130 लोगों की सहायता की गई ।[3] कालपी में लोगों द्वारा 192000 व्यक्तियों की सहायता की गई ।[4] किन्तु यह सहायता केवल सहायता के रूप में ही नहीं थी बल्कि गरीब व्यक्तियों को इस सहायता के बदले नये बाजार बनाने, रूई साफ करने तथा अन्य कार्यों में लगाया गया ।[5]

1868 ई॰ में कम वर्षा के कारण ललितपुर जिले में भी अकाल की स्थिति रही । एटकिन्सन के अनुसार जिले में गेहूं तथा चना इस समय एक रूपये का सात सेर मिलता था ।[6] स्थानीय अधिकारियों के अनुमान

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰-बुन्देलखंड गजेटियर 1874 - पृष्ठ 203॰
2. उत्तर प्रदेश गजेटियर - जालौन पृष्ठ 117
3. उत्तर प्रदेश गजेटियर जालौन तथा एटकिन्सन ई॰टी॰पृष्ठ-203
4. उत्तर प्रदेश गजेटियर जालौन पृष्ठ 117॰
5. एटकिन्सन, ई॰टी॰ पृष्ठ 203
6. वही पृष्ठ 318

के आधार पर जिले में व्याप्त 1868-69 ई॰ के अकाल के बारे में हेन्वी द्वारा एक विस्तृत रिपोर्ट दी गई है । इसके अनुसार, "29 जुलाई, 1868 को जिले की स्थिति आशाजनक प्रतीत होती थी । 31 जुलाई को कुछ वर्षा हुई । कुएं पिछले वर्ष के अधिक पानी के कारण कुछ भरे हुए थे । चारा पर्याप्त था । अनाज का मूल्य गेहूं के लिये 14 सेर से कुछ अधिक था और खेती का कार्य अच्छी तरह किया जा रहा था । अगस्त के मध्य तक एक अच्छी खरीफ की फसल की आशा थी । किन्तु 10 अगस्त से वर्षा न होने तथा 1 जून, 1868 से वर्षा औसत से कम होने के कारण फसलों के नष्ट होने का भय होने लगा था । सितम्बर में स्थिति और भी खराब हो गई । अब गेहूं $10\frac{1}{2}$ सेर प्रति रुपया था। मोटा अनाज मुश्किल से प्राप्य था । खेतों में काम बंद हो गया था । जिले में कुछ परगनों जैसे तालबेहट, बान्सी और भानपुर की स्थिति अधिक खराब थी, जहां खरीफ की फसल प्रायः नष्ट हो चुकी थी । दूसरे परगनों में फसल कुछ अच्छी अच्छी हुई थी और झांसी से अनाज आयात किया जा रहा था ।[1]

1· एटकिन्सन, ई·टी·-बुन्देलखण्ड गजेटियर-पृष्ठ-254·

हेन्वी की रिपोर्ट के अनुसार, "बान्सी तथा ललितपुर के व्यापारियों ने उदारता का परिचय देते हुए इस शर्त पर अनाज उधार देने का फैसला किया कि अगली फसल पर यह उधार वापिस कर दिया जायेगा । यद्यपि सितम्बर के मध्य में बारिश हुई किन्तु ज्वार की कुछ फसल को छोड़कर शेष फसल के लिये काफी देर हो चुकी थी । इस समय तक रबी की फसल बोने का काम शुरू हो चुका था । गांवों में लोग आर्थिक दृष्टि से अच्छे प्रतीत होते थे यद्यपि कृषकों के अतिरिक्त अन्य वर्गों के लोग परेशान दिखाई पड़ते थे । झांसी और सागर से अनाज का आयात जारी रहा किन्तु मोटा अनाज बेचने के लिए उपलब्ध नहीं था । अक्तूबर के अन्त में गेहूं $12\frac{1}{4}$ सेर के हिसाब से बिक रहा था । तब सूखे का मौसम आ गया जिससे फसलों के प्रति शेष आशा की किरण भी खत्म हो गई ।"[1] "इसके पश्चात् दिसम्बर के मध्य में आधा इंच वर्षा हुई । इस वर्षा से गेहूं और चने को काफी लाभ पहुंचा और कृषकों को नई आशा दिखाई दी किन्तु अन्य वर्गों के लोगों की स्थिति पहले से भी अधिक खराब हो गई थी ।"[2]

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰ - पृष्ठ 318॰
2. वही

हेन्वी लिखते हैं, " क्रिसमस के दिन गेहूं 12 सेर प्रति रुपया था, ज्वार भी लगभग इतना ही मंहगा था और दाल इससे एक सेर मंहगी थी ।"[1] इसके बाद मौसम में कुछ खास परिवर्तन नहीं हुआ । फरवरी के अंत में और मार्च, 1869 ई॰ के शुरू में भारी वर्षा हुई और लगभग औसत के आधे से कुछ अधिक फसल हुई । किन्तु लोगों में निराशा इतनी अधिक बढ़ चुकी थी तथा गांव के लोगों की हालत इतनी खराब हो चुकी थी कि ठाकुर जमींदारों द्वारा भी रोटी के लिए काम करने की इच्छा व्यक्त की गई । यद्यपि अप्रैल में फसल कटने के तुरन्त बाद अनाज सस्ता हो गया और गेहूं 14 सेर मिल सकता था । किन्तु लोग बहुत गरीब हो चुके थे । वे वर्षा की फसल बोने की उम्मीद बिल्कुल छोड़ चुके थे जब तक कि सरकार द्वारा इन्हें बीजों के लिए अग्रिम धनराशि न उपलब्ध कराई जाये ।[2]

इस प्रकार ललितपुर जिले में पहले वर्षा की कमी और फिर भारी वर्षा के कारण फसलें नष्ट हो

1· एटकिन्सन, ई॰टी॰-स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नार्थ वेस्ट प्रोविन्स ऑफ इंडिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद 1874-पृष्ठ-318·

2· वही

गईं और लोग गरीब हो गए । अकाल की इस विभीषिका के साथ-साथ जून, 1869 ई॰ में जिले में हैजे का प्रकोप बढ़ा जो वर्षा ऋतु के प्रारम्भ के महीनों में पूरे जिले में फैल गया ।[1] 28 जून को मानसून के प्रारम्भ होने पर यद्यपि खेती के बारे में चिन्ता कम हो गई किन्तु इससे यातायात ठप्प हो गया । जिसके कारण बाहर से आने वाली वस्तुओं में भारी कमी आयी और जुलाई के दूसरे सप्ताह में गेहूं रुपये का नौ सेर हो गया ।[2] 1868 ई॰ के अगस्त माह से इस भयावह स्थिति का सामना करने के उद्देश्य से ललितपुर में सहायतार्थ कार्यों की आवश्यकता महसूस की जाने लगी थी । 11 सितम्बर, 1868 को सरकार द्वारा लोगों की सहायता के उद्देश्य से 15,173/- रुपये की स्वीकृति दी गई । किन्तु यह एक बहुत छोटी धनराशि थी जिससे लोगों की सहायता तथा उन्हें रोजगार उपलब्ध कराया जाना था ।[3] जिले के डिप्टी कमिश्नर के अनुसार इस समय लगभग 22,11,557 लोगों को काम दिया गया ।[4] शुरू में लोगों को रोजगार की अधिक तलाश थी । प्रतिदिन

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰-स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नार्थ वैस्ट प्रोविन्सस ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद 1874 - पृष्ठ 319॰
2. वही
3. वही
4. वही

औसत 1670 लोगों को सरकार द्वारा काम में लगाया गया । किन्तु जनवरी 1869 ई॰ तक अकाल के कारण जिले की स्थिति इतनी बिगड़ चुकी थी कि काम तलाश करने वालों का प्रतिदिन औसत बढ़कर 18,620 हो गया । फरवरी के महीने में स्थिति और अधिक गम्भीर हो गई और प्रतिदिन का औसत बढ़कर 20,000 हो गया । मार्च में फसल कटने पर इसमें कमी आयी किन्तु जैसे ही खेतों में काम बन्द हुआ, काम मांगने वालों की संख्या में फिर से वृद्धि हो गई और अप्रैल के महीने में जनवरी की भांति ही यह गिनती 18,612 थी । सरकार द्वारा मुख्य रूप से तालाब खोदने और सिंचाई के उद्देश्य से बांध बनाने के कार्य इन अकालपीड़ितों से करवाये गये । इसी दौरान निर्धन गृहों में 395 दिनों तक 2781 लोगों को 61,443/- रूपये के खर्च पर भोजन दिया गया ।[1]

इन निर्धन गृहों में जिन लोगों को सहायता प्रदान की गई उसमें 76 प्रतिशत संख्या औरतों और बच्चों की थी । जब स्थिति अत्याधिक गम्भीर हो गई उस

1· एटकिन्सन, ई॰टी॰-स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एंड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नार्थ वैस्ट प्रोविन्स आफ इण्डिया भाग-I ﴾बुन्देलखण्ड﴿ इलाहाबाद 1874 - पृष्ठ - 319·

समय बच्चों की संख्या कुल लोगों का 47 प्रतिशत अर्थात् 24,900 थी । ऐसा कहा जाता है कि इन निर्धन गृहों में आने वाले व्यक्तियों में से अधिकांश ऐसे परिवार थे जिन्हें खरीफ की फसल नष्ट हो जाने के कारण उनके स्वामियों ने छोड़ दिया था और स्वयं मालवा की ओर चले गये थे । ललितपुर जिले में इन निर्धन गृहों की स्थापना ललितपुर, बान्सी, भानपुर, तालबेहट, बांदा, पटना, गुना, महरौनी, जाखलौन तथा डूंगरा में की गई थी ।[1] इनमें से मुख्य ललितपुर तथा तालबेहट के निर्धन गृह थे । इन निर्धन गृहों पर वही नियम लागू होते थे जो लोगों को रोजगार उपलब्ध कराये जाने के सम्बन्ध में थे । इनमें से प्रत्येक का स्थानीय समिति के सदस्य द्वारा प्रतिदिन निरीक्षण किया जाता था । जब इन गृहों में रहने वाले लोगों ने पुनः कुछ शक्ति प्राप्त कर ली और वे काम करने योग्य हो गये तब उन्हें आसपास के क्षेत्रों में उपलब्ध कराये गये सहायतार्थ कार्यों के लिये भेज दिया गया ।[2] जो लोग शेष रह गये उन्हें टोकरी बनाने तथा रस्सी बटने

1· एटकिन्सन ई·टी· - स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल अकाऊंट ऑफ दि नार्थ वैस्ट प्रोविन्स ऑफ इण्डिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद 1874 पृष्ठ 319·

2· वही पृष्ठ -320·

के काम लगाया गया । यहां रहने वाली औरतों तथा लड़कियों को केन्द्रीय समिति द्वारा भेजे गये 1,000 रूपये से कपड़े की सहायता भी दी गई । इसके अतिरिक्त जिले में 88,867 यात्रियों को आर्थिक सहायता दी गई । 41,369 लोगों को तालबेहट तथा 27,134 को बांसी में भोजन उपलब्ध कराया गया ।[1]

यद्यपि लोगों को भूख के कारण होने वाली मृत्यु से बचाने के लिये उपरोक्त उपाय किये गये थे किन्तु अकाल के कारण भयानक तबाही हुई । हेन्वी के अनुसार, "ललितपुर जिले में लगभग 41 प्रतिशत पशु मर गये और 7,000 से अधिक बेच दिये गये । कुछ जानवरों को बालाबेहट के जंगलों में छोड़ दिया गया । अन्य को खुले मैदानों में खदेड़ दिया गया तथा कुछ दूसरों को ज्वार का सूखा भूसा खिलाकर जीवित रखा गया ।"[2] रिपोर्ट के अनुसार - "जब 1869 ई॰ में अधिक वर्षा हुई तब घास और पानी की अधिकता हो जाने से हुए परिवर्तन के कारण बड़ी संख्या में पशु मर गये । हजारों की संख्या में मरने वाले पशुओं के कंकालों से निकलने वाली दुर्गन्ध के कारण हवा दूषित हो गई जिससे जिले में हैजा फैल गया । सरकार द्वारा इन प्राकृतिक आपदाओं से प्रभावित लोगों की सहायता के उपाय किये गये और उन्हें कुए खोदने तथा

1· एटकिन्सन, ई·टी·-बुन्देलखण्ड गजेटियर - पृष्ठ 320·

2· वही

बीज और पशु खरीदने के लिए धन उपलब्ध कराया गया ।"[1] हेन्वी लिखते हैं, " 1868 तथा 1869 ई॰ के दो वर्षों के दौरान कुएं खोदने जैसे स्थायी उपयोगिता के कार्यों के लिए 87,785/- रूपये तथा बीज और पशु खरीदने के लिए लोगों को दी जाने वाली सहायता के अन्तर्गत 68,439 /- रूपये की धनराशि स्वीकृत की गई थी । यद्यपि लोग इन उद्देश्यों को सामने रख कर सरकार से यह सहायता लेते थे, किन्तु ऐसा कहा जाता है कि यह अग्रिम राशि भोजन तथा जीवन के लिए आवश्यक वस्तुएं खरीदने के काम में प्रयोग की गई । फलस्वरूप न कुओं का निर्माण हो सका, न ही नए पशु खरीदे गये और भूमि जुताई के अभाव में खाली पड़ी रही ।"[2]

इस प्रकार 1868-69 ई॰ के अकाल ने बुन्देलखण्ड के पूरे क्षेत्र को प्रभावित किया । इससे जन-जीवन अस्त-व्यस्त हो गया । लोग गरीबी तथा भूखमरी के शिकार हो गये । अकाल के साथ-साथ अन्य प्राकृतिक आपदाएं जैसे बीमारियां आदि का प्रकोप फैला जिससे लोगों की आर्थिक स्थिति बिगड़ गई ।

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰ - बुन्देलखण्ड गजेटियर - पृष्ठ-320
2. वही

इसी प्रकार 1895-97 ई. में भी बुन्देलखण्ड क्षेत्र में अकाल पड़ा जिससे यहां के लोगों की आर्थिक स्थिति निरन्तर खराब होती गई । यह अकाल पहले के अकालों से अधिक भयानक था । 1894-95 में हुई अधिक वर्षा खरीफ तथा रबी की फसलों के लिए बहुत हानिकारक सिद्ध हुई ।[1] 1895-96 में शुरू में अधिक वर्षा हुई । गांव के लोगों एवं सार्वजनिक निर्माण विभाग द्वारा अकाल पीड़ितों की सहायता हेतु कार्य शुरू किये गये किन्तु 58,798/- रूपये खर्च करने के पश्चात् बांदा जिले में गांव वालों की सहायता बन्द कर दी गई ।[2] 1896-97 में खाद्यानों की कीमतें बहुत बढ़ गई थीं । अक्तूबर में यह कीमतें घटिया चावल के लिये $7\frac{1}{4}$ सेर प्रति रूपया तथा गेहूं, मूंग एवं उड़द की दाल $7\frac{3}{4}$ सेर प्रति रूपया थी जो बाद में और भी अधिक बढ़ गई ।[3] क्षेत्र के अन्य जिलों में भी यही स्थिति थी । राजस्व कर वसूली में छूट दी गई, निर्धन गृहों की स्थापना की गई और लोगों को सीधे आर्थिक सहायता भी प्रदान की गई । मई, 1897

---

1. ड्रेक ब्रोकमैन, डी.एल. - बांदा गजेटियर-1909 पृष्ठ-65.
2. वही
3. वही

में स्थिति बहुत गम्भीर हो गई थी । इस समय झांसी जिले में लगभग एक लाख लोगों को सहायता प्रदान की गई ।

समय-समय पर पड़ने वाले इन अकालों के दुखद परिणाम हुए । लोग गरीब हो गये । भोज्य पदार्थों की कमी हो गई, बीमारियां एवं भूख के कारण जानवर मर गये । कृषि की अत्याधिक हानि हुई । लोगों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई ।

अकालों की इस विभीषिका के अतिरिक्त बुन्देलखण्ड में कुछ अन्य प्राकृतिक आपदायें भी आती रहीं जिसमें कांस घास का उगना अत्यन्त महत्वपूर्ण कहा जा सकता है । इस घास के कारण क्षेत्र की कृषि बहुत प्रभावित हुई जिसके फलस्वरूप क्षेत्र हमेशा पिछड़ा रहा ।

बुन्देलखण्ड में कांस घास का उगना

कांस एक प्रकार की घास है जिसे बुन्देलखण्ड के आर्थिक पिछड़ेपन के लिये एक महत्वपूर्ण कारण माना जाता है । यह घास, जिसके लिये शायद बुन्देलखण्ड क्षेत्र की मिट्टी उपयुक्त है, लम्बी जड़ों वाली होती है । एक बार उग आने पर खेत से इसे खत्म करना

लगभग असम्भव होता है । सामान्यतः यह 12 से 15 वर्षों तक लगातार बनी रहती है और तब अचानक खत्म हो जाती है जिसके पश्चात् वह भूमि पुनः जोतने योग्य हो जाती है ।[1]

इस घास के कारण बुन्देलखण्ड के कई गांव बुरी तरह प्रभावित हुए । यहां के लोग इसे दो नामों से जानते हैं :- §1§ कांस तथा §2§ कांसी । यह सम्भवतः इसकी दो जातियां हैं ।[2] कांस घास से उस भूमि की उर्वरा शक्ति पूर्णतः नष्ट नहीं होती किन्तु ऐसा कहा जाता है कि जिस भूमि में कांसी घास उग जाती है उसमें अन्य बीज नहीं उग सकता ।[3] इसकी जड़ें इतनी गहराई तक फैल जाती हैं कि इसे समाप्त करने के सभी प्रयास बेकार सिद्ध होते हैं । सम्भवतः किसी जहर द्वारा इसके पौधे का विनाश करके ही इससे छुटकारा पाया जा सकता है ।[4] 1909 ई॰ में एटकिन्सन ने लिखा - "क्षेत्र के बांदा जिले में अगासी तथा सिहोन्दा परगनों में पिछले बीस वर्षों के दौरान कांस घास की अधिकता के कारण मुख्य फसलों की क्वालिटी में कमी आयी है । बांदा परगने में यद्यपि कपास की अधिक पैदावार हुई है तथा खाद्यान्नों की

---

1. ड्रेक ब्रोकमैन, डी॰एल॰-बांदा गजेटियर पृष्ठ-20॰
2. एटकिन्सन ई॰टी॰-स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एंड हिस्टारिकल अकाउंट ऑफ दि नार्थ वेस्ट प्रोविन्स ऑफ इण्डिया भाग-I §बुन्देलखण्ड§ इलाहाबाद 1874 - पृष्ठ 92॰
3. वही
4. वही

पैदावार में कमी आयी है, किन्तु इस कमी का मुख्य कारण कपास की अधिकता के स्थान पर कांस घास के फैलाव को माना जा सकता है जिससे बहुत सी उपजाऊ भूमि बंजर होकर खेती के योग्य नहीं रह गई है ।[1] बांदा जिले में 1820 ई॰ में प्रथम बार कांस का उगना राजस्व अधिकारियों के लिये चिन्ता का विषय बना क्योंकि उस वर्ष इस घास के उग आने से जिले को भारी क्षति हुई ।[2]

ऐसा कहा जाता है कि सामान्य रूप से वे खेत जो अच्छी तरह जोतकर गेहूं की फसल के लिए तैयार किये जाते हैं, वे कांस से प्रभावित नहीं होते । किन्तु अच्छी तरह हल न चलाई गई भूमि में यह बहुत तेजी से उगती है ।[3] इसके उन्मूलन के लिये यद्यपि बांदा जिले के पछेनी गांव में सरकार दारा 1881 ई॰ में कुछ प्रयास किये गये तथा यह प्रयास सफल भी रहे किन्तु इनसे मिलने वाली सफलता इन पर किये गये खर्च की अपेक्षा कम थी तथा सामान्य कृषकों के लिये सम्भव न थी इसलिए इन्हें छोड़ दिया गया ।[4]

1· एटकिन्सन, ई·टी· - पृष्ठ 91·
2· ड्रेक ब्रोकमैन, डी·एल· - बांदा गजेटियर - पृष्ठ-20·
3· वही पृष्ठ -21·
4· वही

बुन्देलखण्ड के अन्य जिलों की भांति हमीरपुर में भी कृषि को कांस घास से बहुत नुकसान हुआ । 1872 ई॰ में केवल झांसी जिले में ही इसने 40 हजार एकड़ भूमि को तीव्रता से घेर लिया गया था ।[1] 1892 ई॰ में जब झांसी जिले का दूसरा बन्दोबस्त किया जा जा रहा था उस समय बन्दोबस्त अधिकारी को दो महत्वपूर्ण समस्याओं का सामना करना पड़ा ।[2] पहला जमींदारों का ऋणग्रस्त होना, दूसरा कांस घास का प्रकोप । निःसन्देह जमींदारों की आर्थिक स्थिति कांस घास के प्रकोप के कारण ही प्रभावित हुई । इस घास से खेती को होने वाली क्षति से झांसी जिले में सरकार को 6 लाख रूपये के राजस्व की हानि हुई ।[3] 1896-97 में अकाल पड़ा तथा इसके बाद फसल को कांस की अधिकता के कारण बहुत हानि हुई ।[4]

राजस्व को होने वाली हानि को ध्यान में रखते हुए ब्रिटिश अधिकारियों को उन प्रयासों की ओर ध्यान पड़ा जिनसे कांस का उन्मूलन किया जा सके । इस संबंध

1· ड्रेक ब्रोकमैन, डी·एल·-झांसी गजेटियर, इलाहाबाद - पृष्ठ-140
2· इम्पे·डब्लयू·एच·एल· तथा मेस्टन जे·एस·झांसी सेटलमेंट रिपोर्ट, इलाहाबाद 1892 पृष्ठ-56
3· वही
4· उ·प्र·डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, झांसी 1965 पृष्ठ-209·

में कुछ सुझाव दिये गये जिसके अन्तर्गत इस घास को जलाना, गहरी खुदाई अथवा अच्छी तरह जुताई करना या खेत को वैसे ही खाली छोड़ देना आदि तरीके शामिल थे ।[1] ये सभी तरीके बुन्देलखण्ड के जिलों में विशेषतः हमीरपुर में लागू किये गये लेकिन इनका कोई परिणाम नहीं निकला ।[2] इसे जलाने पर दूसरे ही वर्ष यह और तेजी से पैदा हुई । जलाने का यह प्रयोग झांसी जिले की गरौठा तहसील में किया गया था ।[3] सहारनपुर के वनस्पति विभाग के सुपरिंटेंडेंट ने इस सम्बन्ध में एक और सुझाव दिया । उनका मत था कि जिन खेतों में बराबर उर्वरक का प्रयोग किया जा रहा हो वहां इस घास के पैदा होने की संभावना कम रहती है लेकिन लोगों की आर्थिक स्थिति को देखते हुए उर्वरकों का अधिक प्रयोग संभव नहीं था ।[4]

सिंचाई सुविधाओं का अभाव -

बुन्देलखण्ड में कृषि के पिछड़ेपन के अन्य अनेक कारण भी थे । अंग्रेजी शासन काल में पूरे बुन्देलखण्ड में सिंचाई की सुविधाओं का समुचित विकास नहीं किया जा

---

1. हमीरपुर सैटलमेंट रिपोर्ट, इलाहाबाद 1880 पृष्ठ-118
2. वही
3. इम्पे· डब्लयू·, एच·एल· तथा मेस्टन, जे·एस·-झांसी सैटलमेंट रिपोर्ट, इलाहाबाद - 1892 पैरा-8·
4. वही

सका । सरकार द्वारा 1862 ई॰ में बुन्देलखण्ड सिंचाई विभाग को बन्द कर दिया गया ।[1] बांदा जिले में 1907 ई॰ तक सिंचाई के समुचित साधन उपलब्ध नहीं थे । 1889-98 ई॰ के बीच बांदा जिले में सभी साधनों द्वारा सिंचित कुल औसत क्षेत्र 4932 एकड़ था जिसमें वह क्षेत्र भी शामिल था जिसमें कम से कम एक बार सिंचाई की जाती थी ।[2]

झांसी तथा ललितपुर में भी सिंचाई सुविधाओं की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया । 1866 ई॰ में जेनकिंसन द्वारा सिंचाई के महत्व पर प्रकाश डाला गया जिसमें 142 तालाबों की मरम्मत तथा 39 नये सिंचाई कार्यों की योजना बनाई गई । 1868-69 ई॰ के अकाल के कारण यद्यपित पछवाड़ा तथा मगरवाड़ा की बड़ी झीलों का निर्माण कराया गया किन्तु दूसरे तालाबों इत्यादि पर बहुत कम ध्यान दिया गया । 1879 ई॰ तक सरकार द्वारा सिंचाई व्यवस्था के लिये बहुत कम प्रयास किये गये । 1885 ई॰ तक 21 तालाबों की मरम्मत के लिये वार्षिक सहायता प्रदान की गई, किन्तु सैनिक कार्यों की आवश्यकता के कारण उस वर्ष यह सहायता कम कर देनी पड़ी तथा 1886 एवं

1· जेनकिन्सन -झांसी सैटलमेंट रिपोर्ट 1871 पृष्ठ - 71-72·

2· ड्रेक ब्रोकमैन, डी·एल· - बांदा गजेटियर -पृष्ठ 53·

1891 के बीच जिले में केवल दो नये तालाबों का निर्माण किया जा सका ।[1] झांसी जिले में बरूआ सागर, पछवाड़ा, कछनेउ एवं मगरवाड़ा नामक झीलों को 1890 ई॰ में सिंचाई विभाग को सौंप दिया गया । यद्यपि इन वर्षों में सिंचाई की ओर बहुत कम ध्यान दिया गया था किन्तु 1896-97 ई॰ में पड़ने वाले अकाल एवं 1899 ई॰ में होने वाली कमी के कारण सरकार द्वारा इस ओर विशेष ध्यान दिया गया एवं सिंचाई विभाग के अन्तर्गत अलग से एक तालाब विभाग की व्यवस्था की गई जिसके परिणामस्वरूप सिंचाई व्यवस्था का विकास हुआ ।[2] 1907 ई॰ में पिम की रिपोर्ट के अनुसार, "इन प्रयासों से अधिक सफलता की आशा नहीं की जा सकती, न ही इतने वर्षों तक भूमि के लगातार कटाव के कारण झांसी एवं ललितपुर जिले में लाल मिट्टी के क्षेत्र के पुनः उस स्तर को प्राप्त कर पाना सम्भव है जहां तक यह एक बार पहुंच चुका था । किन्तु लगातार प्रयासों से अगले स्थायी बन्दोबस्त तक क्षेत्र की बिगड़ी हुई वर्तमान दशा में सुधार होने की सम्भावना है ।"[3]

जालौन जिले में भी सिंचाई की स्थिति अच्छी

1· ए·डब्लयू·पिम-फाइनल सैटलमेंट रिपोर्ट ऑन दि रिविजन आफ झांसी डिस्ट्रिक्ट इनक्लूडिंग ललितपुर सब डिवीजन {1903-1906 ई·} इलहाबाद 1907 पृष्ठ-14·

2· फाइनल सैटलमेंट रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ दि झांसी डिस्ट्रिक्ट -इन्क्लूडिंग ललितपुर सब डिवीजन{1903-1906 ई·} इलाहाबाद 1907 पृष्ठ-14·

3· वही

नहीं थी । 1889 ई॰ में व्हाईट ने अपनी रिपोर्ट में लिखा- "पूरे क्षेत्र में लगभग 6000 कुएं हैं जिसमें से 3250 पक्के हैं और पीने के लिए उनके पानी का प्रयोग किया जाता है । 2870 कुओं से, जो अधिकांशतः कच्चे हैं, कुछ सिंचाई की जाती है । इस प्रकार लगभग 6534 एकड़ भूमि की सिंचाई कुओं द्वारा की जाती है तथा लगभग 6194 एकड़ भूमि की सिंचाई अन्य साधनों (बेतवा नहर को छोड़कर) द्वारा की जाती है । इस प्रकार पूरे जालौन क्षेत्र में सिंचित भूमि क्षेत्र 12728 एकड़ से अधिक नहीं है जो कुल कृषि क्षेत्र का केवल 2·8 प्रतिशत है"।[1]

अतः सिंचाई सुविधाओं के अभाव ने बुन्देलखण्ड में कृषि व्यवस्था को प्रभावित किया । बेतवा नहर के निर्माण का सुझाव जो 1855 ई॰ में दिया गया था उसकी योजना 1881 ई॰ से पहले स्वीकृत नहीं हो सकी ।[2] इसी तरह बांदा में भी केन नदी से एक नहर निकालने की योजना पर 1870 ई॰ में विचार किया गया ।[3] इस योजना की रूप रेखा एक्जीक्यूटिव इंजीनियर रिचर्डसन ने इस उद्देश्य

1· फाइनल रिपोर्ट ऑफ रिवीजन ऑफ सैटलमेंट ऑफ ए सर्टेन पोरशन ऑफ जालौन डिस्ट्रिक्ट - फिलिप व्हाईट - इलाहाबाद 1889 पृष्ठ-16 पैरा-38·

2· ड्रेक ब्रोकमैन, डी॰एल॰ - झांसी गजेटियर, इलाहाबाद 1909 ई॰ पृष्ठ - 54·

3· ड्रेक ब्रोकमैन, डी॰एल॰ - बांदा गज़ेटियर - इलाहाबाद - 1909 पृष्ठ-59·

से तैयार की थी कि इस क्षेत्र में लगातार पड़ रहे अकालों से गांवों को राहत पहुंचाई जा सके । चूंकि सरकार की नीति अधिक लागत वाली योजनाओं को कार्यान्वित न करने की थी अतः इस योजना को काट छांट कर काफी बाद में लागू किया गया और 1896-97 ई॰ से पहले इसका कार्य प्रारम्भ नहीं हुआ ।[1]

कुटीर उद्योग-धन्धों का पतन -

जहां एक ओर बुन्देलखण्ड में अकाल तथा कांस घास की अधिकता के कारण यहां की कृषि प्रभावित हुई वहीं दूसरी ओर यहां के कुटीर उद्योग-धन्धों का भी धीरे-धीरे पतन हो गया । खरूआ वस्त्र उद्योग बुन्देलखण्ड का महत्वपूर्ण कुटीर उद्योग था, जो इस क्षेत्र में ब्रिटिश शासन से लगभग 100 वर्ष पूर्व मऊरानीपुर में विकसित हुआ । क्षेत्र में अल नामक पौधे से लाल भूरे रंग का निर्माण किया जाता था, जिसे खरूआ वस्त्र की रंगाई के लिए प्रयोग किया जाता था ।[2] विशेष रूप से जालौन तथा झांसी में इसकी खेती की

---

1. ड्रेक ब्रोकमैन, डी॰एल॰-बांदा गजेटियर-इलाहाबाद 1909, पृष्ठ 59॰
2. एटकिन्सन, ई॰टी॰ - बुन्देलखण्ड गजेटियर - पृष्ठ-201॰

जाती थी । जालौन जिले के कुच्छ, कालपी, सैयूयद नगर तथा कोटरा शहरों में कपड़ा रंगाई का उद्योग मुख्य था । अल पौधे की खेती मार, कबार तथा परूआ भूमि में की जाती थी । इसका बीज जुलाई के महीने में बोया जाता है । एक बीघा भूमि में जुताई करके लगभग एक मन बीज डाला जाता है ।[1] लगभग एक महीने में पौधा उग जाता है तथा सितम्बर में इसकी गुड़ाई की जाती है । दो वर्षों के बाद अगस्त-सितम्बर के महीने में पौधे में सफेद मीठी सुगन्ध वाले फुल निकलते हैं । एक बीघा भूमि से प्रथम वर्ष लगभग बीस सेर बीज तथा अगले दो वर्षों में दस सेर बीज प्रतिवर्ष प्राप्त होता है । तीसरे वर्ष दिसम्बर, जनवरी अथवा फरवरी महीनों में पौधे की जड़ को खोदा जाता है । इसकी जड़ें लगभग तीन फुट गहरी होती हैं तथा प्रति बीघा लगभग 5 मन ﴾408 *lbs.* ﴿ जड़ प्राप्त हो जाती है । जड़ के अतिरिक्त पौधे के दूसरे भागों को प्रयोग में नहीं लाया जाता ।[2] जड़ को तीन श्रेणियों में विभक्त किया जाता है । प्रथम श्रेणी की जड़ सबसे गहराई पर

1· एटकिन्सन, ई·टी· - बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ-102·

2· वही

मिलती है । इसे भारा कहते हैं । यह सबसे पतली जड़ें होती हैं । एटकिन्सन के अनुसार "इस जड़ का मूल्य 1874 ई० में 8/- रू० प्रति मन था । पहले इसका मूल्य 20/- रूपये प्रति मन भी था । जड़ के दूसरे भाग को झाड़न कहा जाता है । प्रति बीघा इसकी उपज लगभग $2\frac{1}{2}$ मन होती है और इसका मूल्य 4/- रू० प्रति मन था । जड़ के सबसे मोटे भाग को घटिया कहा जाता है । प्रति बीघा लगभग $1\frac{1}{2}$ मन यह जड़ प्राप्त होती है तथा इसका मूल्य आठ आना प्रति मन था ।"[1]

अल की जड़ के इन तीन भागों को इस अनुपात में मिलाया जाता है - प्रथम प्रकार की जड़ सवा सेर, दूसरे प्रकार की जड़ दो सेर तथा तीसरी तीन सेर । तब इसे महीन काट कर पीसा जाता है । उसमें रसायन मिलाकर उसे बड़े बर्तन में पानी में डाल दिया जाता है । जिस कपड़े पर रंगाई की जाती है उसे अच्छी तरह धोकर रंगाई की प्रक्रिया प्रारम्भ की जाती है । लगभग आठ दिनों तक अल की जड़ के घोल में उस कपड़े को

1\. एटकिन्सन, ई०टी० - स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टॉरिकल अकाऊंट ऑफ दि नार्थ वैस्ट प्रोविन्स ऑफ इण्डिया भाग-I {बुन्देलखण्ड} इलाहाबाद 1874-पृष्ठ-202०

डाल दिया जाता है । इसके बाद उसे धोकर सुखा लिया जाता है ।

इस प्रकार अल पौधे की जड़ द्वारा कपड़े की रंगाई का उद्योग बुन्देलखण्ड का महत्वपूर्ण कुटीर उद्योग था । अल की जड़ की खुदाई के काम में बहुत पैसा खर्च होता था । क्योंकि जड़ का आखिरी भाग ही महीन तथा सबसे महत्वपूर्ण होता है । 1874 ई॰ में यह अनुमान लगाया गया कि खरूआ वस्त्र के 60 थान का बिक्री मूल्य 87/- रूपये से 90/- रूपये तक था ।[1] किन्तु धीरे-धीरे ब्रिटिश शासन में इस महत्वपूर्ण पौधे की खेती का पतन हो गया जिसका इस क्षेत्र के खरूआ वस्त्र की रंगाई के काम पर बहुत असर पड़ा ।

खरूआ वस्त्र का उत्पादन मऊरानीपुर में किया जाता था । यह आश्चर्य की बात है कि ब्रिटिश शासन काल में अल पौधे की खेती में किसानों की रूचि कम हो गई । सम्भवतः इसका कारण खरूआ वस्त्र के उत्पादन में कमी हो जाना था ।[2] इसके अतिरिक्त शायद कृत्रिम रंगों का उत्पादन

1· एटकिन्सन, ई॰टी॰ - बुन्देलखण्ड गजेटियर - पृष्ठ - 253·

2· पाठक, एस॰पी॰ - झांसी ड्यूरिंग दि ब्रिटिश रूल - पृष्ठ - 57·

भी इस पौधे की उपज में कमी का कारण था ।[1]

मऊरानीपुर के एक व्यापारिक केन्द्र के रूप में विकसित होने के बारे में जेनकिन्सन ने लिखा है कि मऊरानीपुर पहले एक छोटा सा गांव था, जहां लोगों का पेशा खेती था । झांसी के सूबेदार रघुनाथराव हरि के समय छतरपुर के व्यापारी, जो वहां के राजा की बढ़ती हुई मांगों को पूरा कर सकने में असमर्थ थे, वहां से भागकर मऊरानीपुर आ गये जिन्हें रघुनाथराव द्वारा संरक्षण प्रदान किया गया । फलस्वरूप इन व्यापारियों ने इस क्षेत्र में अपने औद्योगिक प्रतिष्ठान खोलने आरम्भ कर दिये ।[2] सम्भवतः तभी से इस क्षेत्र ने व्यापार में लोकप्रियता प्राप्त कर ली ।

मऊरानीपुर के एक औद्योगिक केन्द्र के रूप में विकसित होने के पीछे जो भी इतिहास रहा हो, यह बात स्पष्ट थी कि अंग्रेजी शासन के पूर्व ही यह क्षेत्र अपने खरूआ उद्योग के लिये महत्वपूर्ण हो चुका था । मऊ के इस कपड़ा उद्योग ने देश के अन्य भागों में भी ख्याति प्राप्त कर ली थी ।[3] एटकिन्सन ने इस खरूआ उद्योग के अंतर्गत

1· पाठक, एस·पी· - झांसी ड्यूरिंग दि ब्रिटिश रूल - पृष्ठ-57·

2· वही पृष्ठ-60

3· एटकिन्सन, ई·टी·-पृष्ठ 544 तथा पाठक, एस·पी· पृष्ठ-60·

बनाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के कपड़ों की विस्तृत सूची दी है जिसे आसपास के बुनकरों द्वारा बुना जाता था ।[1] इस उद्योग के विकास से बुन्देलखण्ड क्षेत्र को बहुत अधिक लाभ हुआ । डेनियल के अनुसार 1863 ई॰ में खरूआ वस्त्र, अल के रंग तथा कपास के निर्यात से 6 लाख 80 हजार रूपये की प्राप्ति हुई ।[2]

अमरावती, मिर्जापुर, नागपुर, इन्दौर, फर्रूखाबाद, हाथरस, कालपी, कानपुर तथा दिल्ली से मऊरानीपुर के व्यापारियों के सम्बन्ध थे ।[3]

यह वास्तव में आश्चर्य का विषय है कि मऊ का खरूआ उद्योग, जो इतना लोकप्रिय तथा लाभप्रद था, ब्रिटिश शासन के दौरान धीरे-धीरे नष्ट हो गया तथा स्थानीय बाजार में इसकी खपत बहुत कम रह गई । खरूआ वस्त्र के निर्यात में कमी हो जाने से झांसी जिले की आर्थिक स्थिति को गहरा धक्का लगा ।[4] वास्तव में रेल यातायात का विकास हो जाने के कारण इस क्षेत्र में अच्छा कपड़ा सस्ते दाम पर मिलने लगा जिससे खरूआ उद्योग को भारी हानि पहुंची ।[5] सम्भवतः इस

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰-बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ-544.
2. ड्रेक ब्रोकमैन, डी॰एल॰-झांसी गजेटियर पृष्ठ 73 तथा पाठक, एस॰पी॰ - झांसी ड्यूरिंग दि ब्रिटिश रूल पृष्ठ-61
3. एटकिन्सन, ई॰टी॰-बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ 544
4. पाठक, एस॰पी॰ - झांसी ड्यूरिंग दि ब्रिटिश रूल पृष्ठ 61
5. वही

उद्योग में लगे कारीगर इस वस्त्र की क्वालिटी को अधिक न सुधार सके जिसके कारण मिल के बने कपड़े की क्वालिटी तथा कीमत की तुलना में खरूआ वस्त्र उद्योग पिछड़ गया । सरकार द्वारा लगाये गये कर भी इस उद्योग के विनाश का कारण बने ।[1]

खरूआ वस्त्र उद्योग के अतिरिक्त यह क्षेत्र 18वीं शताब्दी में हाथ से बनाये कपड़े तथा उस पर कलात्मक छपाई के काम के लिए भी प्रसिद्ध था ।[2] 1844 ई॰ में कर्नल स्लीमेन द्वारा झांसी के सुन्दर गर्म कालीनों की प्रशंसा की गई थी । 1863 ई॰ में 6,80,000/- रूपये का कपड़ा झांसी से निर्यात किया गया । बांदा के विभिन्न जिलों में खाना पकाने के बर्तन तथा सोने व चांदी के गहनों के निर्माण का कार्य होता था ।[3] अनेक स्थानों पर मोटे कम्बल तथा टाट बुनने का कार्य तथा रस्सी बटने का काम होता था ।[4] 1909 ई॰ में ड्रेक ब्रोकमेन ने लिखा है बांदा के कुछ गांवों जैसे रावली, कल्यानपुर तथा गोंडा में विभिन्न प्रकार के पत्थरों को काटकर उन पर पालिश करके अलंकृत किया जाता था ।[5] कर्बी में सिल्क

---

1. जोशी, ई॰बी॰-यू॰पी॰ डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - झांसी-1965 पृष्ठ-144॰
2. यू॰पी॰डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - झांसी 1965 पृष्ठ 144॰
3. ड्रेक ब्रोकमेन -बांदा गजेटियर पृष्ठ 75॰
4. वही
5. वही

कढ़ाई का उद्योग विकसित था । बांदा जिले का सबसे महत्वपूर्ण उद्योग पत्थरों की कटाई तथा उन पर पालिश करना था ।[1]

लेकिन अंग्रेजी शासन काल में इन उद्योगों को कोई प्रोत्साहन नहीं दिया गया । 1883 ई॰ से 1889 ई॰ के बीच झांसी क्षेत्र में रेलवे लाइन बिछाई गई जिसके परिणामस्वरूप मशीन की बनी वस्तुओं की बाजार में अधिकता हो गई तथा इन उद्योगों का विनाश हुआ ।[2] झांसी का प्रसिद्ध गर्म कालीन का उद्योग बन्द हो गया ।[3] कर्बी स्थित सूती मिल जिसमें बुन्देलखण्ड के आसपास के सूत की कताई होती थी, 1903 ई॰ में बन्द हो गई । अतः यहां कार्यरत 140 कर्मचारी निकाल दिये गये । इससे बेरोजगारी बढ़ गई ।[4]

बुन्देलखण्ड की राजस्व व्यवस्था -

19वीं शताब्दी में बुन्देलखण्ड आर्थिक दृष्टि से काफी पिछड़ा रहा । अकाल एवं अन्य प्राकृतिक विपदाओं का

1· ड्रेक ब्रोकमैन, डी·एल· - बांदा गजेटियर -पृष्ठ 75·

2· यू·पी· डिस्ट्रिक्ट गजेटियर झांसी पृष्ठ -144·

3· वही

4· केडिल ए· -सैटलमेंट रिपोर्ट बांदा -1881 ई· पृष्ठ-102

प्रभाव क्षेत्र की राजस्व व्यवस्था पर भी पड़ा । 1802 ई॰ में हुई बेसिन की सन्धि से क्षेत्र में अंग्रेजी सत्ता का उदय हुआ । अंग्रेजों ने क्षेत्र में अपना प्रभुत्व स्थापित करने के साथ-साथ राजस्व की ओर विशेष ध्यान दिया । समय-समय पर राजस्व के अनेक स्थाई एवं अस्थाई प्रबन्ध किये गये । इरस्किन ने 1809 ई॰ में बुन्देलखण्ड में पहले से जारी राजस्व व्यवस्था का वर्णन अपनी रिपोर्ट में किया है । इनके अनुसार "क्षेत्र के गांवों में लोग उत्तराधिकार के नियम के आधार पर भूमि के स्वामी थे । भूमि के स्वामित्व में बहुत से हिस्सेदार हुआ करते हैं जिनमें से प्रत्येक के पास भूमि का अलग-अलग टुकड़ा है जिस पर वह खेती करता है तथा पूरे गांव पर लगाये जाने वाले भू-राजस्व में अपनी भूमि के अनुपात के अनुसार कर अदा करता है । इन हिस्सों को अलग-अलग वर्गों में बांटा गया है, जिन्हें बेरी कहा जाता है तथा प्रत्येक वर्ग का मुखिया बेरीवार कहलाता है । सामान्यतः बेरीवार उस परिवार का मुखिया होता है जिससे बेरी बनती है । बेरीवार अपने तहत कार्यरत हिस्सेदारों से कर वसूल करता है और बेरी के सारे कार्य का

कर्ताधर्ता होता है ।[1] रिपोर्ट के अनुसार - "बड़े गांव को सामान्य रूप से थोक अथवा पट्टी में विभक्त किया जाता है जिनमें से प्रत्येक में कुछ बेरियां होती हैं और इस प्रकार कभी-कभी बेरीवार को थोकदार भी कहा जाता है । उन बेरीवारों को मुखिया कहा जाता है जो भूमि से सम्बन्धित कार्य हेतु सरकारी अधिकारियों से सम्पर्क करते हैं । सरकार द्वारा पूरे गांव के लिए संयुक्त रूप से कर का मूल्यांकन किया जाता है । अतः हिस्सेदारों के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि वह हर हिस्सेदार के लिए कर का निर्धारण कर लें । कर का यह निर्धारण उसे प्रदान की गई भूमि के आधार पर किया जाता है ।" इरस्किन लिखते हैं "कर के इस निर्धारण में भूमि की गुणवत्ता को ध्यान में नहीं रखा जाता क्योंकि हर हिस्सेदार को हर प्रकार की भूमि आनुपातिक रूप से दी जाती है । अतः भूमि की गुणवत्ता के सम्बन्ध में सभी हिस्सेदारों को समान समझा जाता है । कुछ गांव में जहां कुछ इस प्रकार

1· एटकिन्सन, ई·टी· - स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टॉरिकल अकाऊंट ऑफ दि नार्थ वेस्ट प्रोविन्सस ऑफ इंडिया भाग-I (बुन्देलखण्ड) इलाहाबाद 1874 पृष्ठ 544-45·

की भूमि पायी जाती है कि हिस्सेदारों के बीच उनका बंटवारा सम्भव नहीं है । ऐसी भूमि को माझखुरी भूमि कहा जाता है तथा इसे सामान्य लाभ के लिये सभी हिस्सेदारों द्वारा मिलकर बोया जाता है । हर हिस्सेदार की भूमि की नाप-जोख के लिए वास्तविक नाप को अपनाया जाता है । लेकिन यह नाम सामान्य रूप से प्रचलित बीघा के हिसाब से न होकर बीघा भाईचारा के अनुसार की जाती है । नाप की यह पद्धति केवल हिस्सेदारों के बीच प्रचलित है तथा प्रत्येक गांव में इसका पैमाना अलग-अलग है । प्रत्येक हिस्सेदार के पास बीघा भाईचारों की संख्या सुनिश्चित करके उसे पटवारी के रिकार्ड में लिख लिया जाता है तथा उसके अनुपात में प्रत्येक हिस्सेदार का राजस्व निर्धारित किया जाता है ।" रिपोर्ट के अनुसार - "देशी रियासतों के शासन में हिस्सेदारों के बीच राजस्व सम्बन्धी झगड़ों के निर्धारण के लिए अमील की भूमिका महत्वपूर्ण है ।"

इरस्किन की यह रिपोर्ट बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी शासन के प्रारम्भ के वर्षों में प्रचलित राजस्व व्यवस्था का स्पष्ट चित्रण करती है ।

बांदा जिले में राजस्व व्यवस्था -

बुन्देलखण्ड के विभिन्न जिलों में राजस्व दरों के निर्धारण के लिए एक जैसी नीति नहीं अपनायी गई । बांदा में पहला अस्थायी प्रबन्ध बुन्देलखण्ड में पालिटिकल कार्यों की देखरेख अधिकारी कैप्टन जान बेली द्वारा किया गया । यह राजस्व व्यवस्था बांदा तहसील, अगासी परगना, सिहोन्दा के उत्तरी भाग तथा कर्बी सब डिवीजन के कुछ हिस्सों में लागू की गई थी ।[1] 1805-06 ई॰ में एक और प्रबन्ध किया गया जिसके अनुसार पूरे जिले की राजस्व मांग 13,53,723/- रू॰ निश्चित की गई । शुरू में अंग्रेजों द्वारा किये गये यह राजस्व प्रबन्ध अधिक कठोर दरों वाले नहीं थे । 1808 ई॰ में वाउचुप द्वारा जिले का तीसरा राजस्व प्रबन्ध किया गया जिसके अनुसार 1809 ई॰ से अधिक कठोर दरें लागू की गई । यद्यपि करों में 13 प्रतिशत की वृद्धि की गई थी किन्तु मुद्रा परिवर्तन के कारण वास्तव में यह कर वृद्धि 27 प्रतिशत हो गई थी ।[2] इस पर कर वसूल करने के तरीके तथा

1· यू॰पी॰ गजेटियर - जिला बांदा पृष्ठ 172·

2· वही

भ्रष्टाचारी कर्मचारियों के कारण लोगों की परेशानी और भी बढ़ गई । वाउचुप ने इस बात पर जोर दिया कि उसके द्वारा लागू की गई व्यवस्था को स्थायी रूप से मान लिया जाये, किन्तु गवर्नर जनरल द्वारा इसकी पुनः जांच किये जाने की इच्छा व्यक्त की गई । राजस्व की अत्यन्त कठोर दरों के कारण इसकी वसूली में बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ा ।[1]

बांदा जिले में चौथा राजस्व प्रबन्ध 1815-16 ई॰ से 1819-20 ई॰ तक वारेंग द्वारा किया गया तथा करों को बढ़ाकर 20,92,345/- रू॰ कर दिया गया ।[2] किन्तु शीघ्र ही यह स्पष्ट हो गया कि बढ़ी हुई दरों पर कर वसूली कर सकना सम्भव न था । अतः उसके बाद समय-समय पर राजस्व करों में छूट दी गई । 1818 ई॰ के पश्चात् 1857 ई॰ के विद्रोह तक जितने भी राजस्व प्रबन्ध किये गये वे कुछ वर्षों तक के लिए ही थे । उनमें से कोई भी प्रबन्ध लम्बे समय तक लागू नहीं किया गया ।[3]

---

1. एम॰ हमफरीस, सैटलमेंट ऑफिसर-फाईनल रिपोर्ट ऑन दि रिजीजन ऑफ सैटलमेंट ऑफ बांदा डिस्ट्रिक्ट - इलाहाबाद 1909 पृष्ठ - 14॰
2. वही
3. वही पृष्ठ -3

बांदा जिले में पहला वैज्ञानिक ढंग से किया हुआ सर्वेक्षण और राजस्व प्रबन्ध 1842 ई॰ में हुआ जिसमें विभिन्न प्रकार की भूमि का सर्वेक्षण करते हुए राजस्व कर का निर्धारण किया गया ।। यह कार्य जिले के डिप्टी कलेक्टर राईट को सौंपा गया जिसने राजस्व की दरें निर्धारित कीं । किन्तु 1843-44 ई॰ में खराब फसल के कारण लोगों द्वारा करों का भुगतान न किये जा सकने के कारण अन्त में इन दरों में कमी करनी पड़ीं । 1856 ई॰ तथा 1857 ई॰ में भी कलेक्टर मेन द्वारा राजस्व दरों में कमी करने का सुझाव दिया गया तथा 1857 ई॰ में लेफि्टनेन्ट गवर्नर द्वारा करों में कटौती की गई ।[1]

1857 ई॰ में हुए विद्रोह से न केवल कर संशोधन प्रक्रिया रूक गई बल्कि कुछ समय के लिये बुन्देलखण्ड में ब्रिटिश सत्ता की नींव भी हिल गई । विद्रोह की समाप्ति के पश्चात् जैसे ही 1858 ई॰ में शान्ति स्थापित हुई राजस्व करों में कमी की प्रक्रिया पुनः शुरू की गई । जिले के कलेक्टर मेन को यह कार्य सौंपा गया । मेन ने 1859-60 ई॰ में यह कार्य पूरा किया तथा राईट द्वारा लगाई गई

1· ड्रेक ब्रोकमेन, डी॰एल॰ - बांदा गजेटियर पृष्ठ - 131

कर दरों में लगभग 19 प्रतिशत की कमी कर दी ।[1] इस राजस्व प्रबन्ध के फलस्वरूप जिले में ब्रिटिश शासन के प्रारम्भ से लेकर इस समय तक लागू होने वाली कर दरें सबसे कम थीं। किन्तु 1864, 1865 तथा 1868 ई॰ में आने वाली प्राकृतिक आपदाओं तथा कांस के बहुत अधिक फैल जाने के कारण यह प्रबन्ध भी स्थायी रूप से लागू न किया जा सका । अतः 1874-75 ई॰ में फिनले की सहायता से कैडिल द्वारा नया राजस्व प्रबन्ध किया गया ।[2]

कैडिल ने 10 दिसम्बर, 1874 ई॰ को राजस्व प्रबंध का कार्य भार ग्रहण किया ।[3] उसके सम्मुख सबसे बड़ी समस्या यह थी कि उसे एक ऐसे जिले का स्थायी राजस्व प्रबन्ध करना था जिसमें पहले किये गये प्रबन्ध लम्बे समय तक सफल नहीं हो सके थे । एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह थी कि मेन द्वारा राजस्व कर में की जाने वाली कमी भी प्रबन्ध की सफलता का कारण नहीं बन सकी थी ।[4] अतः उसने भूमि के वर्गीकरण को आधार बना कर उपज

---

1. ड्रेक ब्रोकमेन, डी॰एल॰-बांदा गजेटियर - पृष्ठ 132॰
2. हमफरीस - फाईनल रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ दि सैटलमेंट ऑफ बांदा डिस्ट्रिक्ट-इलाहाबाद 1909 पृष्ठ-3
3. ड्रेक ब्रोकमेन, डी॰एल॰-बांदा गजेटियर पृष्ठ 132
4. हमफरीस - फाईनल रिपोर्ट आन दि रिवीजन ऑफ दि सैटलमेंट ऑफ बांदा डिस्ट्रिक्ट इलाहाबाद-1909 पृष्ठ-3

का मापदण्ड निर्धारित किया । इस राजस्व प्रबन्ध में यह माना गया था कि अच्छी प्रकार की भूमि सबसे अधिक समय तक कृषि हेतु प्रयोग की जायेगी जबकि कम उर्वरक भूमि में फसल उत्पादन में समयानुसार कमी या बढ़ोतरी हो सकती है । भूमि के वर्गीकरण को आधार मानकर राजस्व निर्धारण किये जाने के कारण विभिन्न प्रकार की भूमि का स्पष्ट वर्गीकरण अति आवश्यक था । कैडिल का यह राजस्व प्रबन्ध एक सफल प्रबन्ध माना गया जिसमें उसके द्वारा प्रत्येक गांव की स्थिति का निरीक्षण करके कर की दर निर्धारित की गई थी ।[1] आज भी बहुत से गांव में भूमि का वर्गीकरण कैडिल द्वारा किये गये नामों से ही जाना जाता है ।[2] यद्यपि करों की दर कम थी तथा लोगों को इससे काफी राहत मिली किन्तु शुरू में इस व्यवस्था को सन्देह की दृष्टि से देखा गया । राजस्व अधिकारी द्वारा यह स्वीकार किया गया था कि कर व्यवस्था में कुछ त्रुटियां अवश्य थीं जिनका कारण मुख्यतः पहले की उच्च राजस्व दरें, कृषि के लिये खराब वर्ष तथा अन्य कुछ ऐसे ही कारण थे ।[3]

---

1. हमफरीस-फाइनल रिपोर्ट आन दि रिवीजन ऑफ दि सैटलमेंट ऑफ बांदा डिस्ट्रिक्ट - इलाहाबाद 1909 ई. पृष्ठ - 3.
2. ड्रेक ब्रोकमेन, डी.एल. - बांदा गजेटियर पृष्ठ 134.
3. वही

जिस समय कैडिल का यह राजस्व प्रबन्ध लागू किया गया, कृषि के लिये उपयुक्त मौसम होने के कारण राजस्व में बहुत वृद्धि हुई । वर्ष 1882-83 ई॰ तक कृषि कार्य में (कर्बी सब डिवीजन सहित) लगभग 10,56,893 एकड़ भूमि प्रयोग में लायी गई । इसके पश्चात् विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं के कारण कृषि क्षेत्र में अचानक कमी आ गई । 1886-87 ई॰ तक बांदा जिले में अत्याधिक अथवा असमान वर्षा के कारण कृषि को बहुत हानि हुई, जिससे क्षेत्र में कांस घास फैल गई । 1888 - 89 ई॰ तक कृषि उत्पादन घट कर 7,60,258 एकड़ क्षेत्र में रह गया था क्योंकि कांस के फैल जाने से एक बड़ा क्षेत्र कृषि के लिए अनुपयुक्त हो गया था । 1896-97 ई॰ में वर्षा की कमी के कारण तथा अकाल के कारण एवं पुनः 1905 - 06 ई॰ तथा 1907 - 08 ई॰ में पड़ने वाले अकाल के कारण जिले की कृषि प्रभावित हुई । अतः समय समय पर राजस्व का मूल्यांकन करके करों में कमी करनी पड़ी ।[1]

---

1. एम॰ हमफरीज़ - फाइनल रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ दि सैटलमेंट ऑफ बांदा डिस्ट्रिक्ट - पृष्ठ-4 - पत्र संख्या 37/ I-502 बी - 7 फरवरी, 1910 ई॰ एच॰आर॰सी॰ हेले का पत्र ।

कैडिल द्वारा किया गया यह राजस्व प्रबन्ध बांदा में 1 जुलाई, 1878 ई. से, पलानी और अगासी में 1879 ई. से, बदौसा और सिहोन्दा में 1880 ई. से बीस वर्ष के लिए लागू किया गया ।[1] यह प्रबन्ध निश्चित ही स्थायी रूप से लागू रह सकता था यदि विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं तथा कांस घास के फैलने के कारण कृषि उत्पादन में हुई कमी की वजह से राजस्व वसूली में बाधा न पैदा हुई होती ।[2]

इस प्रकार कैडिल के इस राजस्व प्रबन्ध के समय प्रारम्भ में बांदा जिले में कृषि उत्पादन में बढ़ोतरी हुई जो 1882-83 में सबसे अधिक थी । 1879-80 ई. में वर्षा औसत रही किन्तु समान वितरण होने के कारण कृषि का विकास हुआ । इस वर्ष खरीफ की फसल में वृद्धि हुई जबकि रबी की फसल कम रही । महुआ, जो यहां के लोगों के भोजन का महत्वपूर्ण भाग था, का उत्पादन बहुत अच्छा रहा । अगले वर्ष वर्षा औसत से लगभग आधी थी तथा जाड़े में वर्षा

---

1. ड्रेक ब्रोकमेन, डी.एल. - बांदा गजेटियर - पृष्ठ -136.

2. फाइनल रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ दि सैटलमेंट ऑफ बांदा डिस्ट्रिक्ट - पृष्ठ -4.

बिल्कुल नहीं हुई । फलस्वरूप खरीफ तथा रबी की फसल अच्छी न हो सकी एवं चारे की कमी के कारण बहुत से जानवर मर गये ।[1] 1883 ई॰ में जिले में वर्षा औसत से अधिक थी तथा जाड़ों में वर्षा के अधिक किन्तु समान वितरण होने के कारण इस वर्ष खरीफ की फसल का रिकार्ड सबसे अच्छा रहा । लेकिन 1887-88 ई॰ तक जिले के कृषि क्षेत्र में 1883 की अपेक्षा 13·25 प्रतिशत की कमी हो गई थी । इन परिस्थितियों में मुख्यतः बांदा, पलानी, बबेरू तथा कमासिन परगनों में कांस घास का प्रकोप बढ़ गया था । इन परेशानियों के बावजूद लोगों से सख्ती से राजस्व वसूली की गई । 1888-89 ई॰ का वर्ष पूरे बुन्देलखण्ड क्षेत्र में कृषि के लिए तबाही का समय था । जिले के कलेक्टर की रिपोर्ट के अनुसार 1889-90 में बांदा जिले के बड़े क्षेत्र में कांस उग आयी थी । कुल मिलाकर फसल खराब रही तथा राजस्व वसूली स्थगित करना आवश्यक हो गया ।[2] 1892-93 ई॰ में स्थिति अधिक निराशाजनक रही ।

1· फाईनल रिपोर्ट आॅन दि रिवीजन आॅफ दि सैटलमेंट आॅफ बांदा डिस्ट्रिक्ट - पृष्ठ -20·

2· वही

वर्षा औसत से अधिक किन्तु असमान होने के कारण खरीफ तथा रबी दोनों फसलें खराब हो गईं । इस वर्ष हुई ओला वृष्टि को बांदा के पश्चिमी गांवों में लोग काफी समय तक अपनी कठिनाईयों का शुरूआत का वर्ष मानते रहे । यद्यपि 1893-94 ई॰ में फसल अच्छी रही किन्तु लोगों को हैजा तथा बुखार इत्यादि बीमारियों एवं जानवरों में फैली बीमारी के कारण अत्याधिक परेशानियों का सामना करना पड़ा । 1894-95 ई॰ में वर्षा अधिक हुई । फलस्वरूप जिले में रबी तथा खरीफ दोनों फसलें खराब हो गईं तथा साथ ही बुखार की महामारी फैल गई । वस्तुओं की कीमतें बहुत अधिक बढ़ गईं तथा लोगों की आर्थिक स्थिति खराब हो गई । रिपोर्ट के अनुसार, "इससे अगला वर्ष इससे भी बुरा था । वर्षा बहुत कम हुई थी तथा असमान थी । खरीफ तथा रबी दोनों ही फसलें खराब हो गई थीं तथा महुआ की पैदावार पूर्णतः नष्ट हो गई थी । हैज़ा, बुखार तथा जानवरों की बीमारी फैल गई तथा अकाल पड़ गया ।"[1]

1· फाइनल रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ दि सैटलमेन्ट ऑफ बांदा डिस्ट्रिक्ट - पृष्ठ -21·

1896-97 ई॰ में भी लोगों को कोई राहत न मिली । रबी तथा खरीफ दोनों ही फसलें नष्ट हो गईं । बहुत से लोग तथा जानवर मर गये किन्तु इस वर्ष की एक खास बात यह थी कि जिले में महुआ की फसल औसत से अधिक हुई थी । कृषि में राजस्व प्रबन्ध के प्रारम्भ की अपेक्षा कर वसूली में 23·26 प्रतिशत की कमी आ गई थी । लोग कर देने में असमर्थ थे । अतः कर वसूली के कठोर तरीकों में वृद्धि हो गई थी ।[1] इस प्रकार 1896-97 ई॰ में राजस्व वसूली इस राजस्व प्रबन्ध के वर्षों में सब से न्यूनतम रही । इसके बाद भी समय-समय पर आयी विपदाओं के कारण यह क्षेत्र सदैव आर्थिक रूप से पिछड़ा रहा । वर्ष 1903-04 ई॰ में अधिक वर्षा के कारण खरीफ की फसल नष्ट हो गई । 1904-05 ई॰ में बांदा जिले में पड़े पाले के कारण कृषि को हानि हुई तथा 1905 ई॰ और 1906 ई॰ में वर्षा न होने के कारण बांदा और पलानी परगनों में अकाल की स्थिति घोषित कर दी गई ।[2]

1· फाईनल रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ दि सैटलमेंट ऑफ दि बांदा डिस्ट्रिक्ट - पृष्ठ -21·

2· वही

1877 ई॰ से 1882 ई॰ तक कर्वी सब डिवीजन का राजस्व प्रबन्ध एक अन्य अधिकारी ए॰बी॰पैटरसन द्वारा किया गया । यह प्रबन्ध भी यद्यपि भूमि वर्गीकरण के सिद्धान्तों पर ही आधारित था किन्तु वास्तव में कर्वी सब डिवीजन में भूमि का वर्गीकरण बांदा की अपेक्षा कम स्पष्ट था ।। बांदा तथा कर्वी दोनों ही राजस्व प्रबन्ध शुरू में 20 वर्ष के लिए लागू किये गये थे । 1894 ई॰ में बांदा के राजस्व प्रबन्ध की अवधि 10 वर्ष के लिए बढ़ा दी गई । 1898 ई॰ में कर्वी सब डिवीजन के राजस्व प्रबन्ध की अवधि को भी 10 वर्ष के लिए बढ़ा दिया गया ।[1]

झांसी का राजस्व प्रबन्ध -

झांसी जिले में पहला स्थायी बन्दोबस्त 1854 ई॰ में शुरू किया गया । किन्तु यह 1857 ई॰ के विद्रोह से फैली गड़बड़ी के कारण 1864 ई॰ तक पूरा नहीं किया जा सका । इसमें गुरसराय या काकरबाइ उबेरीस अथवा वे 58 गांव शामिल नहीं थे, जिन्हें

1॰ फाइनल रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ दि सैटलमेन्ट ऑफ बांदा डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ - 19-20॰

आखिरी बन्दोबस्त के समय झांसी तहसील में शामिल कर लिया गया था, किन्तु इसमें भान्डेर का परगना शामिल था जिसे 1886 ई॰ में झांसी तहसील के 58 गांवों के बदले ग्वालियर को हस्तान्तरित कर दिया गया था ।[1] यह प्रबन्ध 20 वर्षों के लिए किया गया था किन्तु बाद में इसकी अवधि बढ़ाकर 28 वर्ष कर दी गई । मऊ तथा पंडवाहा के परगनों में राजस्व की असमान दरें थीं । फिर भी यह एक अच्छा स्थायी बन्दोबस्त था ।[2] झांसी के डिप्टी कमिश्नर कैप्टन मैकलिन ने 1857 ई॰ के विद्रोह के बाद शान्ति स्थापित हो जाने पर 1858 ई॰ मे यह कार्य प्रारम्भ किया ।[3]

1859 ई॰ में कैप्टन क्लर्क ने मैकलिन के स्थान पर कार्य अपने हाथ में लिया तथा उसने गरौठा परगने के 15 गांवों में बन्दोबस्त कार्य प्रारम्भ किया । 1861 ई॰ में डेनियल ने क्लर्क से कार्य भार ग्रहण करके दूसरे ही वर्ष पंडवाहा और मऊ परगनों में राजस्व बन्दोबस्त शुरू किया । 1864 ई॰ में डेनियल के स्थान पर डचिड्सन

1· ए॰डब्लयू॰पिम - फाइनल रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ दि सैटलमेंट ऑफ दि झांसी डिस्ट्रिक्ट - इनक्लयूडिंग ललितपुर सब डिवीजन - ﴾1903-1906 ए॰डी॰﴿ - इलाहाबाद - 1907·

2· वही

3· जैनकिन्सन ई॰जी॰ - झांसी सैटलमेंट रिपोर्ट, इलाहाबाद 1871 पृष्ठ -83-85·

नियुक्त हुआ ।[1] जिसने मार्च 1864 ई. तक झांसी के 119 गांवों का बन्दोबस्त कर दिया । 1864 ई. में मेजर जेनकिन्सन ने झांसी जिले का कार्य अपने हाथ में लिया तथा इस बन्दोबस्त को पूरा किया ।

यह राजस्व प्रबन्ध उस समय शुरू किया गया था जब जमींदार 1857 ई. में हुई हानि के कारण, जिसके लिये उन्हें बहुत कम मुआवजा दिया गया था, बुरी तरह ऋणग्रस्त थे ।[2] इसके बाद क्षेत्र में कांस घास फैलने से कृषि के लिये खराब वर्षों का क्रम रहा । पिम ने लिखा है - "ऐसा लगता है कि इस समय लोगों की कर अदायगी की क्षमता को ध्यान में रखे बिना ही राजस्व वसूली की गई थी ।"[3] इम्पे का कथन है कि इस बन्दोबस्त द्वारा लोगों को ऋण से राहत दिलाने तथा कांस घास के फैलने से उत्पन्न हुई निराशा को कम करने के लिए बहुत से उपाय किये गये ।[4]

इम्पे तथा मेस्टन की रिपोर्ट के अनुसार इस

---

1. पाठक, एस.पी. - झांसी ड्यूरिंग ब्रिटिश रूल पृष्ठ-96.
2. फाइनल सेटलमेंट रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ झांसी डिस्ट्रिक्ट इन्कलूडिंग ललितपुर सब डिवीजन पृष्ठ-14
3. वही पृष्ठ - 4
4. वही पृष्ठ - 4

प्रबन्ध द्वारा लगभग 6 लाख रुपये की छूट दी गई । किन्तु यह कमी कांस के उग आने के कारण आवश्यक हो गई थी । इसके साथ ही लगभग सवा लाख रुपये न वसूल किये जा सकने के कारण छोड़ देने पड़े ।[1] पिम ने झांसी जिले के आखिरी बन्दोबस्त की रिपोर्ट में इस पहले स्थायी बन्दोबस्त का वर्णन करते हुए लिखा है - "इस बन्दोबस्त के अन्तर्गत समय-समय पर आने वाली प्राकृतिक आपदाओं पर ध्यान नहीं दिया गया और कृषि की तबाही के उन वर्षों में जिस सख्ती से कर वसूली की गई उसका वास्तव में लोगों पर बहुत प्रभाव पड़ा ।" [2]

1868 ई॰ के अकाल का इस बन्दोबस्त पर बहुत प्रभाव पड़ा । इस अकाल के कारण लगभग 7 प्रतिशत लोग तथा 25 प्रतिशत जानवरों की मृत्यु हो गई थी । पिम के अनुसार - "अकाल की विभीषिका के साथ-साथ कठोर कर वसूली के कारण लोग नये जानवर नहीं खरीद सके तथा उन्हें ऋणदाताओं का सहारा लेना पड़ा । रबी की फसल का

---

1. पिम॰ए॰डब्ल्यू - फाइनल सैटलमेंट रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ झांसी डिस्ट्रिक्ट इन्क्लूडिंग ललितपुर सब डिवीजन पृष्ठ - 4॰

2. वही

स्थान खरीफ ने ले लिया । कांस उग आई तथा तेजी से फैलने लगी । अकाल के बाद बहुत अधिक वर्षा हुई तथा ओले गिरे और अन्त में 1872 ई॰ में एक बीमारी के कारण लगभग 13,000 जानवर मर गये ।"[1] यद्यपि अकाल से हुई हानि को देखते हुए लोगों को कर में छूट प्रदान की गई किन्तु 1876-77 ई॰ तक जिले की राजस्व व्यवस्था का उचित प्रकार से निरीक्षण नहीं किया गया और न ही जमींदारों के ऋणों की ओर कोई ध्यान दिया गया ।[2] लाटूच तथा पोर्टर द्वारा की गई जांच के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि कर वसूली में दी जा रही छूट अति आवश्यक थी ।

1884 ई॰ तक कांस घास समाप्त हो चुकी थी । 1877-78 ई॰ से ही इस घास के फैलाव में कमी होने लगी थी । अतः लगभग सभी पुराने करों को पुनः लगा दिया गया । फलस्वरूप लोगों पर करों का बोझ बढ़ गया और बहुत से गांव इस आर्थिक शोषण की चपेट में आ गये । 1887, 1888 तथा 1889 ई॰ में होने वाली वर्षा के कारण

---

1. पिम, ए॰डब्ल्यू॰ - फाइनल सैटलमेंट रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ झांसी डिस्ट्रिक्ट इन्क्लूडिंग ललितपुर सब डिवीजन पृष्ठ - 14॰

2. वही

कांस फिर फैल गई । 1890 ई॰ की एक रिपोर्ट के अनुसार मऊ तथा गरौठा तहसीलों के लगभग 13,852 एकड़ क्षेत्र में कांस उग आई थी ।[1]

जिले का दूसरा स्थायी प्रबनध 1889-92 ई॰ में इम्पे द्वारा किया गया ।[2] जिस समय यह प्रबन्ध किया गया कांस घास उग आई थी । पिछले प्रबन्ध की अपेक्षा कृषि क्षेत्र में 9·6 प्रतिशत की कमी हो गई थी तथा जमींदारों की दशा इतनी दयनीय थी कि 1891 ई॰ की रिपोर्ट में बोर्ड ऑफ रेवन्यू के अनुसार यह कहा गया था कि 1882 के एक्ट XVI के अच्छे प्रभाव बहुत कम होंगे । इस प्रकार जिले की स्थिति बहुत खराब थी किन्तु कृषि भूमि को किराये पर दिये जाने से होने वाली आय जिसमें पिछले प्रबन्ध की अपेक्षा 18·81 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी, को कर वृद्धि का कारण माना गया था ।

यह स्थायी प्रबन्ध 1889 में शुरू हुआ तथा 1892 ई॰ में पूर्ण हुआ । इसके परिणामस्वरूप कर में 77,124/- रूपये के स्थान पर 5,16,132/- रूपये की वृद्धि

1· फाइनल सैटलमेंट रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ झांसी डिस्ट्रिक्ट इन्क्लूडिंग ललितपुर सब डिवीजन पृष्ठ-15·

2· आर॰डब्ल्यू॰गिलन का पत्र सं॰ 102 / आई-293 बी दिनांक 2 मार्च 1907·

कर दी गई । इम्पे के इस प्रबन्ध के बाद पिम द्वारा प्रतिवर्ष झांसी जिले की कर व्यवस्था की गणना की गई । इसमें 1896-97 ई॰ में पड़ने वाले अकाल के वर्ष का भी आकलन किया गया है । अकाल के पहले दो वर्षों तक लगातार रबी की फसल को लगने वाली बीमारी के कारण कृषि नष्ट हो गई थी । अकाल के बाद कांस घास का फैलाव पुनः बढ़ा तथा 1899-1900 ई॰ पुनः ऐसा वर्ष था जबकि बड़े पैमाने पर करों में छूट देनी पड़ी । 1900 से 1904 ई॰ तक कृषि का विकास हुआ । किन्तु 1904 ई॰ में खरीफ की फसल खराब हो गई । 1905 ई॰ में पाले के कारण रबी की फसल को हानि हुई तथा 1906 ई॰ में पुनः अकाल पड़ा ।[1]

इस प्रकार 19वीं शताब्दी के आखिरी वर्षों में तथा 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में झांसी जिले की आर्थिक स्थिति बहुत खराब थी । लोग परेशानियों से घिर गये थे । समय-समय पर पड़ने वाली प्राकृतिक आपदाओं के साथ-साथ कठोर राजस्व व्यवस्था उनके आर्थिक पिछड़ेपन का कारण बनीं ।[2]

1· आर॰ डब्ल्यू॰ गिलन का पत्र संख्या 102 / आई॰293 बी दिनांक 2 मार्च, 1907·

2· फाइनल सैटलमेंट रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ झांसी डिस्ट्रिक्ट इन्क्लूडिंग ललितपुर सब - डिवीजन पृष्ठ-4·

ललितपुर जिले का प्रथम स्थायी प्रबन्ध 1867-68 ई॰ में लागू किया गया । शुरू में इसकी अवधि बीस वर्ष रखी गई थी किन्तु इसे 10 वर्ष के लिए बढ़ा दिया गया । होरे के अनुसार विकसित गांवों में राजस्व की दरें अति ऊंची थी तथा अविकसित गांवों में यह दरें कम थीं । बुन्देला ठाकुरों के गांवों में भी राजस्व की कम दरें रखी गई थीं । किन्तु इस प्रबन्ध के बारे में यह कहना अनुचित न होगा कि इसके द्वारा जमींदारों की सामर्थ्य के अनुसार राजस्व का बोझ बांट दिया गया था और 1893 ई॰ में प्राकृतिक विनाश लीला शुरू होने तक यह एक अच्छा प्रबन्ध रहा । 1896-99 ई॰ में जबकि अत्याधिक निराशा का समय था, होरे द्वारा इस प्रबन्ध का पुनः निरीक्षण किया गया और करों में छूट दी गई । 1903 ई॰ में पुनः राजस्व दरें कम करनी पड़ीं । किन्तु राजस्व में दी जाने वाली इस छूट से भी किसानों को अधिक लाभ नहीं पहुंचा क्योंकि लगातार आने वाली प्राकृतिक आपदाओं से लोग इतने परेशान थे कि उनकी स्थिति निरन्तर दयनीय होती जा रही थी ।[1]

1· फाइनल सैटलमेंट रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ झांसी डिस्ट्रिक्ट इन्क्लूडिंग ललितपुर सब डिवीजन

हमीरपुर की राजस्व व्यवस्था -

हमीरपुर जिले का एक बड़ा भाग 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही ब्रिटिश सरकार के अधिकार में आ चुका था यद्यपि महोबा और जैतपुर के परगने अगले चालीस वर्ष तक ब्रिटिश भारत का अंग नहीं थे । समय-समय पर इस जिले के क्षेत्र एवं मुख्यालय में परिवर्तन होता रहा है । शुरू में ब्रिटिश सरकार द्वारा किये जाने वाले राजस्व प्रबन्ध कम अवधि के लिए थे । किन्तु इसमें राजस्व कर की दरें आसान एवं समान थीं । जिले का प्रथम राजस्व प्रबन्ध 1805-1806 ई. में गवर्नर जनरल के एजेन्ट कैप्टन बेली ने किया । इसमें केवल दो परगने शामिल थे ।[1] एरस्किन ने इस जिले का दूसरा राजस्व प्रबन्ध 1807 ई. में किया लेकिन उस समय तक गोपाल सिंह एवं अन्य विद्रोही नेता जिले के पश्चिमी क्षेत्रों में अपना प्रभाव जमाये हुये थे । तीसरा राजस्व प्रबन्ध 1811-12 ई. में बान्चूप ने किया ।[2]

---

1. राव, डब्ल्यू. - फाइनल रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ सैटलमेंट ऑफ दि हमीरपुर डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ - 9.
2. एटकिन्सन, ई.टी.-बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ-173.

1810 ई. से राजस्व कर में वृद्धि की गई और 1816 ई. में जिले के उस भाग का राजस्व 14.7 लाख रूपये कर दिया गया, जो ब्रिटिश सरकार के अधिकार क्षेत्र में था एवं जिसका राजस्व 1809 ई. में 9.25 लाख रूपये था ।[1] 1908 ई. में राव द्वारा दी गई रिपोर्ट के अनुसार 1816 ई. में वारिंग द्वारा किये गये राजस्व प्रबन्ध में राजस्व की दरें अत्याधिक ऊंची थीं । 1821 ई. तथा 1826 ई. में वालपी द्वारा किये गये सुधारों का अधिक असर नहीं हुआ ।[2]

1831 ई. में ऐन्सले द्वारा राजस्व दरों में लगभग 20 प्रतिशत की कमी कर दी गई किन्तु उसका यह राजस्व प्रबन्ध असमान था तथा उन लोगों द्वारा स्वाभाविक रूप से इसका विरोध किया गया जिन्हें इस व्यवस्था का लाभ नहीं हुआ । ऐन्सले ने राजस्व कर में की जाने वाली इस कमी का समर्थन करते हुए स्पष्ट किया कि किस प्रकार जिले में पहले उच्च राजस्व दरों के कारण हानि हुई । उसके अनुसार - जिले में मीलों तक एक भी गांव नहीं था जबकि पुराने गांवों के

---

1. यू.पी.डिस्ट्रिक्ट गजेटियर-हमीरपुर-1988 पृष्ठ 174.
2. राव, डब्ल्यू. - फाइनल रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ सेटलमेंट ऑफ हमीरपुर डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ-9.

अवशेष हर दिशा में दिखाई पड़ते थे ।[1] अगला राजस्व प्रबन्ध 1836 ई॰ में जिले के लगभग एक चौथाई क्षेत्र में किया गया तथा इसमें राजस्व करों में कुछ छूट प्रदान की गई ।

1842 ई॰ में म्यूर (Muir) तथा ऐलन द्वारा किया गया राजस्व प्रबन्ध तीस वर्षों के लिए था । पहली बार जिले का सर्वेक्षण करके राजस्व दरें निर्धारित की गईं । अब सरकार एवं राजस्व अधिकारी दोनों ही करों की दर कम करने के पक्ष में थे । यह एक सफल राजस्व प्रबन्ध माना जाता है । यह लगभग 36-37 वर्षों तक लागू रहा । इसके बाद 1877-79 ई॰ में अगला राजस्व प्रबन्ध नील (Neale) द्वारा किया गया । इसमें राजस्व दरों में पुनः कमी की गई । यह प्रबन्ध 20 वर्ष के लिए लागू किया गया । 1893 ई॰ में इसकी अवधि अगले 10 वर्षों के लिए बढ़ा दी गई ।[2] इसके पश्चात् बुन्देलखण्ड क्षेत्र में आने वाली प्राकृतिक आपदाओं से हमीरपुर जिला भी प्रभावित हुआ तथा समय-समय

---

1. फाइनल रिपोर्ट ऑन दि रिवीजन ऑफ सैटलमेंट ऑफ हमीरपुर डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ - 9॰
2. यू॰पी॰डिस्ट्रिक्ट गजेटियर हमीरपुर - पृष्ठ - 175॰

पर राजस्व दरों में छूट देना आवश्यक हो गया । मुख्यतः यह छूट उस क्षेत्र में दी गई जहां कांस उग आई थी तथा एक बड़ा क्षेत्र कृषि के लिए अनुपयुक्त हो गया था ।[1] इस प्रकार हमीरपुर जिले की राजस्व स्थिति बुन्देलखण्ड के अन्य जिलों की भांति ही दुखद रही । राजस्व की असमान और कठोर दरें इस व्यवस्था की मुख्य विशेषता को स्पष्ट करती है । इसके अतिरिक्त हमीरपुर जिले में डकैतों और लूटपाट करने वाले गिरोह के नेता पारस राम, गोपाल सिंह तथा दोआ बहुत सक्रिय थे । यह डकैत ब्रिटिश गांवों के किसानों से जबरदस्ती कर वसूल कर लेते थे । इस प्रकार अंग्रेजी शासनकाल में असुरक्षा की भावना के कारण भी लोग बाध्य होकर इन डकैतों को कर देते थे ।[2] एरस्किन ने जब 1807 ई· में इस जिले का बन्दोबस्त आरम्भ किया उस समय यह पता चला कि इस जिले के गोपाल सिंह एवं उसके समर्थकों ने पश्चिमी परगनों पर अपना पूर्ण

1· एच·आर·सी· हेले का पत्र संख्या 373 पृष्ठ-3 आई-475 बी
§फाइनल रिपोर्ट-हमीरपुर§

2· एटकिन्सन, ई·टी·-बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ-169·

नियंत्रण स्थापित कर रखा है ।[1] इसके बाद बान्चूप द्वारा की जाने वाली राजस्व वृद्धि के बारे में ऐलन का मत है कि पनवाड़ी परगने में राजस्व वृद्धि का कारण यह था कि वहां के दो कानूनगो आपस में शत्रुता रखते थे और उनके षडयंत्र से यह वृद्धि हुई ।[2] किन्तु केवल इन्हीं अधिकारियों को इस कर वृद्धि के लिए उत्तरदायी मानना उचित नहीं जान पड़ता । राजस्व दरों के निर्धारण के महत्वपूर्ण कार्य के लिए अन्य उच्च अधिकारी भी अपने कर्तव्यों का उचित निर्वाह नहीं कर सके जिसके परिणामस्वरूप हमीरपुर जिले के पश्चिमी परगनों में राजस्व की दरें ऊंची हो गई । पनवाड़ी परगने में स्थिति इतनी खराब हुई कि लोग राजस्व का भुगतान नहीं कर सके और 1815 ई॰ में भुखमरी के शिकार हुए ।[3] 1815 ई॰ में जब स्काट वारिंग ने यहां का बन्दोबस्त आरम्भ किया तो उसने देखा कि पनवाड़ी की स्थिति अन्य परगनों की अपेक्षा अधिक खराब है, उसने पूर्वी परगनों के राजस्व में

1· एटकिन्सन, ई·टी·-बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ-169·

2· वही -- पृष्ठ 170

3· वही

46 प्रतिशत की वृद्धि कर दी और पश्चिमी परगनों में 21 प्रतिशत वृद्धि कर दी गई । यह उल्लेखनीय है कि पश्चिमी परगनों में पहले से ही राजस्व की दरें अत्यन्त ऊंची थीं । अधिकतम वृद्धि ने लोगों को भुखमरी के कगार पर ला दिया । राजस्व बोर्ड के कमिश्नर ने इस अनियमितता की ओर संकेत किया किन्तु वारिंग द्वारा इन ऊंची दरों का समर्थन किया गया ।[1] इसके पश्चात् वालपी द्वारा किये गये राजस्व प्रबन्ध में भी दरें ऊंची ही रहीं । राजस्व वृद्धि का परिणाम यह निकला कि किसान ऋणग्रस्त हो गये और उन्हें राजस्व की अदायगी के लिए अपनी जमीनें बेचनी पड़ीं । यहां तक कि 1825-26 ई· में जब वालपी ने दूसरी बार बन्दोबस्त अधिकारी का कार्यभार ग्रहण किया तो उसने पुनः अपनी पुरानी राजस्व दरों का ही समर्थन किया । परिणामस्वरूप किसानों को भुगतान करने में कठिनाई हुई । उसने तहसीलदारों एवं राजस्व विभाग के कर्मचारियों के वेतन इसलिए बन्द कर दिये क्योंकि वे राजस्व की बकाया धनराशि की वसूली नहीं करा सके थे ।[2] 1815 से 1819 ई·

1· एटकिन्सन, ई·टी·-बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ-170·

2· वही पृष्ठ 175-176·

के बीच इस जिले की 815 जागीरों की इसलिए नीलामी करनी पड़ी क्योंकि इनके भूस्वामी राजस्व की दरों का भुगतान नहीं कर सके थे ।[1] 1842 ई॰ में जिले की गरीबी का वर्णन ऐलन की रिपोर्ट में देखने को मिलता है, जो उसके अनुसार राजस्व की ऊंची दरों का परिणाम था ।[2] ऐलन के शब्दों में - "लखनऊ के एक व्यापारी कुतुबुद्दीन हुसैन खान ने हमीरपुर जिले के 8000/- रूपये राजस्व मूल्य के कई गांवों को इसलिए खरीद लिया था क्योंकि वहां के भू-स्वामी राजस्व की पिछली धनराशि का भुगतान नहीं कर सके थे । उसी समय जेलउद्दीन खान ने भी 7000/- रूपये की मालगुजारी की भूमि खरीद ली थी लेकिन आगामी वर्षों में उसकी आर्थिक स्थिति भी इतनी खराब हो गई कि उसे एक भिखारी के रूप में जिला छोड़ देना पड़ा ।"[3] ऐलन ने भूमि स्थानान्तरण के अनेक उदाहरण दिये हैं । वह पुनः लिखता है कि हमीरपुर के एक ऋणदाता दयाराम ने ऋण लेन-देन का

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰ - बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ-175
2. वही पृष्ठ 175
3. वही पृष्ठ 175

व्यापार करके लगभग 12,000/- रूपये की मालगुजारी की भूमि उन किसानों से खरीद ली थी जो आर्थिक तंगी के कारण राजस्व का भुगतान नहीं कर सके थे और बाध्य होकर अपनी भूमि ऋणदाताओं को बेच रहे थे । किन्तु दयाराम को भी बाद में सारी जमीन इसलिए बेच देनी पड़ी क्योंकि वह स्वयं भी राजस्व का भुगतान नहीं कर सका था । इसी समय इलाहाबाद के मिर्जा मुहम्मद खान ने हमीरपुर के दो गांवों की जमीन खरीद ली जिसकी वार्षिक मालगुजारी 4,000/- रूपये थी ।[1] भूमि खरीदने वालों में एक सरकारी वकील नुनायत राय भी थे, लेकिन बाद में राजस्व की अदायगी न कर सकने के कारण उन्हें भी अपनी भूमि दूसरों को बेचनी पड़ी ।[2] भूमि हस्तान्तरण की यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रही जिसका मुख्य कारण राजस्व का भुगतान न कर सकना था । अतः राजस्व की उच्च एवं असमान दरों ने लोगों की आर्थिक स्थिति को प्रभावित किया एवं क्षेत्र में लोग गरीबी, बेरोजगारी

1· एटकिन्सन, ई·टी· - बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ - 59·

2· वही

तथा भुखमरी का शिकार हो गये जिसमें प्राकृतिक आपदाओं के कारण और भी वृद्धि हो गई ।

जालौन का राजस्व प्रबन्ध -

1889 ई॰ की एक रिपोर्ट के अनुसार - "यह क्षेत्र लगभग 44 वर्ष पहले अंग्रेजी शासन के अन्तर्गत शामिल किया गया । माधोगढ़ तथा कोंच के परगना 1843 ई॰ में ग्वालियर के बदले दिये गये तथा दिसम्बर, 1860 ई॰ में पूरी तरह ब्रिटिश राज्य में मिला लिये गये । जिले के शेष भाग को जालौन के मराठा सरदार के परिवार के आपसी मतभेद तथा आर्थिक कठिनाइयों के कारण 1839 ई॰ में ब्रिटिश अधिकारी की देख-रेख में दे दिया गया, जिसे स्थायी रूप से 1844 ई॰ में ब्रिटिश राज्य में मिला लिया गया ।"[1]

जालौन क्षेत्र के ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिये जाने के बाद समय-समय पर यहां के राजस्व प्रबन्ध किये गये । पहला प्रबन्ध 1840 ई॰ में तथा दूसरा 1841 ई॰ में कैप्टन दोलन द्वारा किया गया । जिले

1· फिलिप, व्हाईट-फाइनल रिपोर्ट ऑफ दि रिवीजन ऑफ सैटलमेन्ट ऑफ ए सर्टेन पोर्शन ऑफ जालौन डिस्ट्रिक्ट - पृष्ठ-3·

का तीसरा राजस्व प्रबन्ध रोश द्वारा 1846 ई॰ में किया गया । 1841 ई॰ में चिरगांव के जमींदारों के विद्रोही हो जाने के कारण उसे अंग्रेजी शासन में मिला लिया गया । 1843 ई॰ में गरोठा तथा दबोह को झांसी में इस उद्देश्य से शामिल किया गया ताकि अंग्रेजी सेना के लिए आय की व्यवस्था की जा सके । 1844 ई॰ में परगना कछवागढ़ और भान्डेर जो पहले ग्वालियर रियासत में थे, उन्हें कैप्टन रोश की देख-रेख में दे दिया गया ।[1]

अप्रैल, 1849 ई॰ में कैप्टन रोश के उत्तराधिकारी के रूप में कैप्टन एरस्किन ने कार्यभार ग्रहण किया । उसी वर्ष जैतपुर को भी एरस्किन की देख-रेख में दे दिया गया । जालौन जिले का चौथा राजस्व प्रबन्ध 1851 ई॰ में एरस्किन द्वारा किया गया ।[2] 1853 ई॰ में परगना महोबा और जैतपुर को हमीरपुर को दे दिया गया इसके बदले कालपी और कोंच के क्षेत्र जालौन को प्राप्त हुए । कालपी और कोंच का बन्दोबस्त विलियम म्यूर ने 1840-41 ई॰ में तथा 1870-71 ई॰ में किया । 1860-61 ई॰ में कोंच की राजस्व दरें पुनः निर्धारित

1· एटकिन्सन, ई॰टी॰-बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ-213-214·

2· जी॰एल॰लंग का पत्र सं॰ 2975/आई-10 दिनांक 24 जुलाई 1889 फाईनल रिपोर्ट जालौन पृष्ठ-3·

की गई । 1854 ई॰ में जालौन जिले के क्षेत्रफल में पुनः परिवर्तन हुआ क्योंकि मेरठ और चिरगांव और गरौठा के परगने झांसी को दे दिये गये थे । 1856 ई॰ में भान्डेर भी झांसी को दे दिया गया । इससे पहले 1850 ई॰ में कैप्टन एरस्किन ने जालौन के गांवों के आदान-प्रदान के कार्यक्रम में कुछ परिवर्तन किया । उसके द्वारा इस जिले का जो राजस्व प्रबन्ध किया गया वह 1863 ई॰ तक चलता रहा ।[1]

जून, 1857 ई॰ में विद्रोह हुआ तथा सारे रिकार्ड नष्ट कर दिये गये । 1860 ई॰ तक सरकार द्वारा जिले में पुनः शान्ति व्यवस्था स्थापित किये जाने के प्रयास किये जाते रहे तथा लोगों को अस्थायी राहत दिलाने के उद्देश्य से एरस्किन द्वारा निर्धारित राजस्व करों को मैकलीन द्वारा संशोधित किया गया ।[2]

जिले का पांचवां राजस्व प्रबन्ध मेजर टर्नन ﴾ Ternan ﴿ द्वारा किया गया जिसे जुलाई, 1863 ई॰ से लागू किया गया । यह बन्दोबस्त बीस वर्ष की अवधि

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰-बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ 213-214

2. यू॰पी॰ डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जालौन पृष्ठ 188॰

के लिए था, किन्तु यह 1885-86 ई॰ तक चलता रहा ।[1]

अगला राजस्व प्रबन्ध व्हाईट द्वारा किया गया । मेजर टर्नन द्वारा किया गया राजस्व प्रबन्ध 1883 ई॰ में समाप्त होना था । 1881 ई॰ में सरकार द्वारा दिये गये निर्देशों के आधार पर 1883 ई॰ में यह निश्चित करने के लिए कि आर्थिक तथा शासकीय दृष्टिकोण से क्या जालौन क्षेत्र का पुनः बन्दोबस्त आवश्यक है एवं यदि ऐसा है तो किन नियमों के अन्तर्गत यह व्यवस्था लागू की जानी चाहिए, एक जांच की गई । व्हाईट द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट के अनुसार जिले के लिये किसी नये सर्वेक्षण की आवश्यकता नहीं थी तथा जिले का पुनः बन्दोबस्त किया जाना अति आवश्यक था ।[2] ताकि पुराने स्थायी प्रबन्ध की कमियों को दूर किया जा सके । सितम्बर, 1885 ई॰ से व्हाईट द्वारा यह राजस्व प्रबन्ध शुरू किया गया जो 1888 ई॰ मार्च तक पूर्ण किया जा सका ।[3] व्हाईट के इस प्रबन्ध के अन्तर्गत जालौन का पूरा क्षेत्र शामिल

---

1. व्हाईट फिलिप-फाइनल रिपोर्ट ऑफ रिवीजन ऑफ सैटलमेंट ऑफ सरटन पोरशन ऑफ जालौन डिस्ट्रिक्ट इलाहाबाद 1889 पृष्ठ-3.
2. यू॰पी॰डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - जालौन पृष्ठ 189.
3. वही

नहीं था । बल्कि जिले के कुछ भाग शामिल थे, जिसमें उरई का परगना, कालपी तथा माधोगढ़ परगनों के दो तिहाई भाग, कोंच परगना का एक तिहाई क्षेत्र तथा जालौन परगना का यमुना के किनारे का कुछ क्षेत्र छोड़कर शेष भाग शामिल थे । इस प्रकार व्हाईट के इस प्रबन्ध में जिले का लगभग तीन चौथाई क्षेत्र शामिल था ।[1] वे क्षेत्र जो इस बन्दोबस्त के अन्तर्गत नहीं थे उनमें कोंच एव कालपी परगनों के कुछ भाग तथा जगामानपुर, रामपुरा एवं गोपालपुरा की जागीरें शामिल थीं ।[2] कोंच एवं कालपी परगनों का प्रबन्ध विलियम म्यूर द्वारा 1840-41 ई॰ में तीस वर्ष के लिये किया गया था । अतः ये क्षेत्र 1863 ई॰ में मेजर टर्नन के राजस्व प्रबन्ध में शामिल नहीं थे । किन्तु इनमें पुनः राजस्व निर्धारण व्हाईट द्वारा 1873 ई॰ में अगले तीस वर्ष के लिए किया गया जो 1903 ई॰ तक लागू था ।

रामपुरा, गोपालपुरा की रियासतें कछवाहा सरदारों

---

1. व्हाईट फिलिप-फाइनल रिपोर्ट आॅफ रिवीजन आॅफ सैटलमेंट आॅफ सरटन पोरशन आॅफ जालौन डिस्ट्रिक्ट इलाहाबाद 1889 पृष्ठ 389.
2. वही

को जागीर के रूप में प्राप्त थीं, वे कोई राजस्व नहीं देते थे । यह जागीरें राजस्व प्रबन्ध के अन्तर्गत शामिल नहीं थीं ।[1]

1889 ई. की रिपोर्ट के अनुसार व्हाईट के इस राजस्व प्रबन्ध की अवधि निश्चित नहीं थी । व्हाईट के सुझाव के अनुसार उसे 30 जून, 1907 ई. तक लागू किया जाना चाहिए था एवं कोंच और कालपी के राजस्व प्रबन्ध जिसकी अवधि 1903 ई. तक थी उसे भी इसी तिथि तक बढ़ा दिया जाना चाहिए ।[2]

किन्तु 1886-87 ई. की राजस्व दरें असमान रूप से लागू की गई । परगना उरई में राजस्व दर 28.20 प्रतिशत बढ़ा दी गई जबकि जालौन परगना क्षेत्र में इस दर में 17.9 प्रतिशत की वृद्धि की गई । परगनों में उन गांवों को ऋण का अधिक बोझ उठाना पड़ा जिन्हें अच्छी मार भूमि वाले गांव कहा जाता था । जिले में की जाने वाली इस राजस्व वृद्धि के लिए यह उपयुक्त समय नहीं था । कृषि में कमी हो गई थी ।

---

1. व्हाईट फिलिपि-फाइनल रिपोर्ट ऑफ रिवीजन ऑफ सैटलमेंट ऑफ सरटन पोरशन ऑफ जालौन डिस्ट्रिक्ट इलाहाबाद 1889 पृष्ठ 3-4.
2. वही पृष्ठ 10.

जनसंख्या भी कम हो रही थी तथा कांस घास उग आने एवं उसके तेजी से फैलने के कारण कृषि को होने वाली हानि से लोगों की आर्थिक स्थिति बिगड़ रही थी । 1889 ई॰ में कलेक्टर की रिपोर्ट के अनुसार जिले में 21,557/- रूपये की राजस्व वसूली शेष थी । 1891 ई॰ में शेष राजस्व वसूली 45,156/- रू॰ आंकी गई तथा करों में कुछ छूट प्रदान की गई । 1882 ई॰ में स्टील द्वारा तथा 1896 ई॰ में फ्रीमेन्टल द्वारा राजस्व करों में कमी की गई । 1901 ई॰ में पुनः कुछ छूट प्रदान की गई ।[1]

अतः समय-समय पर की जाने वाली राजस्व व्यवस्था की कठोर एवं असमान दरों ने लोगों की आर्थिक स्थिति को प्रभावित किया । 1855 ई॰ में बालमेन ने लिखा था - "गांवों में भूमि की बिक्री तेजी से हो रही थी । ऐसा प्रतीत होता है कि खेती से लोगों को लाभ नहीं हो रहा था । अतः सरकार को कुछ गांवों को अपने नियंत्रण में लेना पड़ा । अधिकांश जमींदार परेशान एवं ऋण से ग्रस्त थे । यदि उनके ऋणदाता उनकी सहायता

---

1. यू॰पी॰ डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - जालौन पृष्ठ-291.

न करें तो वे अपनी भूमि के लिए बीज ही नहीं खरीद सकते थे । केवल जानवरों के अतिरिक्त उनके पास अन्य कोई व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं है ।"[1] उसके अनुसार, "इस जिले का 1/6 भाग खेती की परिधि से बाहर हो गया है । अकाल तथा प्राकृतिक आपदाओं से लोग खेती करना छोड़ रहे हैं । राजस्व की दरों से भी लोगों पर बुरा प्रभाव पड़ा है ।"[2] कैप्टन स्कीने जो 1855 ई॰ में जालौन का सुपरिन्टेन्डेन्ट था, उसने भी इस मत की पुष्टि की है तथा लिखा है - "इस समय इन जिलों में जो बन्दोबस्त चल रहा है उसकी दरें इतनी ऊंची हैं कि उसका दुष्परिणाम जमींदारों पर स्पष्ट दिखाई दे रहा है ।"[3]

इसके पश्चात् व्हाईट द्वारा किये जाने वाले राजस्व प्रबन्ध में भी राजस्व की कठोर दरें रखी गईं । इसके असमान वितरण तथा विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं के कारण लोगों की आर्थिक स्थिति निरन्तर बिगड़ती गई एवं क्षेत्र आर्थिक रूप से पिछड़ गया ।

---

1. एटकिन्सन, ई॰टी॰ - बुन्देलखण्ड गजेटियर पृष्ठ-219
2. वही
3. वही

उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त अन्य अनेक ऐसे कारण थे जिससे 19वीं शताब्दी में बुन्देलखण्ड क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा रहा तथा लोग गरीब हो गये । समय-समय पर पड़ने वाले अकाल, सिंचाई सुविधाओं का अभाव, कांस घास का उग आना इत्यादि कारणों से यहां की कृषि व्यवस्था को गहरा आघात पहुंचा । क्षेत्र में कुटीर उद्योग-धन्धे भी अनेक कारणों से नष्ट हो गये । सम्भवतः क्षेत्र को पिछड़ा बनाये रखने में अंग्रेजी नीति का भी हाथ रहा ।[1] 1857 ई. के विद्रोह में क्षेत्र के लोगों द्वारा सक्रिय भूमिका निभाने के कारण ब्रिटिश सरकार ने यहां के विकास के लिए समुचित ध्यान नहीं दिया । अब केवल कर वसूली में ही उनकी रुचि थी तथा लोगों की भलाई के कार्यों के विकास की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया ।[2] उदाहरण के लिए क्षेत्र में सिंचाई की समुचित व्यवस्था नहीं की गई थी जो सिंचाई योजनाएं कार्यान्वित भी की गई वे कुछ समय के लिए हीं चलीं । इनका मुख्य उद्देश्य भी

---

1. पाठक, एस.पी. - झांसी ड्यूरिंग दि ब्रिटिश रूल पृष्ठ 168-169.
2. वही

कृषि का विकास न होकर कर वसूली ही था ।[1] सरकार द्वारा कृषि विकास के कार्यों को किसी प्रकार का प्रोत्साहन नहीं दिया गया ।[2] नदियों द्वारा भूमि कटाव रोकने के लिए जो योजनाएं चलाई गई थीं उन्हें अधिक खर्च के कारण बन्द कर दिया गया । कांस घास के उन्मूलन सम्बन्धी योजनाओं के कार्यान्वयन में भी यही स्थिति थी । इसी कारण गरीब कृषकों को समय-समय पर आने वाली प्राकृतिक आपदाओं के समक्ष घुटने टेकने पड़े ।[3]

कृषि के अतिरिक्त क्षेत्र में व्यापार की भी यही स्थिति रही । ब्रिटिश सरकार द्वारा स्थानीय व्यापार को अधिक कर लगाकर हतोत्साहित किया गया ।[4] इसके कारण लोग व्यापार छोड़कर कृषि कार्यों को अपनाने को मजबूर हो गये ।[5] लेकिन फिर भी उनकी स्थिति अच्छी न हो सकी । कुटीर उद्योगों के पतन का मुख्य उदाहरण क्षेत्र के खरुआ उद्योग का नष्ट हो जाना था, जो ब्रिटिश शासन के पहले न केवल मऊरानीपुर का प्रसिद्ध

---

1. पाठक, एस·पी·-झांसी ड्यूरिंग दि ब्रिटिश रूल पृष्ठ 168-169·
2. वही
3. वही
4. यू·पी·डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - झांसी पृष्ठ 144·
5. पाठक,एस·पी·-झांसी ड्यूरिंग दि ब्रिटिश रूल पृष्ठ-169

वस्त्र उद्योग था बल्कि इससे क्षेत्र को बहुत लाभ प्राप्त हो रहा था ।[1] धीरे-धीरे झांसी का कालीन उद्योग एरेच का प्रसिद्ध कलात्मक चुनरी उद्योग तथा दूसरे छोटे-छोटे उद्योग धन्धे जो बहुत से लोगों की जीविकोपार्जन का साधन थे, समाप्त हो गये थे ।[2]

शिक्षा तथा साहित्य के क्षेत्र में भी ब्रिटिश सरकार की यही नीति रही । उच्च शिक्षा की व्यवस्था की आवश्यकता पर सरकार द्वारा लम्बे समय तक विचार नहीं किया गया था । इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि झांसी में प्रथम डिग्री कालेज की स्थापना 1949 ई· में हुई ।[3]

आर्थिक दृष्टि से पिछड़ जाने तथा अन्य कठिनाइयों के कारण साधारण जनता की स्थिति बहुत दयनीय हो गई । लोगों के लिये अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति में ही सन्तोष कर लेने के अतिरिक्त कोई चारा न था ।[4] इम्पे की रिपोर्ट के अनुसार

1· पाठक, एस·पी·-झांसी ड्यूरिंग दि ब्रिटिश रूल पृष्ठ 169·

2· वही

3· वही पृष्ठ-170·

4· इम्पे·डब्ल्यू·एच·एल· और मेस्टन,जी·एस·-रिपोर्ट ऑन सैकेन्ड सैटलमेन्ट ऑफ झांसी पृष्ठ 33·

लोगों को सस्ती खरीफ की फसल पर निर्भर करना पड़ता था । अप्रैल तथा मई के महीनों में महुआ का फूल उनके भोजन का मुख्य अंश होता था ।[1]

इन सभी कारणों से तथा ब्रिटिश नीति के परिणामस्वरूप कृषकों में कृषि के प्रति उदासीनता की भावना बढ़ी जिसके कारण वह अधिक निर्धन होते गये । लोगों में अंग्रेजों के प्रति घृणा की भावना बढ़ी। 1862 ई॰ में झांसी के कमिश्नर मेजर पिनकने की मृत्यु पर बनाये गये स्मारक को आज भी लोग "कुत्ते की टोरिया ﴾ Dog's Tomb ﴿" के नाम से पुकारते हैं ।

इस प्रकार ब्रिटिश शासन द्वारा बुन्देलखण्ड में जनता के प्रति शोषण की नीति अपनाई गई । ऐसे में इसाई मिश्नरियों ने लोगों की सहायता करके उनका विश्वास प्राप्त करना चाहा तथा धीरे-धीरे उन्हें इसाई धर्म में परिवर्तित करने का निश्चय किया । 19वीं शताब्दी में ब्रिटिश सरकार ने भी इन मिश्नरियों के प्रति सहयोग की नीति अपनाई ताकि उनके द्वारा किये गये कार्यों के फलस्वरूप वह एक वफादार प्रजा का निर्माण कर सकें जो शासनके स्थायित्व के लिए अति आवश्यक था ।

1· इम्पे·डब्ल्यू·एच·एल· और मेस्टन, जी·एस·-रिपोर्ट ऑन सैकेन्ड सैटलमेंट ऑफ झांसी पृष्ठ 37·

अध्याय तृतीय

मिशनरियों के प्रति ब्रिटिश नीति एवं उद्देश्य

भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना के बाद धीरे-धीरे इसाई मिशनरियों का आगमन प्रारम्भ हो गया था । सम्राट एडवर्ड षष्टम, जिसने भारत के साथ कम्पनी के व्यापार को मंजूरी दी थी, ने सदैव इसाईमत के प्रसार को प्राथमिकता दी । उसके विचार में यह एक ऐसा कार्य था जिसे नाविकों एवं व्यापारियों को भूलना नहीं चाहिए । अपने निर्देशों में सम्राट ने इच्छा व्यक्त की थी कि भारत में व्यापार इसाई धर्म के नियमों के अनुसार ही किया जाना चाहिए । 1660 ई॰ में कम्पनी द्वारा बहुत सी भारतीय भाषाओं में बाइबिल भारत में भेजी गई और यह निर्देश दिया गया कि "जो कोई भी इसके उपदेशों को कंठस्थ करेगा, तुम उसे बढ़ावा देने के लिए दो रूपये दे सकते हो ।" सम्भवतः यह पहला ऐसा कदम था जिसके द्वारा लोगों को

1· दि चर्च मिशनरी इन्टेलीजेन्सर, एक्सट्रेक्टस 1897 - 1904·

इसाई धर्म सिखाने की सार्वजनिक रूप से कम्पनी द्वारा घोषणा की गई थी और धन का लालच देकर भारत में इसाई धर्म को बढ़ावा देने का प्रयास किया गया था । 1698 ई॰ के चार्टर एक्ट के समय ब्रिटिश पार्लियामैन्ट ने कम्पनी के कारखानों तथा इसकी बस्तियों में इंग्लैंड के प्रोटेस्टेन्ट धर्म के प्रसार के लिए व्यवस्था की थी ।[1] इस चार्टर के द्वारा प्रोटेस्टेन्ट धर्म के प्रसार हेतु कम्पनी द्वारा किये जाने वाले प्रयासों से सम्बन्धित नियम भी बनाये गये । 1700 ई॰ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के डायरेक्टरों ने कम्पनी के जहाजों तथा एजेन्टों को लन्दन के धर्माध्यक्ष द्वारा प्रदत्त निर्देश के आधार पर भारत में इसाई धर्म के प्रचार के लिए सुविधायें प्रदान करने के लिए आदेश दिये । सम्राट जार्ज प्रथम ने अपने 23 अगस्त, 1717 के पत्र द्वारा भारत में डेनिश मिशन द्वारा यहां के लोगों को इसाई मत में दीक्षित करने हेतु किये जाने वाले प्रयासों की सराहना की । यह मिशन मद्रास में कार्यरत था और इसे आर्कबिशप ऑफ केन्टरबरी

1· डोडवेल, एम·एच· - दि कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया पृष्ठ - 121·

एवं अंग्रेज गवर्नर का समर्थन प्राप्त था । सन् 1750 ई· में कम्पनी के कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स द्वारा एक प्रसिद्ध मिशनरी सी·एफ·शार्टस एवं उसके दो सहयोगियों को मुफ्त भारत आने की सुविधा प्रदान की गई ।[1] जैसा कि मेजर जनरल जी·हटचिनसन ने लिखा है कि इस समय तक सम्राट अपने पत्र के द्वारा, ब्रिटिश सरकार चार्टर के द्वारा एवं कम्पंनी मिशनरियों को उपलब्ध कराई गई सुविधाओं द्वारा, भारत में मिशनरी कार्य के प्रति अपना समर्थन प्रदर्शित करते हुए एकमत हो रहे थे ।[2] लेकिन इस समय तक इंग्लैण्ड के चर्च द्वारा भारत में मिशनरी कार्यों के प्रति अधिक रूचि नहीं दिखाई गई थी और पूरे भारत में मिशनरी कार्य हेतु दिये जाने वाली राशि £ 80 प्रतिवर्ष से अधिक नहीं थी ।[3]

जब तक ईस्ट इण्डिया कम्पनी भारत में एक व्यापारिक संस्था के रूप में कार्य करती रही, मिशनरियों के प्रति उसका रूख सहानुभूति का रहा लेकिन जब कम्पनी ने भारत की राजनैतिक व्यवस्था में

1· दि चर्च मिशनरी इन्टेलीजेन्सर, एक्सट्रेक्टस 1897 - 1904·

2· वही

3· वही

हस्तक्षेप प्रारम्भ किया, मिशनरियों के प्रति उसका एवं उसके अधिकारियों का व्यवहार उन्हें समर्थन एवं बढ़ावा देने के स्थान पर उदासीनतापूर्ण होता चला गया और धीरे-धीरे इसने विरोध का रूप ले लिया ।[1] सम्भवतः इसका कारण था कि शासक हो जाने पर कम्पनी को अपनी नीतियों में परिवर्तन लाना पड़ा । उसे अब भारत के विभिन्न धर्मों के प्रति सहिष्णुता की नीति अपनाने की आवश्यकता थी ।[2] परिणामस्वरूप सरकार द्वारा इसाई मिशनरियों की उपेक्षा की जाने लगी । सम्भवतः उसे यह डर था कि इसाई मिशनरियों को समर्थन देने से भारतीयों के धर्म विश्वासों एवं भावनाओं को धक्का लगेगा जो उनकी साम्राज्यवाद की नीति को गहरा आघात पहुंचा सकता था । इस समय ईस्ट इण्डिया कम्पनी, ब्रिटिश साम्राज्य के प्रमुख अधिकारी, चर्च के उच्च धर्माधिकारी सभी द्वारा भारत में मिशनरी कार्यों को नापसन्द किया जाने लगा, यहां तक कि इस समय कोई भी मिशनरी

---

1. शर्मा, राज बहादुर - क्रिश्चियन मिशन इन नॉर्थ इण्डिया 1813-1913 पृष्ठ-23.
2. वही

कम्पनी द्वारा प्रदान किये जाने वाली विशेष अनुमति के बिना कम्पनी की भूमि पर कदम नहीं रख सकती थी ।[1] लेकिन आगामी वर्षों में धीरे-धीरे मिशनरी कार्यों को समर्थन प्राप्त होने लगा ।

चार्ल्स ग्रान्ट, जो बाद में ईस्ट इंडिया कम्पनी के इसाई डायरेक्टर के रूप में प्रसिद्ध हुआ, ने ब्रिटिश जनता को भारत में इसाई मिशनरियां भेजने के लिये प्रेरित किया ताकि यहां के लोगों को इसाई बनाया जा सके और उन्हें शिक्षित किया जा सके ।[2] चार्ल्स ग्रांट स्वयं भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सेवा में रह चुका था तथा जब वह कम्पनी की सेवा से निवृत्त हुआ उस समय उसके पास अपार धन था एवं अच्छी पेंशन थी । अतः उसने भारत में इसाईमत के प्रचार को अपने जीवन का प्रमुख उद्देश्य बना लिया था ।[3]

1793 ई॰ के चार्टर एक्ट के समय ग्रान्ट ने

1· शर्मा, राज बहादुर-क्रिश्चियन मिशन इन नार्थ इण्डिया 1813-1913 पृष्ठ 23·

2· वही पृष्ठ 24

3· वही

बिशप विलबरफोर्स को अपने विचारों से प्रभावित कर लिया था जिसके फलस्वरूप 1793 ई. के चार्टर के बिल में दो धारायें रखी गईं जिन्हें मिशनरी धारायें कहा जाता है। इन धाराओं का ब्रिटिश संसद में एवं उसके बाहर तथा भारत में काफी विरोध हुआ।[1] परिणामस्वरूप यद्यपि चार्टर बिल की पहली और दूसरी रीडिंग में इन्हें पास कर दिया गया था, लेकिन तीसरी रीडिंग के समय इन्हें अस्वीकार कर दिया गया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा इन धाराओं को अस्वीकार किये जाने का मुख्य कारण राजनैतिक था। यद्यपि बिशप विलबरफोर्स ने हाउस ऑफ कामन्स में मिशनरी कार्यों के प्रति इस कायरतापूर्ण रवैये की तीखी आलोचना की।[2]

---

2. दि चर्च मिशनरी इन्टेलीजेन्सर, एक्सट्रेक्टस 1897-1904.

1. यह धारायें निम्न थीं -

- "That it is the peculiar and bounden duty of legislature to promote by all just and prudent means the interest and happiness of the British dominions in India and that for these ends such measures ought to be adopted as many gradually tend to their advancement in useful knowledge and to their religion and moral improvement".
- "That sufficient means of religious worship and instruction be provided for all persons of the Protestant Communion in the service or under the protection of the East India Company in Asia, proper ministers having from time to time sent out Great Britain for these purposes".

लेकिन इन विषयों पर यह डर इतना जबरदस्त था कि चार्टर एक्ट पास करते समय यह मानकर कि इन धाराओं से ब्रिटिश सत्ता को खतरा था इन्हें इस एक्ट में शामिल नहीं किया गया ।[1] 1793 ई॰ के एक कानून के अनुसार भारत के गवर्नर जनरल तथा उसकी कौंसिल ने भारतीयों के धार्मिक विश्वासों को यथावत् जारी रखने तथा शास्त्रों एवं कुरान के कानून को यथावत् बनाये रखने का आश्वासन दिया था ।[2] इस में यह भी कहा गया था कि इस देश में सभी प्रभावों और रीति रिवाजों को सहन किया जायेगा तथा पूर्व काल में शासकों दारा जिस धार्मिक उत्तरदायित्व का निर्वाह किया जाता था, उसका निर्वाह यथावत् जारी रखा जायेगा ।[3] मिशनरी धाराओं को 1793 ई॰ के चार्टर एक्ट से हटा दिये जाने के साथ ही एक बात पूरी तरह स्पष्ट हो गई थी कि इस वक्त ब्रिटिश संसद ऐसा कोई भी कदम नहीं उठाना चाहती थी जिससे भारतीयों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचे

---

1. दि चर्च मिशनरी इन्टेलीजेन्सर, एक्सट्रेक्ट्स 1897-1904.
2. दि कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया भाग-6 पृष्ठ - 121.
3. वही

और उसके फलस्वरूप कम्पनी के शासन को कोई खतरा पैदा हो । यद्यपि मिशनरियों के प्रति इस रवैये से मिशनरियों को गहरा दुःख हुआ और उन्होंने सरकार के इस व्यवहार की आलोचना की, किन्तु दूसरी ओर बिलबरफोर्स के प्रयत्नों को विफल करके कम्पनी के डायरेक्टरों एवं संसद में उनके समर्थकों तथा कम्पनी के हिस्सेदारों ने प्रसन्नता व्यक्त की । उनका विचार था कि अपने पूर्वी क्षेत्रों में मिशनरियों को भेजना सबसे अधिक पागलपन से पूर्ण, सबसे अधिक फिजूल और सबसे अधिक खर्चीला किसी पागल व्यक्ति द्वारा दिया गया ऐसा सुझाव था जो न तो लाभप्रद था और न ही राजनैतिक दृष्टि से उचित । यह एक पूर्णतः बेकार खतरनाक एवं नीति के खिलाफ ऐसा विचार था जिससे उनके अधिकृत क्षेत्रों की सुरक्षा एवं शान्ति को खतरा हो सकता था ।[1] अपने इस सशक्त तर्क के साथ कम्पनी के डायरेक्टरों ने प्रेसीडेन्सियों में मिशनरियों और स्कूलों के अध्यापकों

1· बेयर्स, जार्ज· डी· - ब्रिटिश एटीट्यूड टूवार्डस इण्डिया 1784-1858 - पृष्ठ 60·

के कार्यों पर प्रतिबन्ध लगा दिया था ।[1] इस प्रकार न केवल उन्होंने अपने क्षेत्रों में इन मिशनरियों को आने की अनुमति प्रदान करने से इन्कार कर दिया था, बल्कि उन्होंने यह भी कहा कि हिन्दुओं का विश्वास और उनके नैतिक नियम दूसरे लोगों की तरह ही अच्छे हैं और उनके धर्म परिवर्तन के लिए प्रयास करना पागलपन होगा ।[2]

चार्ल्स ग्रान्ट इन सबके बावजूद निराश नहीं हुआ था । 30 मई, 1794 को वह कम्पनी का डायरेक्टर बना दिया गया तथा पुनः 1802 ई॰ में कम्पनी में आया ।[3] इस समय तक उसका प्रभाव काफी बढ़ चुका था । उसने अपने देशवासियों को इस बात के लिए प्रेरित किया कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी पर भारत में मिशनरियों तथा स्कूल अध्यापकों को स्वीकार करने के लिए जोर दिया जाये ताकि यहां की जनता को इसाई धर्म में परिवर्तित किया जा सके ।[4]

1794 ई॰ में ग्रान्ट दारा एक पर्चा प्रकाशित

---

1. आर्थर मेहियू-क्रिश्चनटी एण्ड दि गवर्नमेंट ऑफ इंडिया लन्दन पृष्ठ-17
2. वही
3. शर्मा, आर॰बी॰-क्रिश्चियन मिशन इन नार्थ इंडिया 1813-1913 पृष्ठ- 25॰
4. वही

किया गया । इसका उद्देश्य उन लोगों के तर्क को गलत साबित करना था जो भारत में इसाई मिशनरियां भेजे जाने के विरुद्ध थे । इसका एक अन्य उद्देश्य ईस्ट इण्डिया कम्पनी के लिए बनाये जाने वाले नये चार्टर तक भारत में इन मिशनरियों के लिए अनुकूल परिस्थितियां भी तैयार करना था ।[1] यद्यपि इस पर्चे के कुछ अंश हिन्दू धर्म की नीतियों के विरुद्ध थे किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि चार्ल्स ग्रान्ट किसी भी प्रकार से अपना उद्देश्य प्राप्त करने में सफल होना चाहता था ।[2] लेकिन फिर भी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकारियों द्वारा निरन्तर इन मिशनरियों का विरोध किया जाता रहा । वे मिशनरियां जो भारत में कम्पनी के डायरेक्टरों द्वारा जारी लाइसेन्सों के बिना आ जाती थीं उन्हें ब्रिटिश भारत की भूमि पर उतरने की आज्ञा नहीं दी जाती थी ।[3] ऐसी मिशनरियों को कलकत्ता के निकट सीरमपुर मिशन द्वारा सहायता दी जाती थी । मिशन के स्थानीय इसाईयों को इसाई धर्म के प्रचार की अनुमति इस शर्त पर प्रदान

---

1. शर्मा, आर॰बी॰-क्रिश्चियन मिशन इन नार्थ इण्डिया - 1813-1913॰ पृष्ठ 25॰
2. वही
3. आर्थर मेहियू-क्रिश्चिनटी एण्ड गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया -पृष्ठ 170 तथा क्रिश्चियन मिशन इन नार्थ इण्डिया पृष्ठ - 26॰

की जाती थी कि उनका सरकार से कोई सम्बन्ध न हो ।[1] इस समय भारत में मिशनरियों को देश में असन्तोष के बीज बोने वाली तथा ब्रिटिश सत्ता को चुनौती देने वाली इकाईयां समझा जाता था ।[2] 1806 ई. में सरकार दारा सार्वजनिक सभाओं में उपदेश देने तथा प्रचार से सम्बन्धित पर्चे आदि बांटने पर रोक लगा दी गई थी तथा इसाई धर्म में परिवर्तित करने के लिए किये जा रहे सभी प्रयत्नों यहां तक कि इससे सम्बन्धित घरों में की जाने वाली कोशिशों पर भी रोक लगा दी गई ।[3]

इस प्रकार मिशनरियों के प्रति ब्रिटिश सरकार की नीति कभी उनके समर्थन की थी तथा कभी विरोध की थी । इसलिए समय-समय पर कम्पनी के डायरेक्टरों दारा इस सम्बन्ध में अलग-अलग निर्देश जारी किये जाते रहे । इंग्लैंड में मिशनरियों के प्रति बढ़ते हुए जन-समर्थन को देखते हुए वे इसाई धर्म के प्रचार के विरूद्ध नहीं थे, किन्तु इस प्रचार के लिए ऐसे तरीकों के खिलाफ थे जो दूसरे धर्मों के विरूद्ध भावनाएं भड़काते हों ।[4]

---

1. शर्मा, आर. बी. -क्रिश्चियन मिशन इन नार्थ इण्डिया पृष्ठ 26.
2. वही
3. डोडवैल, एम. एच. -दि कैम्ब्रिज हिस्ट्र आॅफ इंडिया 1964 एंड क्रिश्चियन मिशन इन नार्थ इंडिया पेज 26.
4. आर्थर मेहियू-क्रिश्चिनटी एंड गवर्नमेंट आॅफ इंडिया पृष्ठ 170.

लार्ड मिन्टों द्वारा आगरा में मिशनरी केन्द्र खोले जाने की अनुमति भी 1810 ई॰ में प्रदान की गई थी ।[1]

1813 ई॰ के चार्टर एक्ट के अनुसार मिशनरियों के प्रति ब्रिटिश नीति -

वारेन हेस्टिंग्स तथा कुछ अन्य अधिकारी राजनैतिक कारणों से भारत में मिशनरियां भेजे जाने के विरूद्ध थे । हाउस आफ कामन्स में वाद-विवाद के दौरान बहुत से सदस्यों द्वारा भारत में ब्रिटिश शासन की सफलता के लिए धार्मिक सहनशीलता पर बल दिया गया था । उन्होंने यह चेतावनी दी कि "अगर कभी ऐसा कयामत का दिन आया जब भारत में धर्म के क्षेत्र में हस्तक्षेप किया गया तब हिन्दुस्तान के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक क्रोध व्याप्त हो जायेगा तथा इस भूभाग के पांच करोड़ लोग इस आसानी से हमें बाहर निकाल देंगे जैसे हवा द्वारा रेत का कण-कण बिखेर दिया जाता है ।[2] किन्तु जिस समय इंग्लैंड की पार्लियामेन्ट में 1813 ई॰ का चार्टर प्रस्तुत हुआ उस समय मिशनरियों को भारत भेजने

1· शर्मा, आर॰बी॰-क्रिश्चियन मिशन इन नार्थ इण्डिया पेज 26·

2· कलकत्ता रिवयू भाग XIII जनवरी-जून, 1850 हाउस ऑफ कामन्स में दिये गये एक भाषण के कुछ अंश - बिशप मिड्डलटन का लेख

तथा इसाई मत के प्रसार के लिए इंग्लैंड में जन समर्थन बढ़ रहा था ।[1] उस समय की परिचर्चाओं में यह कहा गया कि मुख्य प्रश्न यह है कि जहां भारतीयों को धार्मिक स्वतंत्रता दी गई है, वहीं हमें इसाई मिशनरियों को धार्मिक स्वतंत्रता देनी पड़ेगी ताकि यदि वे भारत जाकर अपने धर्म का प्रचार करना चाहते हैं तो उन्हें ऐसा करने से वंचित न किया जाये ।[2] इसके अतिरिक्त इसाई मत के 'प्रचार का अर्थ नैतिकता की प्रगति से है और भारत में जहां विधवाओं को जलाने तथा बालिका वध जैसी सामाजिक बुराईयां फैली हुई हैं, वहीं मानवता की रक्षा की दृष्टि से यह और भी आवश्यक हो जाता है कि इसाई मिशनरियां अपने प्रचार माध्यमों द्वारा इन बुराइयों को खत्म कराने के लिए लोगों को प्रेरित करें ।[3] परिणामस्वरूप 1813 ई॰ के चार्टर एक्ट के अनुसार भारत में मिशनरी कार्य के लिए अनुमति प्रदान कर दी गई । इसके अनुसार यह कहा किया कि भारत में ब्रिटिश राज्य के निवासियों के हितों तथा उनकी खुशियों में वृद्धि करना इस देश{इंग्लैंड} का कर्तव्य है तथा इसके लिए ऐसे

---

1. मिल तथा विल्सन - हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इंडिया भाग-7 पृष्ठ 389 से 396 तथा 401.
2. वही
3. वही

तरीके अपनाये जाने चाहिएं जिनसे भारत के लोगों में उपयोगी ज्ञान की वृद्धि हो सके तथा उनके धार्मिक दृष्टिकोण में सुधार हो सके । अतः ब्रिटिश सरकार के उन नियमों को बनाये रखा जाये जिन पर भारत के निवासी अपनी धार्मिक स्वतन्त्रता के लिए निर्भर हैं । इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि वे लोग जो उपरोक्त उद्देश्य के लिए भारत में जाना चाहते हैं अथवा वहां रहना चाहते हैं उन्हें ऐसा करने की अनुमति प्रदान कर दी जाये ।[1] इस चार्टर एक्ट में यह भी व्यवस्था की गई कि ईस्ट इन्डीज तथा उसके भूभागों पर जहां ब्रिटिश राज्य हैं - उसके लिए एक बिशप तथा तीनों प्रेसीडेन्सियों के लिए एक-एक आर्कडिकोन की नियुक्ति की जाये जिनका वेतन £ 5000 बिशप के लिए तथा £ 2000 प्रत्येक आर्कडिकोन के लिए भारत में वसूल किये जाने वाले करों की राशि में से ही दिया जाये ।[2] बिशप के अधिकार और कर्तव्य रायल लैटर्स पेटन्ट द्वारा तय किये जायेंगे । बिशप तथा आर्कडिकोन को 15 वर्ष कार्य करने के बाद पैन्शन देने की व्यवस्था की गई जिसके

---

1. 1813 का चार्टर एक्ट - सैक्शन XXXIII

2. 1813 का चार्टर एक्ट - सैक्शन - XLIX

लिये उन्हें भारत में लगातार रहना होगा ।[1]

इस प्रकार 1813 ई॰ के चार्टर एक्ट में मिशनरियों को भारत आने की सुविधा प्रदान करने के उद्देश्य से तीन महत्वपूर्ण प्रबन्ध किये गये । इसाई धर्म के प्रचार से सम्बन्धित व्यवस्था का निर्माण किया गया । शिक्षा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से वित्तीय नियम बनाये गये तथा इन सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि भारत में मिशनरी कार्यों के लिये द्वार खोल दिये गये । यह चार्टर 10 अप्रैल, 1815 ई॰ से लागू किया गया तथा इसके द्वारा सामान्य व्यक्तियों के लिए भारत का दरवाजा खोल दिया गया । यह मिशनरियों के लिए अत्यन्त हर्ष की बात थी । विलियम हावर्ड रूसल ने मिशनरियों की इस प्रसन्नता को इन शब्दों में व्यक्त किया है - "चर्च के दरवाजों के ताले खोल दिये गये । बाइबल के उपदेशों को इस भूमि के किसी भी कोने में अपने विचारों के साथ लोगों में प्रसारित करने की छूट प्रदान कर दी गई तथा पहली बार हमारी इसाई सरकार ने

1· 1813 का चार्टर एक्ट - सैक्शन LI तथा गिब्बस, एम॰आर॰ - दि एंगिलकन चर्च इन इंडिया ॥1600-1970॥ नई दिल्ली - इन्डियन सोसायटी फार प्रोपगेशन ऑफ क्रिश्चन ।

भारत में इसाई मत के प्रचार का विरोध करना बन्द किया ।"[1]

इस नये चार्टर द्वारा यद्यपि मिशनरियों पर लगाये गये प्रतिबन्धों को हटा लिया गया था किन्तु कुछ अधिकारी चार्टर द्वारा मिशनरियों को प्रदान की जाने वाली इन सुविधाओं के पक्ष में नहीं थे । लेकिन धीरे-धीरे मिशनरी गतिविधियों के विरोध को दबा दिया गया ।[2] अतः कम्पनी के इसाई मत प्रचार सम्बन्धी कार्यों की देख-रेख के लिए एक पादरी कैथरीन को नियुक्त कर दिया गया जिसका वेतन भारत में वसूल की जाने वाली राशि से दिया जाना स्वीकार किया गया । इस नीति के फलस्वरूप भारत में इसाई धर्म के प्रचार के लिए मिशनरियों ने कार्य करना शुरू कर दिया ।

1813 तथा 1857 के मध्य स्थिति -

1813 ई॰ के चार्टर द्वारा मिशनरियों को भारत में जाकर काम करने का अधिकार प्राप्त हो जाने पर

---

1. विलियम हावर्ड रूसल - माई इंडियन मयूटनी डायरी तथा आर॰बी॰शर्मा - क्रिश्चियन मिशन इन नार्थ इण्डिया पृष्ठ- 32॰
2. दि चर्च मिशनरी इंटेलीजेन्सर 1897-1904॰

इंग्लैंड तथा अमेरिका की मिशनरियों ने यह अनुभव किया कि कम्पनी के डायरेक्टर तथा लन्दन में कम्पनी के हिस्सेदार उनके कार्य के लिए अब अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं थे । अब उन्हें भारत सरकार के उच्च अधिकारी, सैनिक अधिकारी तथा छोटे कार्यकर्ताओं के सहयोग की आवश्यकता थी । उन्हें आभास हो चुका था कि ये लोग अगर प्रसन्न रहें तो उनके कार्यों में काफी मदद कर सकते हैं । किन्तु अप्रसन्न हो जाने पर उनके कार्य में हानि भी पहुंचा सकते हैं । अतः मिशनरियों ने इन अधिकारियों का पूरा समर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया ।[1]

इसाई मत के प्रचार के लिए जिन सदस्यों की नियुक्ति की गई थी, उन्हें यद्यपि स्थानीय करों से वसूल की गई धनराशि में से वेतन दिया जाता था किन्तु वे कम्पनी के प्रति नहीं बल्कि इंग्लैंड के चर्च के प्रति उत्तरदायी थे । उनमें से अधिकांश अपने चर्च की मिशनरी गतिविधियों को बढ़ावा देने के इच्छुक

1· शर्मा, आर·बी·-क्रिश्चियन मिशन इन नॉर्थ इंडिया पृष्ठ -33·

थे तथा इन संस्थाओं को उनका पूरा समर्थन प्राप्त था ।[1]

1833 ई॰ तथा 1853 ई॰ में कम्पनी के लिए दो और चार्टर एक्ट पास किये गये । धीरे-धीरे इन उपायों के फलस्वरूप मिशनरी गतिविधियों को बढ़ावा मिला ।[2] 1833 ई॰ के एक्ट के अनुसार गर्वनर जनरल की कौंसिल को समय-समय पर कोर्ट आॅफ डायरेक्टर्स तथा कमिश्नर फाॅर दि अफेयर्स आॅफ इण्डिया की अनुमति से किसी जाति तथा धर्म के लोगों को इंग्लैंड तथा आयरलैंड के यूनाइटेड चर्च अथवा स्काटलैंड चर्च के अनुयायी बनाने में इन प्रार्थना गृहों के लिए धनराशि देने का अधिकार होगा । इस एक्ट की इस धारा का लोगों द्वारा तीव्र विरोध हुआ । उनके विचार में यह नियम इसाई धर्म की शिक्षाओं के अनुसार उचित नहीं था कि स्थानीय लोगों के धन से उन्हें उस धर्म में परिवर्तित किया जाये जिसके कारण वे स्वयं को आवश्यक रूप से गुलाम समझते थे ।[3] यहां तक कि लोग दान धर्म

---

1. शर्मा, आर॰बी॰ - क्रिश्चियन मिशन इन नाॅर्थ इंडिया पेज 33॰
2. वही पृष्ठ 35॰
3. 1833 का चार्टर एक्ट

के कार्यों तथा इन संस्थाओं को भी सन्देह की दृष्टि से देखने लगे ।[1] सर सैय्यद अहमद खां द्वारा यह विचार व्यक्त किया गया कि 1837 ई॰ के अकाल के समय बड़ी संख्या में भूखे अनाथ लोगों को खाना तथा रहने के लिए आश्रय दिया गया तथा बाद में उन्हें इसाई बना लिया गया । लोगों को यह सन्देह होने लगा कि सरकार पहले पूरी जनता को गरीब बना देना चाहती है ताकि उन्हें अपना धर्म परिवर्तन करने के लिए सहमत किया जा सके ।[2] लोग जानते थे कि सरकार द्वारा वेतन देकर इसाई पादरी नियुक्त किये गये हैं तथा उन्हें धर्म से सम्बन्धित साहित्य वितरित करने तथा इसी प्रकार के दूसरे खर्चों के लिए बहुत धन उपलब्ध कराया गया है ।[3] सरकारी अधिकारी अपने अधीन काम करने वालों को अपने निवास स्थान पर आमन्त्रित करते थे जहां इन मिशनरियों को भी इसाई धर्म के प्रचार के लिए बुलाया जाता था । अधिकारियों के भय से इन मिशनरी गतिविधियों के विरुद्ध कोई आवाज नहीं उठायी जाती थी ।[4]

1· दि चार्टर एक्ट ऑफ 1833·

2· सेन, एस·एन·-एटीन फिफ्टी सेवन-प्रकाशन विभाग भारत सरकार 1957·

3· शर्मा, आर·बी·-क्रिश्चियन मिशन इन नार्थ इंडिया पेज 36·

4· वही

1833 ई. के एक्ट के पश्चात् मिशनरी भारत में बड़ी संख्या में आने लगे तथा यहां आकर सरकारी तंत्र तथा शिक्षण संस्थाओं के कार्यों में मदद करने लगे । 1854 ई. की योजना के अन्तर्गत आते-आते उनके द्वारा चलाये जा रहे स्कूल सरकारी सहायता प्राप्त करने योग्य हो गये । जहां कम्पनी के संचालकों का यह मत था कि राजकीय स्कूलों और कालेजों में शिक्षा धर्म निरपेक्ष होनी चाहिए वहीं इन धर्माध्यक्षों ने यह बल दिया कि इन शिक्षण संस्थाओं की लाइब्रेरी में बाइबिल की पुस्तक रखी जानी चाहिए ।[1]

भारत में इसाई मिशनरियों के आगमन तथा भारतीयों में इसाई धर्म के प्रचार के फलस्वरूप जब इस मत को लोग स्वीकार करने लगे उस समय नई समस्याएं पैदा होने लगीं । उदाहरण के लिए हिन्दू धार्मिक नियमों के अनुसार जैसे ही कोई व्यक्ति इस धर्म का त्याग कर इसाई या अन्य कोई मत स्वीकार कर लेता था उस समय उसका पैतृक सम्पत्ति से हिस्सा समाप्त

---

1. दि कैम्ब्रिज हिस्ट्र ऑफ इण्डिया - पार्ट-6 पेज 124.

माना जाता था । फलतः दक्षिण भारत में जहां इसाईयों की संख्या निरन्तर बढ़ रही थी वहां जिन हिन्दू तथा मुसलमानों ने इसाई मत स्वीकार कर लिया उन्हें अपनी पैतृक सम्पत्ति से वंचित होना पड़ा ।[1] अतः 1832 ई॰ में सरकार ने कानून पास कर यह नियम बना दिया कि अब जो कोई भी व्यक्ति इसाई मत स्वीकार करेगा उसे अपनी पैतृक सम्पत्ति से वंचित नहीं होना पड़ेगा । इस कानून का हिन्दू तथा मुसलमानों ने विरोध किया । किन्तु सरकार ने इसकी कोई चिन्ता नहीं की । प्रारम्भ में यह कानून बंगाल प्रेसीडेन्सी तक ही लागू रहा किन्तु 1850 ई॰ में डलहौजी के समय इसको सभी जगह लागू कर दिया गया ।[2] हिन्दू मन्दिरों, पूजा गृहों तथा धार्मिक उत्सवों के समय नियुक्त की जाने वाली पुलिस का अतिरिक्त खर्च सरकारी स्रोत से देने का भी निर्णय किया गया । जबकि इससे पहले यह खर्च उसी धर्म विशेष के लोगों से वसूल किया जाता था ।[3] ऐसी परिस्थिति में

1· दि कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया - पार्ट - 6 पेज 125·

2· वही

3· वही पृष्ठ 126·

हिन्दू तथा मुसलमानों में धर्म के नाम पर असन्तोष बढ़ने लगा । 1857 ई. के विद्रोह के समय "धर्म खतरे में है" का नारा दिया जिससे अंग्रेजी शासन के विरूद्ध भारतीयों में विद्रोह भड़का ।[1]

यद्यपि 1857 ई. के विद्रोह के अनेक कारण थे किन्तु लोगों की धार्मिक भावनाओं को भड़काने में इन इसाई मिशनरियों द्वारा भी योगदान दिया गया । ऐसा माना जाता है कि 1857 ई. का विद्रोह वास्तव में एक धार्मिक क्रान्ति थी । सिपाहियों द्वारा उन निर्देशों को मानने से इन्कार कर दिया गया था जिनसे उनकी धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचती थी । इस विद्रोह का एक कारण भारतीय समाज पर पश्चिमी सभ्यता का बढ़ता हुआ प्रभाव भी था ।[2] उत्तर भारत में बड़ी संख्या में मिशनरियां आ रही थीं । हर क्षेत्र में इनको देखा जा सकता था । स्कूलों में, अस्पतालों में, जेलों में, धार्मिक मेलों में यहां तक कि बाजार में भी यह मिशनरियां दिखाई पड़ती थीं ।

---

1. दि कैम्ब्रिज हिस्ट्री आॅफ इण्डिया पार्ट 6 पृष्ठ -126.
2. बेयर्स, जार्ज डी.-ब्रिटिश एटीट्यूड टूवार्डस इंडिया 1784-1858 लन्दन आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, 1961 पृष्ठ 236.

इन मिशनरियों के कार्यों के फलस्वरूप भारत में हिन्दू तथा इस्लाम दोनों धर्म प्रभावित हुए थे । इसाई धर्म के प्रचार हेतु इन मिशनरियों द्वारा धर्म को आम जनता तक ले जाने के प्रयास में उसे सड़कों पर ले जाया गया तथा इस प्रयास में दूसरे धर्मों की निन्दा भी की गई ।[1]

धर्म प्रचार के उद्देश्य से कभी-कभी गलत तथा भड़काने वाले तथ्यों का प्रचार किया गया । शिक्षा संस्थान धार्मिक शिक्षाओं के प्रचार के केन्द्र बन गये थे[2] तथा मिशनरियों द्वारा दूसरे धर्म प्रचारकों को अपना लक्ष्य बनाया गया ।[3]

इस प्रकार मिशनरियों ने इसाई धर्म के प्रचार का जो तरीका अपनाया उससे लोगों में धार्मिक असुरक्षा की भावना बढ़ी तथा मिशनरियों द्वारा किये गये इस धर्म प्रचार की 1857 ई. के विद्रोह में एक महत्वपूर्ण भूमिका रही ।[4] सरकार की नीतियों के फलस्वरूप मिशनरियों को भारत में धर्म प्रचार का कार्य करने में बहुत सहायता मिली ।[5]

---

1. सेन, एस.एन.-एटीन फिफ्टी सेवन-प्रकाशन विभाग भारत सरकार 1957.
2. दि फ्रैंड ऑफ इंडिया, फरवरी 12, 1857 पृष्ठ 145-146.
3. वही मई 1, 1857 तथा मई 7, 1857.
4. शर्मा, आर.बी.-क्रिश्चियन मिशन इन नॉर्थ इंडिया पृष्ठ 38.

यद्यपि 1857 ई॰ का विद्रोह राजनैतिक कारणों से विफल रहा किन्तु धार्मिक कारणों से यह एक महत्वपूर्ण घटना थी । इंग्लैंड तथा भारत दोनों जगह मिशनरी गतिविधियों की तीव्र आलोचना हुई । 1 नवम्बर, 1858 की घोषणा के अनुसार ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने कम्पनी के हाथ से भारतीय शासन की सत्ता अपने हाथ में ले ली । यह घोषणा पत्र भारतीय प्रजा के लिए धार्मिक समानता के सिद्धान्तों पर आधारित था । इस घोषणा पत्र में कहा गया कि भारतीयों की धार्मिक प्रथाओं तथा विश्वासों में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा । किन्तु 1858 ई॰ के बाद भी भारत में इसाई मिशनरियों का आगमन तेजी से होता रहा तथा धर्म परिवर्तन हेतु उनके प्रयास यथावत् चलते रहे ।

यद्यपि यह घोषणा पत्र धार्मिक निरपेक्षता का घोषणा पत्र कहा जाता है किन्तु वास्तव में जो नीति सरकार द्वारा कार्यान्वित की गई उससे 1857 ई॰ के विद्रोह के बाद भी मिशनरियों को अपनी गतिविधियां बढ़ाने में काफी सहायता मिली ।

1858 ई॰ के बाद मिशनरियों के प्रति ब्रिटिश नीति-

1857 ई॰ के विद्रोह के बाद शान्ति तथा व्यवस्था स्थापित हो जाने के बाद जब विद्रोह के घाव भरने लगे तो मिशनरियों ने अपनी गतिविधियों को फिर से तेज किया । धीरे-धीरे मिशनरियों के प्रति सरकार का रवैया भी बदलकर मित्रतापूर्ण हो गया । 1871 ई॰ में सरकार द्वारा मिशनरियों के कार्यों की सराहना की गई तथा यह स्वीकार किया गया कि विभिन्न मिशनों द्वारा लोगों की सेवा के कारण भारत की सरकार उनकी आभारी है ।[1] इस प्रकार 1858 ई॰ के बाद ब्रिटिश सरकार द्वारा मिशनरियों के साथ सहयोगपूर्ण नीति अपनाई गई । समय बीतने के साथ-साथ सरकार का यह दृष्टिकोण भी अधिक सशक्त होता गया । कभी-कभी सरकार द्वारा मिशनों को अपने राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रयोग किया जाता था ।[2] मेजर जनरल जी॰ हटचिंग्सन के अनुसार - "यह

1· दि चर्च मिशनरी इंटेलीजेन्सर तथा
शर्मा, आर॰ बी॰ -क्रिश्चियन मिशन इन नॉर्थ इंडिया पेज 42

2· वही पृष्ठ 42·

कहा जा सकता है कि भारत में यद्यपि मिशनरियों द्वारा बहुत से ऐसे कार्य भी किये जाते थे जिन्हें सरकार के आन्तरिक प्रशासन में हस्तक्षेप माना जा सकता था किन्तु फिर भी अन्त में उनके इन कार्यों को सरकार द्वारा स्वीकृति प्रदान कर दी जाती थी । इन मिशनरियों द्वारा कभी भी, सरकार की प्रार्थना के अतिरिक्त राजनैतिक कार्यों में हस्तक्षेप नहीं किया गया ।"[1]

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि 1813 ई. के चार्टर एक्ट के पूर्व भारत में आने वाली मिशनरियों को कम्पनी का समर्थन प्राप्त नहीं था । किन्तु इस चार्टर द्वारा मिशनरियों को इसाई धर्म के प्रचार के लिए सुविधाएं प्रदान की गईं जिनमें धीरे-धीरे वृद्धि होती रही । इसी के साथ-साथ भारत में मिशनरियों की संख्या बढ़ती रही तथा इसाई धर्म के प्रचार एवं मिशनरियों द्वारा किये गये अन्य कार्यों से देश में इसाई धर्म का विकास हुआ । इनके प्रयासों के फलस्वरूप शिक्षा तथा चिकित्सा के क्षेत्र में विशेष उन्नति हुई । इस प्रकार 1813 ई. को भारत में मिशनरियों के आगमन का वर्ष कहा जा सकता है ।

---

1. शर्मा, आर. बी. -क्रिश्चियन मिशन इन नॉर्थ इंडिया पेज-43 तथा दि चर्च मिशनरी इंटेलीजेन्सर.

अध्याय चतुर्थ

क्वेकर आन्दोलन तथा
भारत में अमेरिकन मिशनरियों का आगमन

1813 ई· के चार्टर द्वारा भारत में मिशनरियों को आने की सुविधायें दे दी गई थीं । भारत में अमेरिकन मिशनरियों की गतिविधियों का प्रारम्भ भी 1813 ई· से ही माना जा सकता है । जून 1812 ई में कुछ मिशनरियां भारत आई किन्तु तब उन्हें देश छोड़ने के लिए कहा गया । 1813 ई· के ब्रिटिश चार्टर के पास हो जाने पर इंग्लैंड में हुई इसकी प्रतिक्रिया पर अमेरिका में भी ध्यानपूर्वक विचार किया गया तथा वहां के धार्मिक पत्रों में इंग्लैंड की पार्लियामेंट के भाषण प्रकाशित किये गये । फलस्वरूप विदेशों में मिशन भेजे जाने में अमेरिका की रूचि भी बढ़ने लगी ।[1]

1813 ई· के बाद अमेरिकन प्रोटेस्टेन्ट मिशनरियों द्वारा भारत में इसाई धर्म के प्रचार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किये गये । सर्वप्रथम इस कार्य के लिए छः मिशनरियों ने भारत आने का निश्चय किया और उनके

1· एस·एम·पाठक – अमेरिकन मिशनरीज़ एंड हिन्दुईज्म पृष्ठ 25·

बाद कई अन्य अमेरिकन मिशनरियां भारत आयीं । परिणामस्वरूप 1910 ई. में लगभग 1800 अमेरिकन प्रोटेस्टेन्ट मिशनरियां भारत में कार्यरत थीं ।[1] वे मिशनरियां जो इसाई धर्म प्रचार के उद्देश्य से भारत आई थीं उन्होंने स्कूल कालेजों की स्थापना करके शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया । धीरे-धीरे उन्होंने भिन्न-भिन्न क्षेत्रों को अपनी गतिविधियों का केन्द्र बनाया और अनेक प्रकार से यहां के लोगों की सेवा की । अस्पताल, दवाखाने, अनाथालय इत्यादि खोलकर उन्होंने लोगों के कष्ट कम करने की कोशिश की । अमेरिका से आने वाली महिला मिशनरियों द्वारा स्त्रियों की उन्नति में विशेष रूचि दिखाई गई । इस प्रकार अपने कार्यों द्वारा उन्होंने भारत के लोगों को पश्चिमी सभ्यता के प्रति आकर्षित किया । उन्होंने ब्रिटिश मिशनरियों की भांति ही भारत में इसाई मत के प्रचार में योगदान दिया ।[2]

27 जून, 1810 को ब्रेडफोर्ड में माशाचुटस

---

1. अमेरिकन बोर्ड "सेन्टीनरी ऑफ अमेरिका" क्रिश्चियन कनेक्शन विद इंडिया वार्षिक रिपोर्ट 1913 पृष्ठ139
2. पाठक, एस.एम.–अमेरिकन मिशनरीज एंड हिन्दुइज्म पृष्ठ 26.

की जनरल एसोसिएशन द्वारा विदेशी मिशनों के लिए अमेरिकन बोर्ड ऑफ कमिश्नरस की स्थापना की गई ।[1] इस बोर्ड की स्थापना का उद्देश्य यह था कि इसाई धर्म के उपदेशों के प्रचार के लिए ऐसे उपाय खोजे जायें जिनकी सहायता से इस धर्म से अनभिज्ञ लोगों में इसका प्रचार किया जा सके । जैसे ही इस बोर्ड की स्थापना हुई अनेक संस्थाओं एवं व्यक्तियों द्वारा इसके विकास में रूचि दिखाई गई और इसे आर्थिक सहायता दी गई । सितम्बर, 1811 तथा 20 जून, 1812 को होने वाली बोर्ड की वार्षिक बैठकों के बीच के अल्प समय में ही बोर्ड के पास $ 12000 से अधिक धन एकत्र हो गया था जिसमें से $ 7000 की धनराशि चार व्यक्तियों ने दान में दी थी तथा लगभग $ 4000 विभिन्न संस्थाओं द्वारा उपलब्ध कराये गये थे ।[2] अमेरिका के लोगों द्वारा बोर्ड को दी जाने वाली इस महत्वपूर्ण आर्थिक सहायता के फलस्वरूप ही बोर्ड द्वारा भारत में मिशनरियां भेजने का फैसला किया जा सका ।[3]

---

1. अमेरिकन बोर्ड-प्रथम दस वार्षिक रिपोर्ट्स पृष्ठ 35-36.
2. वही
3. वही

अमेरिका द्वारा सर्वप्रथम मिशनरियों का जो दल भारत भेजा गया उसमें सेमुअल नीवल, एडमिरम जुडसन तथा उनकी पत्नियां थीं । मिशनरियों का यह दल जून 17, 1812 को कलकत्ता पहुंचा जहां मिशनरियों के प्रति कम्पनी के विरोधी रवैये के कारण उन्हें बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा । जिस जहाज द्वारा वे कलकत्ता पहुंचे थे उसी जहाज द्वारा उन्हें वापिस अमेरिका लौट जाने का निर्देश दिया गया । उन्हें वापिस ले जाने के लिए जहाज को भी कुछ समय तक बन्दरगाह में रोक लिया गया ।[1] ऐसे में सीरमपुर की बैपटिस्ट मिशनरियों द्वारा उनकी सहायता की गई । इन मिशनरियों ने कम्पनी सरकार को उनकी तरफ से मिशनरी कार्य करने हेतु आवेदन भी किया ।[2] परिणामस्वरूप उनके विरूद्ध पारित किये गये निर्देशों में कुछ ढील दे दी गई तथा उन्हें यह आदेश दिया गया कि वे कलकत्ता से किसी भी ऐसे स्थान पर जा सकते हैं जो ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकार क्षेत्र में न हो ।[3] यद्यपि अमेरिकन बोर्ड द्वारा मिशन

---

1. अमेरिकन बोर्ड - प्रथम दस वार्षिक रिपोर्टस पृष्ठ-59.
2. वही
3. वही

कार्यों के लिए बर्मा को उपयुक्त स्थान माना गया था क्योंकि यह क्षेत्र ब्रिटिश मिशनरी गतिविधियों के बाहर था ।[1] किन्तु बोर्ड द्वारा अन्तिम निर्णय इन मिशनरियों पर ही छोड़ दिया गया था । कलकत्ता में ब्रिटिश मिशनरियों द्वारा इन मिशनरियों को यह परामर्श दिया गया कि वे बर्मा में अपने श्रम को व्यर्थ न करें क्योंकि वहां हालात राजनैतिक दृष्टिकोण से इन कार्यों के अनुकूल नहीं थे । अतः नीवल कलकत्ता छोड़कर आइजोल ऑफ फ्रांस चले गये जहां उन्होंने मिशन केन्द्र स्थापित किया ।[2]

मिशनरियों का दूसरा दल जिसमें हाल ﴾ Hall ﴿ नौट ﴾ Nott ﴿ तथा राइस ﴾ Rice ﴿ नामक मिशनरी थे, 8 अगस्त, 1812 को कलकत्ता पहुंचा । अमेरिकन मिशनरियों के प्रथम दल को जिन परेशानियों का सामना करना पड़ा था, दूसरे दल के इन मिशनरियों के सम्मुख भी वही परेशानियां थीं ।[3] किन्तु उन्हें कलकत्ता में कुछ महीने रहने की अनुमति दे दी गई थी । वहां प्राप्त जानकारी के आधार पर उन्होंने बम्बई में मिशन

1· अमेरिकन बोर्ड प्रथम दस वार्षिक रिपोर्टस पृष्ठ 24·

2· वही पृष्ठ 64·

3· वही पृष्ठ 59·

केन्द्र स्थापित करने का निर्णय किया जिसके लिए वे 11 फरवरी, 1813 को बम्बई पहुंचे ।[1] यहां उन्हें और भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा । उन पर गुप्तचर होने का सन्देह किया गया तथा उन्हें वापिस जाने का निर्देश दे दिया गया । उन्होंने गवर्नर सर ईवान नेपियन को एक आवेदन पत्र प्रस्तुत किया जिसमें उन्हें बाइबल के उपदेशों के प्रचार का पवित्र कार्य करने की अनुमति प्रदान करने की प्रार्थना की गई । गवर्नर को दिये गये इस प्रार्थना-पत्र के फलस्वरूप उन्हें वहां कुछ समय के लिए कार्य करने की अनुमति दे दी गई । लगभग एक वर्ष बाद जब 1813 ई· के चार्टर एक्ट में मिशनरी कार्यों से सम्बन्धित नियम पास किये जाने के परिणामस्वरूप मिशनरी गतिविधियों पर लगाई गई रोक सरकारी तौर पर हटा ली गई तब इन मिशनरियों को स्थायी रूप से अपना कार्य करने की अनुमति दे दी गई ।[3]

इसी वर्ष नीवल जो मिशन कार्य के लिए फ्रांस

1· अमेरिकन बोर्ड "प्रथम दस वार्षिक रिपोर्टस" पृष्ठ-81

2· वही पृष्ठ 92-93·

3· वही पृष्ठ 120

गये थे, बम्बई आकर इन मिशनरियों से मिले तथा इस प्रकार भारत भूमि पर पहला अमेरिकी मिशन केन्द्र स्थापित हुआ । जुडसन तथा राइस जो मिशनरी कार्यों के लिए प्रथम अमेरिकी दल में भारत आये थे उन्होंने बर्मा में अमेरिकन बैपटिस्ट मिशन के केन्द्र की स्थापना की । जुडसन ने जुलाई, 1813 से लेकर 1850 तक रंगून में स्थापित इस मिशन केन्द्र के लिए कार्य किया । राइस के प्रयासों के फलस्वरूप अमेरिकन बैपटिस्ट लोगों द्वारा बर्मा में जुडसन द्वारा स्थापित मिशन केन्द्रों को समर्थन प्राप्त हुआ तथा धीरे-धीरे बैपटिस्ट मिशन के अन्य केन्द्र भी बर्मा तथा भारत में स्थापित किये गये ।[1]

अमेरिकन मिशनरियों द्वारा बम्बई में प्रथम मिशन केन्द्र स्थापित किया गया था । इन मिशनरियों ने मराठी भाषा का ज्ञान प्राप्त करके 1815 ई० से इसाई मत का प्रचार कार्य शुरू कर दिया ।[2] उन्होंने स्थानीय भाषा में बाइबल के अनुवाद का कार्य भी प्रारम्भ किया ।[3] इसाई धर्म की शिक्षाओं के प्रचार तथा

---

1. पाठक, एस० एम० -अमेरिकन मिशनरीज़ एंड हिन्दुइज्म पृष्ठ 38.
2. वही
3. वही

प्रसार के उद्देश्य से इन मिशनरियों द्वारा स्कूल खोले गये तथा एक छापाखाना भी खोला गया । 1827 ई॰ तक भारत में बम्बई मिशन ही एकमात्र अमेरिकन मिशन था । तीस के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में इस मिशन द्वारा अहमदनगर में अपना दूसरा केन्द्र स्थापित किया गया तथा एक चर्च की स्थापना की गई ।[1] 1830 ई॰ तक मिशन का कार्य एक नई शक्ति से किया जाने लगा । मिशनरियों की संख्या धीरे-धीरे बढ़ने लगी तथा बम्बई और अहमदनगर में स्थापित इन अमेरिकन मिशन केन्द्रों द्वारा धार्मिक तथा शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान के लिए स्वयं को पूरी तरह तैयार कर लिया गया ।[2]

1830 ई॰ के बाद भारत में बड़ी संख्या में अमेरिकन मिशनरियां आने लगीं । विदेशी मिशनों के लिए बनाये गये अमेरिकन बोर्ड ऑफ कमिश्नरस द्वारा किये गये मार्गदर्शन पर अमेरिका की दूसरी मिशनरी संस्थाओं ने भारत में मिशनरी कार्यों में रुचि लेनी शुरू की । 1833 ई॰ में अमेरिका के प्रेसबिटेरियन

---

1. अमेरिकन बोर्ड वार्षिक रिपोर्ट 1833 पृष्ठ 54-56.
2. वही

बोर्ड ऑफ फारेन मिशन्स, जिसकी स्थापना इसी वर्ष हुई थी, द्वारा भारत में अपने प्रथम दल के सदस्यों के रूप में जॉन सी·लोरी तथा विलियम रीड को मिशनरी कार्य प्रारम्भ करने के लिए भेजा गया । कलकत्ता पहुंच कर इन मिशनरियों द्वारा पंजाब में अपना मिशन केन्द्र स्थापित करने की योजना बनाई गई जहां अभी तक दूसरे इसाई मिशनों की स्थापना नहीं हुई थी ।[1] यहां की अच्छी जलवायु तथा घनी आबादी के कारण भी यह मिशनरियां इस क्षेत्र में अपना केन्द्र स्थापित करने के लिए प्रभावित हुईं ।[2] इसके अतिरिक्त पंजाब प्रान्त के महत्वपूर्ण शहरों में अंग्रेजी भाषा की उन्नति एवं ज्ञान के लिए आन्दोलन चलाया जा रहा था जिसके कारण ये मिशनरी अंग्रेजी भाषा के प्रचार एवं उन्नति के माध्यम से इस क्षेत्र में इसाई धर्म की शिक्षाओं का प्रचार करने के लिए प्रेरित हुए ।[3]

इस प्रकार प्रेसबिटेरियन चर्च के इन मिशनरियों द्वारा लुधियाना में पहला अमेरिकन प्रेसबिटेरियन मिशन स्थापित किया गया जो इस प्रान्त में भी पहला प्रोटस्टेन्ट

1· पाठक, एस·एम·-अमेरिकन मिशनरीज एंड हिन्दुइज्म पृष्ठ -38· तथा
जॉन सी·लौरी - टू इयर्स इन अपर इंडिया पृष्ठ 45·

2· वही

3· वही

मिशन था ।[1] धीरे-धीरे उत्तर-पश्चिमी प्रान्तों तथा पंजाब में प्रेसबिटेरियन मिशन केन्द्रों की संख्या बढ़ती गई । 1870 ई॰ तक पूर्व में इलाहाबाद से लेकर पश्चिम में पेशावर तक इन मिशन केन्द्रों का जाल सा फैल गया था । लुधियाना मिशन के केन्द्र लुधियाना, सहारनपुर सबाथु, लाहौर, रावलपिन्डी, पेशावर, जालन्धर, अम्बाला, देहरादून तथा रुड़की में थे जबकि उनके फर्रुखाबाद मिशन के केन्द्र इलाहाबाद, फतेहगढ़, इटावा तथा मैनपुरी में स्थित थे ।[2] इनके द्वारा बम्बई प्रेसीडेन्सी के कोल्हापुर में भी मिशन केन्द्र की स्थापना की गई ।[3]

यूनाइटेड प्रेसबिटेरियन चर्च द्वारा भारत में मिशनरी कार्यों के लिए 1855 ई॰ में एन्ड्रयू गोरडन को भेजा गया जिसने पंजाब क्षेत्र में कार्य करने का फैसला किया तथा सियालकोट और गुजरांवाला में मिशन केन्द्र खोले ।[4] इस प्रकार पंजाब प्रांत में अमेरिकन प्रेसबिटेरियन तथा चर्च मिशनरी सोसायटी द्वारा अनेक मिशन केन्द्रों की

---

1. पाठक, एस॰एम॰-अमेरिकन मिशनरीज एंड हिन्दुइज्म पेज 38॰
2. वही
3. वही
4. एंड्रयू गोरडन-अवर इंडिया मिशन, ए थर्टी ईयर हिस्ट्री ऑफ दि इंडियन मिशन ऑफ दि यूनाइटेड प्रेसबिटेरियन चर्च पृष्ठ 126॰

स्थापना की गई ।[1] बर्मा में कार्यरत अमेरिकन बैपटिस्ट मिशनरियों द्वारा भी भारत में कुछ मिशन केन्द्र खोले गये । 1835 ई. में एक ब्रिटिश मिशनरी द्वारा मद्रास प्रेसीडेंसी के तेलगूभाषी क्षेत्रों की तरफ उनका ध्यान आकर्षित किया गया । मद्रास प्रेसीडेंसी का यह तेलगूभाषी क्षेत्र अभी तक मिशन कार्यों के लिए अछूता पड़ा था । अतः इसाई धर्म के प्रचार के लिए इसे उपयुक्त पाया गया । फलतः 1835 ई. में बैपटिस्ट मिशन के दो मिशनरी सेमुअल एस. डे. तथा ई. आई. अबोट इस क्षेत्र में मिशन केन्द्र स्थापित करने के लिए बोस्टन से रवाना हुए ।[2] कलकत्ता पहुंचने पर अबोट को बर्मा मिशन में कार्य करने के लिए भेज दिया गया तथा डे को मद्रास के तेलगूभाषी क्षेत्रों में बैपटिस्ट मिशन केन्द्र खोलने के लिए भेजा गया । 1840 ई. में मद्रास से लगभग 110 मील उत्तर में नेलोर में इस मिशन केन्द्र की स्थापना की गई । लगभग 25 वर्षों तक इस क्षेत्र में बैपटिस्ट मिशन का यह एकमात्र केन्द्र था, जो

---

1. पाठक, एस. एम. - अमेरिकन मिशनरीज एंड हिन्दुइज्म पृष्ठ 39.

2. वही

बहुत प्रसिद्ध हुआ ।[1]

इसी दशक में आसाम की पहाड़ी जातियों की ओर भी अमेरिकन बैपटिस्ट फारेन मिशनरी यूनियन का ध्यान आकर्षित हुआ । आसाम के कमिश्नर कैप्टन फ्रान्सिस जेनकिन्स ने बर्मा स्थित मिशन से आसाम क्षेत्र में मिशनरी कार्यों के लिए कुछ मिशनरियों को भेजने का आग्रह किया । बैपटिस्ट फारेन मिशनरी यूनियन द्वारा यह निमन्त्रण स्वीकार कर लिया गया और उन्होंने नाथन ब्राउन तथा ओलीवर टी·कटर को 1835 ई· में आसाम में प्रथम मिशनरी दल के रूप में भेजा । 23 मार्च, 1836 को आसाम पहुंचने पर कैप्टन जेनकिन्स द्वारा उनका स्वागत किया गया ।[2]

आसाम में धीरे-धीरे अमेरिकन बैपटिस्ट मिशन के अनेक केन्द्र खोले गये । 1840 ई· में ब्रह्मपुत्र घाटी में सिबसागर, नौगांव तथा गुवाहाटी में मिशन केन्द्र खोले गये थे । 1870 ई· के बाद आसाम की जनजातियों

1· पाठक, एस·एम·–अमेरिकन मिशनरीज एण्ड हिन्दुइज्म पृष्ठ 40·

2· वही

में शिक्षा के विकास के क्षेत्र में वास्तव में इन मिशन केन्द्रों द्वारा महत्वपूर्ण योगदान दिया गया ।

1840 ई. के बाद अमेरिकन प्रोटेस्टेन्ट मिशनरियों की संख्या में और वृद्धि हुई । बम्बई तथा मद्रास प्रेसीडेन्सियों में अमेरिकन बोर्ड ऑफ कमिश्नरस फॉर फारेन मिशन्स द्वारा स्थापित मिशन केन्द्रों का जाल सा बिछ गया था । इसके द्वारा बम्बई, अहमदनगर, सिरूर, सतारा, राहोरी तथा शोलापुर में और मद्रास प्रेसीडेंसी में मद्रास, मदुरा, डिन्डीगुल, पासुमलाई, कोडायीकनाल तथा तिरूमंगलम में मिशन केन्द्र स्थापित किये गये ।[1]

अमेरिका की कुछ अन्य मिशनरी संस्थाओं ने भी भारत में मिशनरी कार्य के लिए केन्द्र स्थापित किये । 1841 ई. में मद्रास प्रेसीडेन्सी के तेलगू भाषी केन्द्र गुन्टूर में अमेरिका के लूथरेन चर्च के मिशनरी सी.एफ.हेयर (C. F. Heyer) द्वारा मिशन केन्द्र खोला गया ।[2] लगभग दस वर्षों बाद राजामुन्द्री स्थित जर्मन मिशनरियों द्वारा चलाये जा रहे मिशन केन्द्र का

---

1. अमेरिकन बोर्ड, एन्यूल रिपोर्ट 1860 पृष्ठ 89-97 तथा पृष्ठ 99-107.
2. पाठक, एस.एम.- अमेरिकन मिशनरीज एंड हिन्दुइज्म पृष्ठ - 41.

कार्य गुन्टूर के अमेरिकन लूथेरन चर्च के मिशनरियों को सौंप दिया गया।[1] इसी दशक में अमेरिका के डच रिफारमड चर्च के मिशनरियों द्वारा अर्काट में मिशन केन्द्र की स्थापना कर मिशनरी कार्य आरम्भ किया गया।[2]

इन मिशनरियों के अतिरिक्त मेथोडिस्ट एपीस्कोपल चर्च की मिशनरी सोसाइटी ने 1850 ई॰ में भारत में मिशनरी कार्य प्रारम्भ करके इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस चर्च के प्रथम मिशनरी विलियम बटलर द्वारा बरेली (उ॰प्र॰) में मिशन केन्द्र की स्थापना की गई। यह केन्द्र 1857 ई॰ के विद्रोह के कुछ समय पूर्व ही स्थापित किया गया था। विद्रोह के कारण कुछ समय तक इस मिशन के कार्य में बाधा पड़ी किन्तु पुनः शान्ति स्थापित हो जाने पर अमेरिकन मेथोडिस्ट मिशन के केन्द्रों की संख्या बढ़ी[3] और अगले दस वर्षों में उत्तर पश्चिमी प्रान्त के मुख्य शहरों जैसे लखनऊ, मुरादाबाद, शाहजहांपुर, गोंडा, बिजनौर, सीतापुर

---

1. पाठक, एस॰एम॰--अमेरिकन मिशनरीज एंड हिन्दुइज्म पृष्ठ 41॰
2. अमेरिकन बोर्ड एन्युल रिपोर्ट, 1851 पृष्ठ 103॰
3. पाठक, एस॰एम॰ - पृष्ठ 41॰

हरदोई तथा नैनीताल में इस मिशन की शाखाएं खोल दी गईं ।[1] इन मिशनों द्वारा इसाई धर्म के प्रचार के साथ-साथ शिक्षा तथा भलाई के अन्य कार्य भी किये जाते थे ।[2]

अमेरिका के यूनीटेरियन चर्च के मिशनरियों तथा फ्रेन्डस मिशन के मिशनरियों द्वारा भी भारत में मिशनरी कार्य किया गया । 1855 ई· में यूनिटेरियन चर्च की ओर से भारत में प्रथम मिशनरी सी·एच·ए·डल कलकत्ता पहुंचे जहां उन्होंने 1886 ई· तक धार्मिक तथा शिक्षा सम्बन्धी महत्वपूर्ण कार्य क़िया ।[3]

अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की मिशनरियों द्वारा भी भारत में मिशनरी कार्य के लिए रूचि दिखाई गई । 1869 ई· में उन्होंने जबलपुर (मध्य भारत) में अपना मुख्य मिशन केन्द्र खोलकर अपने कार्य का प्रारम्भ किया ।[4] बुन्देलखण्ड क्षेत्र में भी अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन के मिशनरियों द्वारा प्रमुख मिशनरी कार्य किये गये जिनका विस्तृत अध्ययन हम अगले अध्याय में करेंगे ।

1· बारकले, डब्ल्यू·सी·-हिस्ट्री ऑफ मेथोडिस्ट मिशन्स भाग-II पृष्ठ 455·

2· वही

3· हेवुड, जॉन एच·-अवर इंडिया मिशन एंड अवर फर्स्ट मिशनरी 1887 पृष्ठ-1·

4· होर्स जी·एलेक्जेन्डर-कवेकरिजम एंड इंडिया-1945 पृष्ठ-8

इस प्रकार भारत में विभिन्न मिशनरी संस्थाओं ने अपने मिशन केन्द्र स्थापित करके यहां के लोगों में इसाई धर्म का प्रचार किया । इसके साथ-साथ उन्हें शिक्षा और चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध कराने में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया । अमेरिका की इन मिशनरियों द्वारा किये गये कार्यों की सराहना करते हुए एक ब्रिटिश मिशनरी ने लिखा है - "उनके मिशन सुसंगठित हैं तथा उनके कार्य बड़े उत्साहपूर्वक एवं योग्यता से किये जाते हैं । उनकी तुलना सबसे अच्छे ब्रिटिश मिशनों से की जा सकती है । यह कहना कठिन प्रतीत होता है कि कौन सी अमेरिकन मिशनरी सोसाइटी का कार्य दूसरी ऐसी सोसायटी से अच्छा है क्योंकि सभी इस कार्य में बहुत कुशलता का परिचय देते हैं ।" [1]

बुन्देलखण्ड में अमेरिकी मिशनरियों का आगमन

बुन्देलखण्ड क्षेत्र के बारे में हम पिछले

1· रिव·एम·ए·शैरिंग-दि हिस्ट्री ऑफ प्रोटेस्टेन्ट मिशनज इन इंडिया 1706-1880 पृष्ठ-185·
तथा
पाठक, एस·एम·-अमेरिकन मिशनरीज एंड हिन्दुज्म पृष्ठ-43·

अध्यायों में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर चुके हैं ।[1] इस क्षेत्र में आने वाली मिशनरियां मुख्यतः फ्रेन्डस फॉरेन मिशनरी सोसायटी, ओहियो ईयरली मीटिंग से सम्बन्धित थीं । ओहियो ईयरली मीटिंग के सदस्यों द्वारा मिशनरी कार्यों के लिए समय समय पर भारत में मिशनरियों को भेजा गया । बुन्देलखण्ड में इन मिशनरियों ने सर्वप्रथम नौगांव छावनी को अपना केन्द्र बनाया । 1896 ई॰ में बुन्देलखण्ड के नौगांव क्षेत्र में अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की स्थापना की गई । आगामी वर्षों में इस मिशन द्वारा इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किये गये जिनका विवेचन हम अगले अध्याय में करेंगे ।

यह मिशनरी क्वेकर फ्रेन्डस क्यों कहलाते थे ? इनकी पृष्ठभूमि क्या रही ? इंग्लैंड एवं अमेरिका में होने वाले क्वेकर आन्दोलन से यह किस प्रकार सम्बन्धित थे एवं इस आन्दोलन का मिशनरी गतिविधियों पर क्या प्रभाव पड़ा। यह जानने के लिए आवश्यक होगा कि इंग्लैंड एवं अमेरिका में होने वाले क्वेकर आन्दोलन

1· देखिये अध्याय 1 एवं 2·

का संक्षिप्त विवेचन कर लिया जाये ।

कवेकर आन्दोलन

सोसाइटी ऑफ फ्रेन्डस कवेकर लोगों की धार्मिक संस्था थी जिसकी स्थापना लगभग सत्रवहीं शताब्दी के मध्य हुई । जार्ज फॉक्स को एक महत्वपूर्ण कवेकर नेता माना जाता है किन्तु उसे सोसायटी ऑफ फ्रेन्डस का संस्थापक नहीं कहा जा सकता । यह कहना अनुचित न होगा कि जार्ज फॉक्स द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों एवं नियमों के अधिक से अधिक लोगों द्वारा स्वीकार कर लिए जाने के फलस्वरूप, जिनके कारण उन्होंने स्वयं को ईश्वर के अधिक समीप पाया, इस सोसायटी की स्थापना स्वयं ही हुई ।[1]

जार्ज फॉक्स का जन्म 1624 ई० में एक जुलाहा परिवार में हुआ । उस शताब्दी के अनेक अन्य व्यक्तियों की तरह ही फॉक्स ने मनुष्य एवं ईश्वर के सम्बन्धों का अध्ययन किया एवं उन साधनों को जानने की चेष्टा की जिनके द्वारा मनुष्य एवं ईश्वर के बीच सम्बन्धों की पूर्णता के बारे में

1· जैस्समीन वैस्ट-दि कवेकर रीडर पृष्ठ 3·

ज्ञान प्राप्त किया जा सके किन्तु उसे उन लोगों से घोर निराशा हुई जो उस समय इसाई मत के प्रचार में लगे थे क्योंकि फॉक्स के विचार में इन लोगों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त एवं प्रचार ईश्वर तक नहीं ले जाते थे । अतः उसने 19 वर्ष की अवस्था में सत्य की खोज में घर छोड़ दिया । अपनी इस खोज में उसने अनेक धार्मिक पादरियों एवं प्रवक्ताओं से सहायता मांगी किन्तु उसे उनसे कोई लाभ न हुआ । अन्त में उसकी यह खोज पूरी हुई और उसे ईश्वर का ज्ञान प्राप्त हो गया जो उसके अनुसार स्वयं के अनुभव के आधार पर प्राप्त हुआ था ।[1]

फॉक्स के अनुसार वह दैवीय शक्ति जो मनुष्य के भीतर है वह ही उसे ईश्वर की इच्छानुसार रहने योग्य बना सकती है । वही उसे ईश्वर से प्रत्यक्ष रूप से जोड़ सकती है एवं उसी के द्वारा आन्तरिक विचार एवं बाह्य जीवन में समरूपता सम्भव है ।[2]

---

1. जैस्समीन वैस्ट-दि कवेकर रीडन पृष्ठ-5.
2. बेन्सन वाई. लेन्डीस - रिलीजन इन दि यूनाइटेड स्टेटस पृष्ठ -22.

उसके यह सिद्धान्त उस समय इंग्लैंड की धार्मिक संस्थाओं में बहुत अप्रिय थे ।[1]

फॉक्स का विचार था कि चर्च उन व्यक्तियों का एक समूह है जिनका उद्देश्य स्वयं को एक दूसरे से एवं ईश्वर से जोड़ना है । ऐसे समूह की स्थापना नहीं की जा सकती । किन्तु ऐसा समूह प्रारम्भ किया जा सकता है । इसके सदस्यों में कुछ समान गुणों का विकास हो सकता है जिसके कारण उन्हें एक नाम दिया जा सके ।[2]

फॉक्स ने एक छोटे समूह ﴾ग्रुप﴿ को संगठित किया जिसे काफी समय तक "चिल्ड्रन ऑफ ट्रूथ" "चिल्ड्रन ऑफ लाइट" तथा "फ्रेन्डस ऑफ ट्रूथ" के नाम से जाना जाता था । कुछ समय बाद इस ग्रुप को रिलीजियस सोसायटी ऑफ फ्रेन्डस का नाम दिया गया तथा बाद में यह कवेकर नाम से प्रसिद्ध हुआ ।[3]

कवेकर विचारधारा के अनुसार मनुष्यों के बीच पाया जाने वाला अन्तर केवल आध्यात्मिक है ।

1· बेन्सन वाई·लेन्डीस-रिलीजन इन दि यूनाइटेड स्टेटस पृष्ठ-22·

2· जैस्समीन वैस्ट-दि कवेकर रीडर पृष्ठ-3·

3· बेन्सन वाई· लेन्डीस-रिलीजन इन दि यूनाइटेड स्टेटस पृष्ठ 22·

इसीलिए अपने से "उच्च" व्यक्ति से मिलने पर वे उसके सम्मान में सिर से अपना टोप नहीं उतारते । उनके विषय में एक प्रमुख बात यह भी थी कि वे सभी लोगों को "तुम" (thou एवं thee) से सम्बोधित करते थे जबकि अन्य लोग इस शब्द का प्रयोग केवल अपने परिचितों अथवा अपने से छोटे व्यक्ति के लिए करते थे ।[1]

कवेकर मत के अनुसार ईश्वर हर व्यक्ति में है । क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति जो इस संसार में आया है उसे इस "ज्योति" का प्रकाश प्राप्त हुआ है (that the light lighteth every man that cameth into the world) अतः यह लोग इस अन्धविश्वास को नहीं मानते कि ईश्वर की पूजा केवल चर्च में ही की जानी चाहिए । ईश्वर उतना ही घर में, खेत में अथवा गलियों एवं सड़कों पर है जितना कि "चर्च" नामक इमारत में ।[2] इनके अनुसार चर्च वास्तव में लोगों का समूह है कोई इमारत नहीं, इसीलिए चर्च के

1· जैस्समीन वैस्ट-दि कवेकर रीडर पृष्ठ-5·

2· वही पृष्ठ 6·

संचालन के लिए लिए जाने वाले कर को देने से कवेकरों ने इन्कार कर दिया ।[1] उनका विचार था कि मनुष्य की आत्मा जिस कार्य का समर्थन नहीं करती उसे आर्थिक सहायता देकर समर्थन नहीं देना चाहिए ।[2]

कवेकर ॥फ्रैन्डस॥ ने अनिवार्य कानूनी शपथ लेने से इन्कार कर दिया[3] क्योंकि उनका कहना था कि राजकीय एवं व्यक्तिगत सत्य में कोई अन्तर नहीं होना चाहिए ।[4]

जॉर्ज फाक्स ने लिखा है - "1650 ई. में पहली बार हमें डर्बी के जस्टिस बेनट ॥ Bennet ॥ द्वारा कवेकर कहा गया क्योंकि ईश्वर ॥ God ॥ शब्द पर हमारे कारण वे कांप ॥ tremble ॥ जाते थे ।"[5] जार्ज फॉक्स के प्रथम उपदेश के पंन्द्रह वर्षों के भीतर लगभग चार हजार कवेकर लोगों को जेल भेजा गया । जेल यातनाओं के कारण इंग्लैंड में तैंतीस लोगों की मृत्यु हो गई तथा अमेरिका में तीन व्यक्तियों

---

1. जैस्समीन वैस्ट - दि कवेकर रीडर पृष्ठ 6.
2. वही पृष्ठ-10.
3. वही पृष्ठ - 6.
4. वही पृष्ठ - 9.
5. वही - "दि मैसेज आँफ जार्ज फॉक्स-पृष्ठ-61.

को फांसी पर लटका दिया गया ।[1] जैस्समीन वैस्ट के अनुसार "क्वेकरों द्वारा यह सजायें इसलिए स्वीकार कर ली गईं क्योंकि उनकी नीति विरोध न करने की थी तथा वे जो सत्ता में थे उनके द्वारा इन सजाओं का आदेश इसलिए दिया गया क्योंकि क्वेकरों के नियमों से उनकी सत्ता को खतरा था ।"[2]

क्वेकरों के यह कार्य जिनके लिये उन्हें दण्डित किया जाता था, देखने में भले ही बहुत छोटे प्रतीत होते थे किन्तु इनका बहुत महत्व था । दण्ड से बचने के लिए क्वेकरों को केवल इतना ही करना था कि वे अपने से उच्च व्यक्ति को देखकर अपना टोप उतार लें, कानूनी शपथ ग्रहण करें, शवों को दफनाने एवं विवाह इत्यादि में नियमों का पालन करें, तुम का सम्बोधन छोड़ दें तथा सार्वजनिक रूप से मिलना छोड़ दें ।[3] किन्तु क्वेकरों के अनुसार यह सभी महत्वपूर्ण नियम थे जिनका पालन करने के लिए उनके पास ठोस तर्क थे जबकि दूसरी ओर शासक वर्ग यह नहीं

---

1. दि क्वेकर रीडर पृष्ठ -9.
2. वही
3. वही

चाहता था कि इन नये नियमों का पालन करके लोग सदियों पुराने रीति-रिवाज छोड़ दें क्योंकि यह क्रान्ति की दिशा में बढ़ता हुआ कदम हो सकता था । उदाहरण के लिए सर से टोप न उतारने के लिए क्वेकरों द्वारा यह तर्क दिया जाता था - "ईश्वर को छोड़कर हमसे उच्च कोई नहीं है । केवल कुछ व्यक्ति आध्यात्मिकता के दृष्टिकोण से हमसे अच्छे हो सकते हैं"। दूसरी ओर इस नियम का उल्लंघन करने के लिए उन्हें दण्डित करने के लिए अधिकारियों का तर्क था कि व्यक्तियों का इस प्रकार का वर्गीकरण स्थापित सामाजिक एवं राजनैतिक व्यवस्था में क्रान्ति पैदा कर देगा ।[1] शपथ लेने से इन्कार करने का कारण क्वेकरों के अनुसार यह था कि शासकीय एवं व्यक्तिगत सत्य में कोई अन्तर नहीं होना चाहिए । जबकि शपथ लेने से इन्कार करने पर उन्हें जेल भेजने की सजा दिये जाने के तर्क में शासक वर्ग का कहना था कि दोनों प्रकार के सत्य का मूल्यांकन एक ही मापदंड से नहीं किया जा सकता ।[2]

---

1. जे. वैस्ट - दि क्वेकर रीडर - पृष्ठ-9.
2. दि क्वेकर रीडर पृष्ठ 9-10.

इस प्रकार आन्दोलन के प्रारम्भिक वर्षों में क्वेकर लोगों को बहुत सी यातनाएं दी गईं, जब ये यातनाएं बढ़ गईं तो क्वेकरों द्वारा इन कठिनाइयों के लिए सभाओं (meetings for sufferings) का प्रबन्ध किया गया जो मुख्यतः लन्दन में होती थीं । इंग्लैंड के दूसरे क्षेत्रों में प्रार्थना के उद्देश्य से की जाने वाली सभाओं की रिपोर्ट इन सभाओं में भेजी जाती थी । जिसमें अधिकारियों द्वारा क्वेकर सदस्यों को दी जाने वाली यातनाओं का वर्णन होता था ।[1] यह रिपोर्ट बाद में जोसफ बैसी (Joseph Besse) द्वारा संग्रहित की गई ।

1689 ई॰ में टालरेशन एक्ट पास हो जाने के बाद क्वेकरों को शान्तिपूर्वक मिलने एवं प्रार्थना करने की स्वीकृति दे दी गई ।[2] इस समय तक उनके बहुत से अनुयायी बन चुके थे । 1700 ई॰ तक क्वेकरों को अपने सर पर टोप रखने का अधिकार दे दिया गया । अब किसी तथ्य को कहने के लिए उन्हें शपथ ग्रहण करना आवश्यक नहीं था । वे सभी को

---

1. दि क्वेकर रीडर पृष्ठ - 12.

2. वही पृष्ठ 12.

अथवा किसी को भी "तुम" से सम्बोधित कर सकते थे, मौन प्रार्थना कर सकते थे, अपनी सभाओं में भाग ले सकते थे, शवों को अपनी भूमि में अपने नियमानुसार दफना सकते थे, अपने नियमों के अनुसार विवाह कर सकते थे और सार्वजनिक रूप से यह घोषणा कर सकते थे कि मनुष्य के लिए ईश्वरीय प्रेम में इस तरह एक जुट होना सम्भव है कि पाप बिल्कुल असम्भव हो जाये ।[1]

साइक्स के अनुसार सन् 1700 ई॰ के पश्चात् कवेकर इतिहास में इतिहासकारों की कम रूचि दिखाई पड़ती है किन्तु मानवतावादी दृष्टिकोण से कवेकर इतिहास में यह रूचि कम नहीं होती ।[2] मानसिक रूप से अपरिपक्व लोगों के लिए प्रथम अस्पताल की स्थापना 1796 ई॰ में एक कवेकर जोसफ टूके ‡ Joseph Tuke ‡ द्वारा यार्क में की गई जहां इनकी हंसी उड़ाने के स्थान पर मानसिक अपरिपक्वता अथवा पागलपन को एक बीमारी समझ कर इन व्यक्तियों का इलाज किया जाने लगा । एलिजाबेथ फ्राइ ने कैदियों के लिए कार्य करना आरम्भ किया ।

1· दि कवेकर रीडर पृष्ठ - 12·

2· वही पृष्ठ - 19·

निर्धन लोगों के लिए स्कूलों की स्थापना की गई । स्त्रियों के लिए राजनैतिक समानता के अधिकार का समर्थन किया गया । अब सत्रवहीं शताब्दी की तरह कवेकरों को जेल भेजना आसान नहीं था ।[1]

अमेरिका में कवेकर आन्दोलन

1656 ई॰ में इंग्लैंड की सोसायटी ऑफ फ्रैन्डस के बहुत से सदस्य मासाचुस्टस आये किन्तु उन्हें वहां प्रवेश नहीं दिया गया ।[2] वास्तव में 1724 ई॰ तक किसी भी कवेकर फ्रैन्ड को यहां आने की अनुमति नहीं दी गई । ब्रिटिश समूह के इन सदस्यों द्वारा वर्जीनिया तथा कनेक्टीकट में प्रवेश पाने के प्रयास भी किये गये । रोडे आइलैन्ड में इन्हें रहने की स्वीकृति मिल गई तथा न्यूयार्क, न्यू जर्सी और मेरीलैन्ड के अधिकारियों द्वारा भी इन्हें वहां निवास करने की स्वीकृति दे दी गई । अमेरिका में प्रमुख कवेकर बस्ती फिलाडेलफिया में विलियम पेन (William Penn) के नेतृत्व में स्थापित

---

1. दि कवेकर रीडर पृष्ठ - 19.
2. बेन्सन वाई॰ लेन्डीज - रिलीजन इन दि यूनाइटेड स्टेटस पृष्ठ - 21.

की गई जो 1682 ई. में यहां इसी उद्देश्य से इंग्लैंड से आया था ।[1]

क्वेकर ﴾फ्रैन्डस﴿ के अपने कुछ नियम हैं । यह दो प्रकार की प्रार्थना विधि अपनाते हैं । पहले प्रकार की प्रार्थना में प्रार्थना का केवल समय एवं स्थान निश्चित किया जाता है । सदस्य मौन रहते हैं जब तक कि उनमें से कोई बोलने का फैसला न कर ले । दूसरे प्रकार में इन सभाओं की अध्यक्षता कुछ व्यक्तियों द्वारा की जाती है जिन्हें अनौपचारिक रूप से प्रार्थना एवं दूसरे कार्यों के लिए चुना जाता है ।[2]

इनकी संस्था का स्वरूप पूर्णतः लोकतान्त्रिक है । स्थानीय समूह अपना कार्य मासिक बैठकों द्वारा करते हैं । एक ही जिले में दूसरे समूहों के साथ त्रैमासिक बैठकों ﴾ Quarterly Meetings ﴿ का आयोजन किया जाता है और एक क्षेत्र में वार्षिक ﴾ईयरली﴿ बैठक की जाती है ।[3]

---

1. बेन्सन वाई. लेन्डीज-रिलीजन इन दि यूनाइटेड स्टेटस पृष्ठ - 22.
2. वही
3. वही

आपस में मिल जुल कर तथा दूसरी धार्मिक संस्थाओं के साथ मिलकर लोगों की सहायता एवं उनके पुनर्वास के कार्य करना फ्रैन्डस की नीति है । 1917 ई॰ में अमेरिकन फ्रैन्डस सर्विस कमेटी की स्थापना की गई और तब से यह संस्था लोगों की सहायता में कार्यरत विश्व की एक प्रसिद्ध संस्था है ।[1]

प्रमुख क्वेकर मिशनरियां

आधुनिक विचारधारा के अनुसार क्वेकर मिशनरी गतिविधियां लगभग एक शताब्दी पूर्व प्रारम्भ हुई । इसका अधिक श्रेय जॉर्ज रिचर्डसन (George Richardson) को दिया जाता है जिसने 12 दिसम्बर, 1759 को मिशनरी कार्यों की आवश्यकता के सम्बन्ध में एक खुला पत्र लिखा जिसे बड़ी संख्या में लोगों में वितरित किया गया ।[2] उसने इस पत्र में लिखा- "बहुत समय से मेरे मस्तिष्क पर इस बात का बोझ है कि हमारी रिलीजियस सोसायटी वह सब करने के लिए आगे नहीं आ रही है जो इसे करना चाहिए बल्कि यह विश्व के दूसरे क्षेत्रों में ईसा मसीह के उपदेशों

1· रिलीजन इन दि यूनाइटेड स्टेटस पृष्ठ - 23·

2· डी·ई·ट्र्यूबलड - "दि पीपुल काल्ड क्वेकर : "दि पेनेटरेशन ऑफ वर्ल्ड" पृष्ठ 251·

के विस्तार के वास्तविक उद्देश्य से हटती जा रही है ।" उसने मिशनरी कार्यों से सम्बन्धित एक संस्था बनाये जाने पर बल दिया जिसका उद्देश्य ऐसे लोगों की नियुक्ति करना हो जो लम्बे समय तक विदेशों में रहकर मिशनरी कार्य करने के इच्छुक हों । उसका विचार था कि इन मिशनरियों को स्वदेशी फ्रेन्डस लोगों द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान की जानी चाहिए ।[1]

यद्यपि 1862 ई॰ में 89 वर्ष की अवस्था में जार्ज रिचर्डसन की मृत्यु हो गई किन्तु तब तक उसके विचारों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा था । 1861 ई॰ में लन्दन ईयरली मीटिंग में मिशनरी कार्य की आवश्यकता पर बल दिया गया । सितम्बर, 1865 में "दि फ्रेन्ड (लन्दन)" नामक पत्रिका में आधुनिक मिशनरी कार्य को बढ़ावा देने की आवश्यकता से संबंधित लेख लिखे गये ।[2] 1868 ई॰ में "फ्रेन्डस फारेन मिशनरी एसोसियेशन" के संविधान की रूपरेखा तैयार की गई और शीघ्र ही विश्व के विभिन्न देशों में क्वेकर प्रतिनिधि भेजे गये ।[3]

---

1. डी॰ई॰ट्रयूब्लड - "दि पीपुल कालड क्वेकर-पृष्ठ 252॰
2. वही पृष्ठ 52॰
3. वही पृष्ठ 52॰

अमेरिकन कवेकरों में मिशनरी कार्यों का प्रारम्भ 1867 ई॰ से माना जा सकता है जब एली ﴾ Eli ﴿ तथा सिबल जोन्स ﴾ Sibyl Jones ﴿ नामक दो मिशनरियों ने फिलीस्तीन की यात्रा की ।[1] उनके परिश्रम के फलस्वरूप येरूसलम से कुछ मील दूर रामाला ﴾ Ramallah ﴿ में मिशन केन्द्र की स्थापना हुई । प्रारम्भ में विभिन्न अमेरिकी कवेकर मिशनरियों ने विदेशों में अलग-अलग कार्य शुरू किया । जैसे मैक्सिको में इन्डियाना फ्रेन्डस, जमेका में आयोवा फ्रेन्डस द्वारा मिशनरी कार्य आरम्भ किया गया । किन्तु इस समय मिशनरी कार्य के लिए उत्सुक अमेरिकन फ्रेन्डस को किसी संस्था के सहयोग की आवश्यकता अनुभव हुई । अतः उन्होंने इंग्लैंड की फ्रेन्डस फारेन मिशनरी एसोसियेशन को अपनी सेवायें अर्पित कर दीं क्योंकि वे किसी संस्था के नाम से विश्व के विभिन्न देशों में कार्य करना चाहते थे । इंग्लिश कवेकरों द्वारा प्रोत्साहित किये जाने पर अमेरिकन कवेकरों ने 1894 ई॰ में अमेरिकन फ्रेन्डस बोर्ड ऑफ फॉरेन मिशन्स की स्थापना की जो आज

1· डी॰ई॰ट्रयूब्लड-"दि पीपुल कालड कवेकरस - दि पेनेटरेशन ऑफ दि वर्ल्ड" पृष्ठ-253·

फ्रैन्डस यूनाइटेड मीटिंग, जिसका मुख्यालय रिचमन्ड, इन्डियाना में है, का एक महत्वपूर्ण अंग है ।[1] रिचमन्ड, इन्डियाना से किया जाने वाला मिशनरी कार्य यद्यपि विश्व में सबसे बड़ा क्वेकर कार्य था, किन्तु इसके अन्तर्गत सभी अमेरिकी मिशनरी प्रयत्न शामिल नहीं थे । उदाहरण के लिए इसके कार्यों में फिलाडेलफिया फ्रैन्डस द्वारा किये गये वे कार्य शामिल नहीं थे जो उन्होंने जापान में लगभग 80 वर्षों तक किये, फिलाडेलफिया फ्रैन्डस की वीमेन फारेन मिशनरी एसोसियेशन की स्थापना 12 दिसम्बर, 1882 को हुई । इसके मिशनरी कार्यों का एक महत्वपूर्ण उदाहरण टोकियो में फ्रैन्डस गर्ल्स स्कूल की स्थापना थी ।[2]

1927 ई. में ग्रेट ब्रिटेन में फ्रैन्डस फॉरेन मिशनरी एसोसिएशन ने फ्रैन्डस काउन्सिल फॉर इन्टरनेशनल सर्विस के साथ मिलकर फ्रैन्डस सर्विस काउन्सिल की स्थापना की और इस तरह फ्रैन्डस फॉरेन मिशनरी एसोसियेशन द्वारा अलग से किया जाने वाला

---

1. डी. ई. ट्रयूब्लड - "दि पीपुल कालड क्वेकरस : दि पेनेटरेशन ऑफ दि वर्ल्ड" पृष्ठ-253.
2. वही पृष्ठ 254.

मिशनरी कार्य छोड़ दिया गया ।[1] फ्रैन्डस सर्विस काउन्सिल नामक यह संस्था पुराने मिशनरी कार्यों का निरीक्षण करती है एवं यूरोप के विभिन्न शहरों में स्थापित फ्रैन्डस केन्द्रों की देखरेख का कार्य करती है ।[2]

इस प्रकार कवेकर मिशनरियों द्वारा विश्व के विभिन्न स्थानों पर मिशन केन्द्रों की स्थापना की गई । कवेकर मिशनरी गतिविधियों का एक सफल उदाहरण कीनिया में किया गया मिशनरी कार्य है । कीनिया में क्लीवलैंड बाइबल इन्स्टीट्यूट, क्लीवलैण्ड, ओहियो द्वारा लगभग 1900 ई. में कार्य शुरू किया गया । जिसे बाद में विभिन्न कवेकर संस्थाओं द्वारा सहयोग प्रदान किया गया । 1911 ई. से अफ्रीका में किया जाने वाला मिशनरी कार्य अमेरिकन फ्रैन्डस बोर्ड आफ मिशन्स द्वारा अपने हाथ में ले लिया गया । जिसके परिणामस्वरूप ईस्ट अफ्रीका ईयरली मीटिंग विश्व की सबसे बड़ी ईयरली मीटिंग बन गई । इसका मुख्य कार्य

---

1. दि पीपुल कालड कवेकरस पृष्ठ 254.

2. वही पृष्ठ 254.

स्कूलों की स्थापना से संबंधित था किन्तु इसके द्वारा कृषि एवं उद्योगों के विकास के कार्यों में भी विशेष रूप से ध्यान दिया जा रहा है । इसके अतिरिक्त क्वेकर मिशनरियां विश्व के अन्य भागों में भी सक्रिय रहीं । जमैका में शिक्षा सम्बन्धी प्रयत्नों के परिणामस्वरूप हैप्पी ग्रोव स्कूल को सहयोग देने का कार्य किया गया । फिलीस्तीन मिशन के मुख्य कार्यों के अन्तर्गत रामाला में दो फ्रेन्डस स्कूलों की स्थापना की गई जिसमें से एक बालकों के लिए एवं एक बालिकाओं के लिए था ।[1]

यद्यपि क्वेकर मिशनरियों द्वारा किये गये सहायता, पुनर्वास एवं विश्व सेवा के कार्यों के महत्व की समय-समय पर विश्व के लोगों द्वारा प्रशंसा की जाती रही किन्तु इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम 1947 में उठाया गया जब इन्हें शान्ति के लिए नोबल शान्ति पुरस्कार द्वारा सम्मानित किया गया । यह पुरस्कार फ्रेन्डस सर्विस काउंसिल, ग्रेट ब्रिटेन एवं अमेरिकन फ्रेन्डस सर्विस कमेटी नामक दो संगठनों को संयुक्त

1· दि पीपुल कालड क्वेकरस पृष्ठ - 256·

रूप से प्रदान किया गया । इन्हें नोबल पुरस्कार प्रदान करते समय दिये गये अधिभाषण में यह कहा गया - "क्वेकरों द्वारा हमें यह दिखाया गया है कि बहुत से लोगों के मस्तिष्क में गहरे छिपे विचारों जैसे दूसरों के प्रति सहानुभूति, दूसरों की सहायता करने की इच्छा, जाति अथवा राष्ट्रीयता के भेदभाव के बिना मनुष्यों के प्रति व्यक्त की गई सहानुभूति की महत्वपूर्ण भावना को कार्यरूप में परिवर्तित करना सम्भव है । ये भावनाएं कार्यरूप ले लेने पर हमेशा रहने वाली शान्ति की आधारशिला प्रदान करेंगी । इसी कारण आज वे नोबल शान्ति पुरस्कार प्राप्त करने के योग्य हैं ।" [2]

क्वेकर मिशनरियों द्वारा किये गये महत्वपूर्ण कार्यों में सहायता एवं पुनर्वास के कार्य प्रमुख हैं जो युद्ध के दिनों में बड़े स्तर पर किये गये किन्तु यह केवल युद्ध तक ही सीमित नहीं थे । यद्यपि प्राचीन युद्धों में भी क्वेकर सहायता

1· डी·ई·ट्रयूब्लड -"दि पीपुल कालड क्वेकरस : दि पेनीटरेशन ऑफ दि वर्ल्ड पृष्ठ 257·

2· वही पृष्ठ 257·

कार्यों के उदाहरण मिलते हैं किन्तु इस दिशा में संगठित रूप से इस कार्य का प्रारम्भ ब्रिटिश क्वेकरों द्वारा 1870 ई॰ में फ्रांस एवं पर्शिया के बीच हुए युद्ध (Franco-Prussian War) में किया गया जब युद्ध से प्रभावित लोगों की सहायता हेतु फ्रेन्डस वार विक्टिम फन्ड (Friends War Victim Fund) की स्थापना की गई । इसी समय काले एवं लाल रंग के सितारे को क्वेकर सहायता कर्मचारियों द्वारा एक बैज (Badge) के रूप में धारण किये जाने की शुरूआत हुई । आज भी यह सहायता कार्य में लगे क्वेकरों द्वारा कोट के बटन के रूप में पहना जाता है तथा विशेष रूप से यात्रा आदि में इनकी पहचान करने में सहायक होता है ।[1]

यद्यपि 1870 ई॰ में युद्ध के समय किया गया यह सहायता कार्य आवश्यकता समाप्त हो जाने पर छोड़ दिया गया किन्तु 1914 ई॰ में प्रथम विश्व युद्ध शुरू होने पर यह सेवा पुनः प्रारम्भ करने

1· डी॰ई॰ट्रयूब्लड - "दि पीपुल कालड क्वेकरस" - पृष्ठ 258·

में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही ।

प्रथम विश्व युद्ध के समय "फ्रैन्डस वार विक्टिम रिलीफ कमेटी (Friends War Victim Relief Committee) की स्थापना की गई जो एक प्रकार से चवालीस साल पहले स्थापित किये गये संगठन का पुनर्गठन था । इस समय पुनः काले लाल सितारे (Black & Red Star) का प्रयोग भी किया गया । इस कमेटी की स्थापना लन्दन मीटिंग फॉर सफरिंग्स (London Meetings for Sufferings) द्वारा सितम्बर, 1914 में की गई थी ।[1] इसी समय इंग्लिश क्वेकरों द्वारा फ्रैन्डस एम्बुलेन्स यूनिट नामक संस्था आरम्भ की गई । इस संस्था का उद्देश्य उन नवयुवकों को कार्य करने के लिए प्रेरित करना था जो चिकित्सा सहायता में आने वाले खतरों का सामना करने के लिए तैयार थे । द्वितीय विश्व युद्ध के समय एम्बुलेन्स यूनिट का पुनर्गठन किया गया और इस युद्ध में भी इस यूनिट ने सराहनीय कार्य किया ।[2]

ब्रिटिश क्वेकरों की भांति ही अमेरिकन क्वेकरों

---

1. दि पीपुल कालड क्वेकरस - पृष्ठ 258.
2. वही पृष्ठ 258.

द्वारा समय-समय पर लोगों की सहायता के अनेक कार्य किये गये । अमेरिका के प्रथम विश्व युद्ध में शामिल हो जाने पर 1917 ई॰ में "अमेरिकन फ्रेन्डस सर्विस कमेटी" की स्थापना की गई, जो ब्रिटिश "फ्रेन्डस वार विक्टिम रिलीफ कमेटी" की तरह ही विभिन्न सहायता कार्य कर रही थी । इसके मुख्य कार्य चिकित्सा एवं शरणार्थियों के लिए तत्काल रहने का प्रबन्ध करने से सम्बन्धित थे । इसके साथ ही भोजन की व्यवस्था एवं वितरण भी इस कमेटी का एक मुख्य कार्य था । प्रथम विश्व युद्ध के समाप्त हो जाने पर इस कमेटी द्वारा जर्मनी तथा आस्ट्रिया में भोजन वितरण का कार्य किया गया जिसकी उस समय अति आवश्यकता थी । द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् भी इस कमेटी द्वारा इसी प्रकार के सहायतार्थ कार्य इतने व्यापक स्तर पर एवं इतने प्रभावशाली ढंग से किये गये कि आज भी मध्य यूरोप में लोग इसे "कवेकर स्पीसंग" (Quaker Speisung) नाम से जानते हैं । कवेकरों द्वारा किये गये कार्य उस समय इतने चर्चित थे कि दानस्वरूप प्राप्त होने वाले भोजन की घटिया क्वालिटी होने पर लोग कवेकरों को ही दोषी मानते थे, चाहे वह भोजन किसी ने भी उपलब्ध कराया हो ।[1]

1· दि पीपुल कालड कवेकरस पृष्ठ 258·

किन्तु इन क्वेकर गतिविधियों के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण बात यह थी कि इन कार्यों के लिए आर्थिक सहायता केवल क्वेकरों द्वारा ही नहीं दी जाती थी बल्कि इनके अतिरिक्त अन्य लोगों की भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका रही है जो कई वर्षों तक अमेरिकन फ्रेन्डस सर्विस कमेटी को धन देते रहे हैं । अतः यह कहना अनुचित न होगा कि इन सहायता एवं पुनर्वास कार्यों का अधिक श्रेय यद्यपि क्वेकर मिशनरियों को दिया जाना चाहिए क्योंकि यह कार्य मुख्यतः क्वेकर नीति एवं प्रशासन के अन्तर्गत किये गये किन्तु इन कार्यों के लिए उपलब्ध कराये गये धन का श्रेय अन्य लोगों को भी जाता है । एक अन्य महत्वपूर्ण एवं ध्यान देने योग्य बात यह भी थी कि इन सेवाओं में बहुत से ऐसे व्यक्ति भी थे जो इन कार्यों के प्रति सहानुभूति रखते थे । किन्तु रिलीजियस सोसायटी ऑफ फ्रेन्डस के सदस्य नहीं थे । आज भी क्वेकरों द्वारा विश्व के विभिन्न भागों में शान्ति के लिए प्रयत्न जारी हैं ।

....

के प्रति वफादार होगा ।

1870 ई· में बांदा में "सोसायटी फॉर दि प्रापेगेशन ऑफ दि गास्पल" के कलेक्टर मैन (Mayne) ने बुन्देलखण्ड मिशन की स्थापना की ।[1] जिसमें मैन के अतिरिक्त इलाहाबाद के पादरी एफ·सी· फेगन (F.C. Fagan) ने महत्वपूर्ण योगदान दिया । यह मिशन प्रारम्भ में कानपुर मिशन का ही एक भाग था । 1872 ई· में इस जिले में जे·आर·हिल द्वारा इस मिशन का कार्य देखना आरम्भ किया गया । कलेक्टर मैन द्वारा एक स्कूल की इमारत जो उसके नाम पर थी इस मिशन को सौंप दी गई जिसे एक चर्च के रूप में भी प्रयोग किया जाता था ।[2] इस मिशन की शाखाएं धीरे-धीरे महोबा, करवी और अर्तरा आदि स्थानों पर खोल दी गईं । महोबा, करवी तथा बांदा में इस सोसायटी द्वारा स्कूलों की स्थापना की गई जिनमें बहुत से बच्चों को शिक्षा दी जाती थी । इस प्रकार

1· ड्रेक ब्रोकमेन डी·एल·-डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर ऑफ यूनाइटेड प्रोविन्सस- बांदा पृष्ठ 91·

2· वही

शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा था ।[1] इसके साथ-साथ इस सोसायटी द्वारा शहरों और गांवों में इसाई मत के प्रचार और प्रचार का कार्य भी किया गया । बांदा में एक सरकारी चर्च था जिसकी स्थापना 1857 ई॰ के विद्रोह के पूर्व की गई थी । इसमें इस सोसायटी की बांदा शाखा के मिशनरियों द्वारा सेवा कार्य किया जाता था । इसी सोसायटी के महिला मिशन की एक शाखा थी जिसका प्रबन्ध दो महिला मिशनरियों द्वारा किया जाता था । इसके द्वारा लड़कियों की शिक्षा के लिए दो स्कूल और क्षेत्र की महिलाओं की चिकित्सा के लिए एक अस्पताल भी खोला गया था ।[2] इस मिशन द्वारा करवी में एक बड़ा स्कूल खोलने के लिए तथा एक चर्च के लिए कुछ भूमि भी खरीदी गई थी । 1906 ई॰ में जे॰आर॰हिल की सहायता के लिए एक सहायक की नियुक्ति भी कर दी गई ।[3]

1· ड्रेक ब्रोकमेन डी॰एल॰ - डिस्ट्रिक्ट गजेटियर ऑफ यूनाइटेड प्रोविन्सिस -बांदा पृष्ठ -91·

2· वही

3· वही

बांदा और करवी में अमेरिकन मैथोडिस्ट एपीस्कोपल मिशन के छोटे-छोटे केन्द्र थे जिनके द्वारा किया गया कार्य केवल धर्म प्रचार से सम्बन्धित था जिसे स्थानीय प्रचारकों की सहायता से किया जाता था ।[1]

झांसी में मिशनरी सोसायटी की दो शाखायें थीं । एक ललितपुर में तथा दूसरी मउरानीपुर में ।[2] 1858 ई· में झांसी में चर्च मिशनरी सोसायटी की स्थापना की गई । इसके पश्चात् 1886 ई· में प्रेसबिटेरियन चर्च अमेरिका के मिशनरी झांसी आये और उन्होंने यहां अपना केन्द्र स्थापित किया ।[3] थोड़े ही दिन बाद इन मिशनरियों ने धर्म प्रचार की दृष्टि से स्थानीय जनता का विश्वास प्राप्त करने के लिये एक स्थानीय व्यक्ति को अपना धर्म-प्रचारक नियुक्त कर दिया जिसे झांसी शहर और आसपास के क्षेत्रों में इसाई धर्म के प्रचार का कार्य सौंपा गया । इन मिशनरियों को किसी स्थानीय व्यक्ति को धर्म प्रचारक के रूप में रखने

1· ड्रेक ब्रोकमेन डी·एल·-डिस्ट्रिक्टगजेटियर ऑफ यूनाइटेड प्रोविन्सिस - बांदा पृष्ठ -91·

2· ड्रेक ब्रोकमेन - डिस्ट्रिक्ट गजेटियर झांसी 1909 पृष्ठ 87·

3· वही पृष्ठ 87 तथा
इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया पार्ट-2 पृष्ठ 91·

की आवश्यकता इसलिए थी क्योंकि ये मिशनरी बुन्देलखण्ड के रीति-रिवाज और परम्पराओं से परिचित नहीं थे । प्रचार के लिए स्थानीय भाषा का जानना भी आवश्यक था । यह सभी कार्य स्थानीय इसाई आसानी से कर सकते थे । इन अमेरिकन मिशनरियों का उद्देश्य यह था कि स्थानीय प्रचारकों की सहायता से धर्म प्रचार का कार्य करके मिशन के कार्यो को आगे बढ़ाया जाये । ऐसा करना इसलिए भी आवश्यक था क्योंकि इस क्षेत्र के लोग यूरोपीय धर्म प्रचारकों को विदेशी समझकर घृणा करते थे ।

इसके अतिरिक्त झांसी में 1947 में सैंट जूड सराइन (St. Jude's Shrine) तथा 1950 में ललितपुर में डॉन बोस्कों (Don Bosco Mission) मिशन की स्थापना रोमन कैथोलिक चर्च तथा सोसायटी फॉर दि प्रोपेगेशन ऑफ दि गास्पल द्वारा की गई । यह मिशनरियां अपने-अपने क्षेत्रों में इसाई धर्म के प्रचार एवं शिक्षा तथा चिकित्सा सम्बन्धी कार्य करती रहीं ।[1]

सन् 1896 ई॰ में झांसी में एक प्रोटेस्टेन्ट

1· झांसी गजेटियर 1965 पृष्ठ -86·

चर्च की स्थापना की गई ।[1] इस चर्च में 670 लोगों के बैठने की व्यवस्था थी । यह व्यवस्था सेना के विभिन्न भागों में कार्यरत सैनिकों की संख्या के अनुपात को ध्यान में रखते हुए की गई थी । 670 सीटों में से 500 सीटें इसाई सैनिकों के लिए थी और 70 स्थान स्थानीय नागरिकों के लिए थे । इंडियन मिडलैंड रेलवे कम्पनी के अधिकारियों के लिए चर्च में 100 स्थान रखे गये थे ।[2] इस चर्च के खर्च के लिए 27 अक्तूबर, 1896 को 57,824/- रूपये की स्वीकृति सरकार द्वारा दी गई । इस खर्च में चर्च की इमारत का निर्माण, एक कुंए का निर्माण, चौकीदार के रहने के लिए स्थान और चर्च की चारदीवारी का खर्च शामिल था । इसमें से 41,174/- रूपये इम्पीरियल सिविल वर्क्स फण्ड में से, 3650/- रूपये उत्तर पश्चिम प्रान्त एवं अवध की सरकार द्वारा, 6,000/- रूपये इंडियन मिडलैंड रेलवे द्वारा तथा 7,000/- रूपये लखनऊ के लॉर्ड बिशप द्वारा दिये गये । इस प्रकार झांसी के इस नये प्रोटेस्टेन्ट चर्च की स्थापना हुई ।[3]

---

1. होम डिपार्टमेंट 1896 एकिलजियास्टिकल पार्ट बी प्रोसिडिंग नवम्बर नम्बर-10.
2. वही
3. वही

इन मिशनरियों के कार्यों के परिणामस्वरूप क्षेत्र में इसाई धर्म के अनुयायियों की संख्या बढ़ने लगी । 1881 ई॰ की जनगणना के अनुसार झांसी में स्थानीय इसाईयों की संख्या केवल चालीस थी । 1891 ई॰ में यह संख्या 161 तक पहुंच गई । 1901 ई॰ की जनगणना के अनुसार केवल झांसी जिले में ही स्थानीय इसाईयों की संख्या बढ़कर 777 हो गई थी ।[1]

जिला हमीरपुर में अमेरिकन मिशनरी सोसायटी द्वारा मिशन की एक शाखा माहोबा में 1895 ई॰ में खोली गई जिसकी शाखायें राठ और मौदाहा में खोली गई । किन्तु पूरे हमीरपुर जिले में 1901 तक केवल 223 स्थानीय इसाई थे ।[2]

जालौन जिले में यद्यपि 1901 ई॰ में 59 स्थानीय इसाई थे । किन्तु किसी भी मिशन द्वारा इस जिले में स्थायी केन्द्र स्थापित नहीं किया गया था ।[3]

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में इसाई धर्म के प्रचार तथा

1· ड्रेक ब्रोकमेन डी॰एल॰-झांसी गजेटियर पृष्ठ 87·

2· इम्पीरियल गजेटियर यूनाइटेड प्रोविन्सिस इलाहाबाद डिवीजन 1905 पृष्ठ 60·

3· वही पृष्ठ 125·

प्रसार का कार्य प्रोटेस्टेन्ट मिशनरियों द्वारा ही किया गया । 1896 ई॰ में बुन्देलखण्ड में एक भयंकर अकाल पड़ा जिससे जन-जीवन को भारी क्षति हुई थी । लोग भूखों मरने लगे थे । इससे पहले भी क्षेत्र में कई बार अकाल पड़ चुके थे ।[1] ऐसी परिस्थिति में 1896 ई॰ में अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की ओर से मिस डी॰ फिश्लर तथा मिस ई॰वार्ड, जो भारत में मिशन कार्य के लिए लखनऊ आई हुई थीं, ने बुन्देलखण्ड के नौगांव क्षेत्र में अपना प्रथम केन्द्र स्थापित करने का फैसला किया ।[2]

1896-97 के अकाल ने उत्तर और मध्य भारत के एक बहुत बड़े क्षेत्र को प्रभावित किया जिसमें भोपाल, ग्वालियर तथा बुन्देलखण्ड का क्षेत्र भी था । 1896 ई॰ में जब अकाल की शुरूआत हो रही थी । बुन्देलखण्ड क्षेत्र की सैनिक छावनी, नौगांव में अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की स्थापना हुई ।[3] अकाल पीड़ितों की सहायता के लिए स्थापित इस मिशन के लिए यह अत्याधिक संघर्ष का समय था क्योंकि 1898-99 में हालात अच्छे होने के बाद 1900 में फिर कमी का समय था ।

1· इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया भाग-9·

2· ई·अन्ना निकसन-ऐ सेन्चुरी ऑफ प्लाटिग-ए हिस्ट्री ऑफ दि अमेरिकन फ्रैन्डस मिशन इन इंडिया-प्रीफेस पृष्ठ-9-10·

3· मारजोरी साइक्स -क्वेकरस इन इन्डिया -"क्रास करन्टस {1980} पृष्ठ 101·

दूसरे क्षेत्रों की भांति बुन्देलखण्ड क्षेत्र में अकाल पीड़ितों की सहायता के लिए सरकार द्वारा पर्याप्त कदम नहीं उठाये गये थे । अतः यहां मिशनरियों द्वारा लोगों की सहायता अधिकतर व्यक्तिगत तौर पर की गई जबकि अन्य क्षेत्रों जैसे होशंगाबाद आदि में कार्यरत अमेरिकी मिशनरियों ने सरकार के साथ मिलकर अकाल पीड़ितों की सहायता की ।[1]

अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन का मुख्यालय ओहियो में था । इससे सम्बन्धित मिशनरी धर्म प्रचार के लिए बुन्देलखण्ड के पिछड़े हुए क्षेत्रों में आकर बस गये और सर्वप्रथम उन्होंने नौगांव छावनी तत्पश्चात् छतरपुर को अपनी गतिविधियों का केन्द्र बनाया । नौगांव के इस मिशन को ओहियो (दमस्क) ईयरली मीटिंग नामक संगठन द्वारा सहायता दी जाती थी । इस संगठन के सदस्य उन्हीं दिनों एक धार्मिक पुनर्चेतना के परिणाम-स्वरूप संगठित हुए थे ।[2]

1892 ई. में इस ईयरली मीटिंग की दो महिलाओं ईस्थर ई.बार्ड तथा डेलिया ए.फिशलर ने भारत

---

1. मारजोरी साइक्स - क्वेकरस इन इंडिया-"क्रास करंटस"- (1980) पृष्ठ 101.
2. वही पृष्ठ 102.

में मिशनरी कार्य करने की इच्छा व्यक्त की ।[1] तीन वर्ष तक इन्होंने लखनऊ के अमेरिकन मेथोडिस्ट स्पीस्कोपल मिशन में अनुभव प्राप्त किया तथा भारतीय भाषाओं का अध्ययन किया ।[2]

भारत पहुंच कर मिशनरी कार्यों के प्रारम्भ के लिये मिस फिशलर तथा मिस बार्ड उचित स्थान की तलाश में थीं । उसी समय लखनऊ में एक चर्चा के दौरान नौगांव सैनिक छावनी का उल्लेख आया जो ब्रिटिश सेना का मुख्यालय था । वहां पोलिटिकल एजेन्ट तथा पुलिस अधीक्षक का कार्यालय भी था । नौगांव के आस पास देशी रियासतें थीं । लखनऊ में बेसलेन नामक पादरी ने डेलिया को बताया कि बुन्देलखण्ड का क्षेत्र मिशनरी कार्यों के लिए अछूता पड़ा है । यह उनके लिए एक महत्वपूर्ण क्षेत्र हो सकता है । उसने डेलिया को इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए प्रेरित किया । उसने कहा कि यहां स्थित अंग्रेजी सेना आप लोगों की सुरक्षा का उचित प्रबन्ध भी करेगी । इन महिला मिशनरियों ने इस प्रस्ताव को

---

1. मारजोरी साइक्स-क्वेकरस इन इंडिया-"क्रास करंटस (1980) पृष्ठ 102.
2. वही पृष्ठ 102.

स्वीकार कर लिया और 1 अप्रैल, 1896 को फ्रैन्डस मिशन की स्थापना की ।[1]

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में 1895-96 में पड़ने वाले अकाल की विभीषिका का अध्ययन हम कर चुके हैं ।[2] इस अकाल के कारण क्षेत्र के लोग बुरी तरह प्रभावित हुए । फसलें नष्ट हो चुकी थीं, वस्तुओं की कीमतें 1894 ई॰ से ही काफी बढ़ चुकी थीं । लोग परेशान थे ।[3] इन विपरीत परिस्थितियों के बावजूद इन महिलाओं द्वारा बुन्देलखण्ड में बड़े उत्साहपूर्वक मिशन का कार्य शुरू किया गया । मिशन का यह कार्य एक किराये के मकान में प्रारम्भ किया गया था । ईस्थर और डेलिया को आरम्भ में अकाल की भयानक स्थिति का ठीक-ठीक अन्दाज नहीं हो सका था कि क्षेत्र में खाने-पीने की वस्तुओं की कितनी अधिक कमी हो गई थी ।[4] उन्हें इसाई धर्म के प्रचार का कार्य स्थगित करना पड़ा किन्तु उन्होंने क्षेत्र में अकाल पीड़ितों

---

1. ई॰एन्ना निकसन-ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग - ए हिस्ट्री ऑफ दि अमेरिकन फ्रैन्डस मिशन इन इंडिया प्रीफेस पृष्ठ-16॰
2. देखिये अध्याय-2॰
3. डेरिक ब्रोकमेन डी॰एल॰-डिस्ट्रिक्ट गजेटियर बांदा 1909 पृष्ठ 65॰
4. मारजोरिस साइकस-क्वेकरस इन इंडिया पृष्ठ 102॰

की सहायता करने का बहुत अच्छा कार्य किया ।[1] उन्होंने शीघ्र ही क्षेत्र का दौरा किया ।[2] वे ब्रिटिश सेना से ﴾प्रारम्भ में उधार﴿ अनाज प्राप्त करती थीं तथा उसे हर सप्ताह बैलगाड़ी अथवा हाथी द्वारा निश्चित गांव केन्द्रों में ले जाती थी ।[3] वे निराश्रित जो उनके पास आश्रय प्राप्त करने आते थे, उन्हें अधिकतर होशंगाबाद की क्वेकर मिशनरियों द्वारा स्थापित शरणगृहों में भेज दिया जाता था ।[4] किन्तु लगभग पचास बच्चे ऐसे थे जिनके माता पिता ने आकर इन मिशनरियों से प्रार्थना की थी कि इन बच्चों को नौगांव में तब तक रखा जाये जब तक वे लोग वापिस अपने बच्चों को लेने न आयें । इन लोगों में से केवल तीन व्यक्ति ऐसे थे जो अपने बच्चों को वापिस लेने के लिए जीवित रहे ।[5]

इस प्रकार प्रारम्भ में इसाई धर्म के प्रचार का कार्य अधिक नहीं किया जा सका । जब ये मिशनरियां

1· मारजोरिस साइकस - क्वेकरस इन इंडिया पृष्ठ 102

2· वही

3· वही

4· वही

5· वही

गांवों में जाती थीं तो अकाल पीड़ित लोग उनसे रोटी और कपड़े की मांग करते थे ।[1] ये महिलाएं ऐसे बच्चों को लाकर नौगांव मिशन में रखती थीं जो अकाल के कारण अनाथ हो गये थे । एक घुड़साल को साफ करके इन बच्चों के रहने के लिए जगह बनाई गई थी जिनकी देखरेख का कार्य ई॰बार्ड द्वारा किया जाता था । इन अमेरिकन महिला मिशनरियों द्वारा दो भारतीय महिलाओं, जिनसे उनकी मुलाकात लखनऊ में हुई थी, को इन अनाथ बच्चों की देखभाल करने के लिए रख लिया गया ।[2] डेलिया फिशलर चर्च में प्रार्थना तथा शिक्षा देने का कार्य करती थी । इसके अतिरिक्त छावनी में रहने वाले अंग्रेज सैनिकों को प्रार्थना कराने का कार्य भी डेलिया ही किया करती थी ।[3] अकाल के कारण लोगों की सहायता करने में इन मिशनरियों का बहुत पैसा खर्च हो गया था । अतः इन्होंने अमेरिका स्थित अपने बोर्ड

---

1. ई॰एन्ना निकसन - ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग - प्रीफेस पृष्ठ 17॰
2. मारजोरिस साइकस-क्वेकरस इन इंडिया पृष्ठ 102॰
3. ई॰एन्ना निकसन-ए सेंचुरी ऑफ प्लांटिंग प्रीफेस पृष्ठ 17-18॰

से और अधिक आर्थिक सहायता देने का आग्रह किया ।[1]

ईस्थर और डेलिया ने अपने उन पत्रों में, जो उन्होंने अपने घर अमेरिका से सहायता प्राप्त करने के आशय से लिखे थे, में बुन्देलखण्ड के अपने अनुभवों का वर्णन किया है ।[2] यह दोनों मिशनरियां एक गांव की एक विधवा महिला से बहुत अधिक प्रभावित हुईं जिसने अकाल से पीड़ित होने के बावजूद अपने पांच भूखे बच्चों को बहुत अधिक साफ सुथरा रखा था । इन मिशनरियों की सहायता से उनकी जान बचायी जा सकी ।[3]

एक दिन एक अपाहिज लड़का जो भूख से बुरी तरह निढाल था, अपने आप को लगभग घसीटता हुआ बहुत कठिनाई से इन मिशनरियों की शरण में नौगांव पहुंचा ।[4] धीरे-धीरे उसने अपनी कहानी सुनाई । उसका नाम हीरालाल था और वह कई मील दूर के एक गांव से आया था । चूंकि वह अपाहिज था अतः वह अपने

---

1. ई. एन्ना निकसन-ए सेंचुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ-17-18.
2. मारजोरिस साइकस-क्वेकरस इन इंडिया पृष्ठ - 102.
3. वही
4. वही

आपको अपने परिवार पर एक बेकार बोझ समझता था । वह यह सोचकर घर से भाग निकला था कि बहुत कठिनाई से प्राप्त होने वाले भोजन में से उसका हिस्सा घर के उन सदस्यों को प्राप्त हो सके जो घर के लिए कार्य करते थे एवं उसकी तरह बेकार नहीं थे । वह किसी तरह जंगलों में से होता हुआ नौगांव तक जीवित पहुंच गया था ।[1] ईस्थर और डेलिया दोनों ही इस बच्चे से बहुत अधिक प्रभावित हुई ।[2]

अकाल के इन वर्षो में कवेकर मिशनरियों ने पंडिता रमाबाई से सम्पर्क बनाये रखा जिसका इन समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण बिल्कुल अलग था ।[3] पंडिता रमाबाई सत्रह वर्ष की मेधावी ब्राह्मण लड़की थी जब उसे दक्षिण के अकाल का सामना करना पड़ा था । उसके माता-पिता अभावों के कारण मर गये थे । किन्तु वह किसी प्रकार जीवित बच गई तथा शीघ्र ही उसने पंडिता की उपाधि प्राप्त कर

1· मारजोरिस साइकस-कवेकरस इन इंडिया पृष्ठ 104·

2· वही

3· वही

ली क्योंकि उसके पिता ने रीति-रिवाज के विरूद्ध अपनी पुत्री को संस्कृत की शिक्षा दी थी । अपने युवा पति की मृत्यु के बाद पंडिता रमाबाई ने स्वयं को स्त्री शिक्षा के प्रति समर्पित कर दिया ।[1] वह अंग्रेजी भाषा का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए इंग्लैंड गई । वह अमेरिका भी गई । वहां से वापिस आकर उसने हिन्दू बाल विधवाओं को शिक्षित करने एवं उन्हें समाज में उपयुक्त स्थान दिलाने का निश्चय किया ।[2] उसकी इन योजनाओं को कार्यान्वित करने में अमेरिका की कवेकर महिलाओं ने धन एकत्र करने में उसकी सहायता की तथा 1887 ई॰ में उसने "विधवा गृह" खोला ।[3]

रमाबाई ने अपने धार्मिक अनुभवों के आधार पर इसाई धर्म स्वीकार कर लिया था किन्तु उसके द्वारा स्थापित विधवा गृहों में प्रत्येक व्यक्ति को अपना धर्म मानने की पूरी स्वतंत्रता थी । पंडिता रमाबाई को उस विश्वास की गहराई एवं पवित्रता का

---

1. मारजोरिस साइकस - कवेकरस इन इंडिया पृष्ठ-104
2. वही
3. वही

अहसास था जिनके आधार पर उसके धार्मिक प्रवृत्ति के पिता ने अपना जीवन व्यतीत किया था । अतः वह भारतीय धर्मों को न तो एक बुराई के रूप में मानती थी और न ही उसके विचार में वे लोग जो इन धर्मों को मानते थे वे आध्यात्मिकता में खो चुके थे ।[1]

अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की महिला मिशनरियों ने अनाथालय की देख रेख में सहायता के लिए पंडिता रमाबाई से अनुरोध किया । वह पूना के निकट केडगांव की रहने वाली थी ।[2] वह पूना से नौगांव कई बार अनाथ बच्चों, विधवाओं तथा निम्न जाति के तिरस्कृत बच्चों को लेने के लिए आई । पंडिता रमाबाई द्वारा इन महिला मिशनरियों का बोझ हल्का करने में काफी सहायता की गई क्योंकि वह बाल विधवाओं, निराश्रित एवं असहाय औरतों एवं दूसरे ऐसे लोगों, जिन्हें सहायता की आवश्यकता थी, को अपने साथ अपनी देखरेख में ले गई ।[3] वह उन हिन्दू इसाईयों में से एक थी जिन्हें अच्छे संस्कार अपने पूर्वजों से प्राप्त हुए थे ।[4]

---

1. मारजोरिस साइकस-कवेकरस इन इंडिया पृष्ठ 104.
2. ई. एन्ना निकसन-ए सेंचुरी आॅफ प्लांटिंग पृष्ठ 18.
3. मारजोरिस साइकस-कवेकरस इन इंडिया पृष्ठ 104.
4. वही

अब नौगांव के मिशन में 81 लड़के तथा 3 लड़कियां मिशन परिवार के रूप में स्थायी रूप से रख ली गईं ।[1] एक अन्धी महिला चारलोटे बाई को नौकरी देकर इस मिशन में रख लिया गया । उसने अपनी योग्यता से अधिकांश लोगों को प्रभावित कर रखा था ।[2] इन अनाथालय की स्थापना करके इन महिला मिशनरियों ने अनाथ बच्चों के लिए एक ऐसे सद्भाव-पूर्ण एवं खुशहाल घर की नींव डाली जिसमें बड़े होकर वे कवेकर चर्च के अनुयायी बन गये ।[3]

कुछ समय बाद डेलिया नौगांव से अमेरिका वापिस पहुंची । तत्पश्चात् उसने अमेरिकन मिशन बोर्ड के सामने नौगांव में मिशन के निर्माण के लिए आर्थिक सहायता प्राप्त करने हेतु दलीलें पेश कीं ।[4] उसकी प्रार्थना बोर्ड द्वारा स्वीकार कर ली गई तथा बोर्ड ने इस कार्य हेतु सहायता देने का निश्चय किया । 1899 ई॰ में डेलिया पुनः भारत आई और उसने बुन्देलखण्ड में अमेरिकन फ्रैन्डस मिशन का कार्य भार देखना शुरू किया ।

1· ई·एन्ना निकसन-ए सेंचुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ - 18·

2· वही

3· मारजोरिस साइकस-कवेकरस इन इंडिया पृष्ठ 102·

4· ई·एन्ना निकसन-ए सैंचुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ 20-21·

इसके साथ ही नौगांव मिशन के अन्तर्गत चलाये जा रहे अनाथालय में चारलोटे बाई की देख-रेख में प्रगति हो रही थी । इसी बीच नौगांव में पोलिटिकल एजेन्ट का स्थानान्तरण हो गया और मिशन इमारत निर्माण की स्वीकृति के पत्रों पर उसके हस्ताक्षर न हो सके । नये पोलिटिकल एजेन्ट ने यह कहकर इस योजना को स्थगित कर दिया कि अनाथालय ब्रिटिश एजेन्सी के अधिक समीप है ।[1] बाद में इस कार्य के लिए दूसरी जमीन मिशन को किराये पर दे दी गई जिसे डेलिया फिशलर ने स्वीकार कर लिया ।[2] बुन्देलखण्ड एजेन्सी की मिशन से सम्बन्धित एक फाइल के आधार पर यह जानकारी प्राप्त हुई कि अमेरिकन फ्रैन्डस मिशन पहला ऐसा मिशन था जिसने 1899 ई· में बुन्देलखण्ड क्षेत्र में मिशनरी कार्य के लिए कदम रखा ।[3] सम्भवतः 1899 ई· में मिशन कार्य प्रारम्भ करने के लिए मिशनरियों द्वारा भूमि इत्यादि प्राप्त करने के प्रयासों के फलस्वरूप ही ऐसा कहा गया था । जून, 1901 में

1· ई·एन्ना निकसन - ए सेंचुरी ऑफ प्लान्टिंग पृष्ठ - 20-21·

2· वही

3· फाइल सं·-105/1905 - अलीपुर राजा द्वारा उपलब्ध कराई गई भूमि ।

मिशन को उपलब्ध कराई गई भूमि पर अनाथालय का निर्माण पूरा हुआ । उसी के समीप चारलोटे बाई को रहने के लिये एक कमरा दे दिया गया ।[1] अनाथालय के भवन के निर्माण के साथ ही अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन को प्राप्त सहायता धनराशि समाप्त हो गई । किन्तु 1902 में एक बंगले के निर्माण के लिए आधारशिला रखी जा चुकी थी जिसे बाद में आर्थिक सहायता भी प्राप्त हुई । जनवरी, 1903 तक यद्यपि यह इमारत पूर्ण नहीं हुई थी किन्तु फिर भी मिशनरियों द्वारा उसमें प्रवेश कर लिया गया था । अप्रैल के महीने तक इस इमारत का कार्य भी पूरा हो गया ।[2] इस प्रकार डेलिया फिश्लर के प्रयासों से नौगांव में अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन के अन्तर्गत एक अनाथालय तथा निवास हेतु एक इमारत का कार्य पूरा हो गया था ।[3]

नौगांव में चर्च का निर्माण

बुन्देलखण्ड के इस पिछड़े हुए क्षेत्र में अमेरिकन

---

1. ई॰एन्ना निकसन-ए सेंचुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ-20-21
2. वही पृष्ठ 20-21॰
3. वही

फ्रेन्डस मिशन की महिला मिशनरियों ने नौगांव को अपना कार्य क्षेत्र चुना था । उन्हें यहां एक चर्च के निर्माण की आवश्यकता अनुभव हुई । 22 अक्तूबर, 1904 को नौगांव के केन्टूनमेंट मैजिस्ट्रेट ने बुन्देलखण्ड में पोलिटिकल एजेन्ट को पत्र लिखा कि "अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की महिलाएं बाजार क्षेत्र में एक चर्च का निर्माण करना चाहती हैं । उसके सम्बन्ध में धार्मिक दृष्टिकोण से क्या कोई आपत्ति हो सकती है ।"[1] उसी पत्र में उसने लिखा कि "मेरा अनुमान है कि जब हम मुसलमानों और हिन्दुओं के मन्दिरों के प्रति सहिष्णु हैं तो उन्हें भी हमारी धार्मिक इमारतों के प्रति सहिष्णुता दिखानी चाहिए । यह एक चर्च से अधिक एक वाचनालय है ।"[2]इसी पत्र के फुटनोट में केन्टूनमेन्ट मैजिस्ट्रेट ने पोलिटिकल एजेन्ट से पूछा "अगर इस पत्र का उत्तर शीघ्र दे दिया जाये तो अच्छा होगा । क्योंकि ये महिलाएं आज कैन्टूमेन्ट कमेटी की आज्ञा

---

1. फाइल संख्या - 1571/1904 - अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन दारा नौगांव बाजार में चर्च की प्रस्तावित इमारत से संबंधित - पत्र सं.-सी/2235 दिनांक 22 अक्तूबर, 1904
2. वही

लेना चाहती हैं ।" यद्यपि यह एक संक्षिप्त पत्र था किन्तु इससे ऐसा आभास होता है कि मैजिस्ट्रेट ए·एन·सी· क्रीया (A. Mc. Crea) इन महिला मिशनरियों द्वारा नौगांव में चर्च बनाये जाने के पक्ष में था । उसका यह लिखना कि जब वे मुसलमानों एवं हिन्दू मन्दिरों के प्रति सहिष्णुता की भावना रखते हैं तो उन्हें भी उनकी इमारतों के प्रति ऐसी ही भावना प्रदर्शित करनी चाहिए । यह चर्च बनाये जाने के सम्बन्ध में उसकी ओर से अपरोक्ष स्वीकृति थी । इस पत्र के उत्तर में पोलिटिकल एजेन्ट ने 22 अक्तूबर, 1904 को ही मैजिस्ट्रेट को सूचित किया कि चर्च बनाये जाने से सम्बन्धित यह प्रश्न इन्दौर भेजा जायेगा तथा इस बीच कैन्टूंमेन्ट कमेटी को भी अपना निर्णय सुरक्षित रखना चाहिए । तत्पश्चात् 26 अक्तूबर, 1904 को पोलिटिकल एजेन्ट डब्लयू·ई·जारडीन (W. E. Jardine) ने मध्य भारत के गवर्नर जनरल के एजेन्ट के प्रथम सहायक को उपरोक्त पत्र की प्रति प्रेषित करते हुए पूछा कि इस सम्बन्ध में क्या उत्तर दिया जाये । उसने यह भी लिखा कि इसी

प्रकार का प्रश्न मऊ ∮ Mhow ∮ अथवा धार ∮ Dhar ∮ क्षेत्र में भी उत्पन्न हुआ था ।[1]

पोलिटिकल एजेन्ट बुन्देलखण्ड के इस पत्र के संदर्भ में गवर्नर जनरल के एजेन्ट के कार्यालय द्वारा 2 नवम्बर, 1904 को सूचित किया गया[2] कि "अमेरिकन महिला मिशनरियों द्वारा नौगांव बाजार में चर्च बनाये जाने के सम्बन्ध में कोई आपत्ति नहीं है अगर इस कार्य के लिए उचित स्थान आसानी से उपलब्ध कराया जा सके । यह बात भली-भान्ति समझ ली जानी चाहिए कि बाद में अगर सैनिक अथवा छावनी अधिकारियों को उस स्थान की आवश्यकता हुई तो उसे उसी प्रकार की दूसरी इमारतों पर लागू नियमों के अन्तर्गत ही खाली कर देना होगा ।" यह भी कहा गया कि "अगर भविष्य में नौगांव में छावनी न रहे और छावनी क्षेत्र छतरपुर दरबार के अधिकार क्षेत्र में आ जाये ऐसी स्थिति में छतरपुर दरबार मिशन द्वारा चर्च अथवा यह स्थान बनाये रखने के लिए अथवा मिशन

1· फाइल संख्या -1571/1904-डब्ल्यू·ई·जारडीन का पत्र मध्य भारत गवर्नर जनरल के एजेन्ट के प्रथम सहायक को पत्र सं·-26592 दिनांक 26 अक्तूबर, 1904·

2· फाइल संख्या-1571/1904-अर्द्धशासकीय पत्र सं·-9728 दिनांक 2 नवम्बर, 1904· गवर्नर जनरल ∮मध्य भारत∮ के कार्यालय का पत्र·

को अपने क्षेत्र में कार्य करने के लिए अनुमति देने को बाध्य नहीं होगा ।"[1]

इस तरह गवर्नर जनरल के एजेन्ट की अनुमति प्राप्त हो जाने के पश्चात् इन महिला मिशनरियों ने नौगांव के बाजार क्षेत्र के एक चर्च का निर्माण किया जिसमें चर्च के साथ एक वाचनालय भी खोला गया ।

हरपालपुर में फ्रेन्डस मिशन के लिए अलीपुरा के राजा द्वारा उपलब्ध कराई गई भूमि

बुन्देलखण्ड की यह क्वेकर मिशनरियां क्षेत्र के लोगों को चिकित्सा सुविधायें प्रदान करने के प्रति जागरूक थीं । ईस्थर बार्ड एक नर्स थी और कुछ वर्ष बाद उसकी सहायता के लिए नौगांव में एक महिला डाक्टर की नियुक्ति कर दी गई थी ।[2] चिकित्सा सुविधायें उपलब्ध कराये जाने के उद्देश्य से अलीपुरा के महाराजा ने इन

---

1. फाइल संख्या -1571/1904 - अर्धशासकीय पत्र सं.-9728 दिनांक 2 नवम्बर, 1904 - गवर्नर जनरल के कार्यालय का पत्र
2. मारजोरिस साइकस -क्वेकरस इन इंडिया पृष्ठ 133-134.

मिशनरियों को दवाखाना खोलने के लिए कुछ भूमि प्रदान की थी ।[1]

नौगांव में अमेरिकन फ्रैन्डस मिशन द्वारा अपना केन्द्र स्थापित कर लेने के पश्चात् इन मिशनरियों ने आसपास के क्षेत्रों में भी कार्य करना शुरू किया । 13 जनवरी, 1905 को अलीपुरा के राजा ने बुन्देलखण्ड में पोलिटिकल एजेन्ट डब्ल्यू·ई·जारडीन को सूचित किया कि उसने नौगांव के फ्रैन्डस मिशन को हरपालपुर में कुछ भूमि उनके द्वारा मांगे जाने पर एक मकान बनाने हेतु मुफ्त दे दी है । यह भूमि हरपालपुर रेलवे स्टेशन के पास थी ।[2] राजा द्वारा यह भी बताया गया कि यह भूमि इस शर्त पर दी गई है कि अगर भविष्य में मिशन द्वारा इस इमारत का उस उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया गया जिसके लिए यह बनाई जायेगी अथवा मिशन उसे किसी दूसरे उद्देश्य के लिए प्रयोग करना चाहेगा अथवा मिशन उसे बेचना चाहेगा तब मिशन को इस भूमि के लिए उस समय लागू राजमूल्य

1· मारजोरिस साइकस-क्वेकरस इन इंडिया पृष्ठ 133-134

2· फाइल संख्या-105/1905-अर्द्धशासकीय पत्र सं·-8 दिनांक 13 जनवरी, 1905 - अलीपुरा के राजा द्वारा पोलिटिकल एजेन्ट को पत्र

के आधार पर हर्जाना देना होगा ।[1] अलीपुरा के राजा को विश्वास था कि फ्रेन्डस मिशन की शाखा हरपालपुर में स्थापित हो जाने पर उसके राज्य के निर्धन व्यक्तियों की बड़ी सहायता हो सकेगी । क्योंकि यह मिशन चिकित्सा और निःशुल्क शिक्षा का कार्य कर रहा था ।[2]

पोलिटिकल एजेन्ट के कार्यालय द्वारा इस पत्र के संदर्भ में यह विचार व्यक्त किया गया कि अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन पहला मिशन है जिसने बुन्देलखण्ड में 1899 ई॰ में कदम रखा है । यद्यपि इस मिशन को इस प्रकार भूमि दिये जाने के सम्बन्ध में कोई नियम नहीं थे किन्तु कार्यालय द्वारा यह सुझाव दिया गया कि यदि मिशन के साथ एक लिखित समझौता किया जाये और गवर्नर जनरल के एजेन्ट की अनुमति ले ली जाये तो यह सभी के हित में होगा ।

यद्यपि पोलिटिकल एजेन्ट हरपालपुर में एक

1· **फाइल संख्या**- 105/1905 - अर्द्धशासकीय पत्र सं॰- 8, दिनांक 13 जनवरी, 1905 - अलीपुरा के राजा का पोलिटिकल एजेन्ट को पत्र

2· वही

दवाखाना खोले जाने के पक्ष में था किन्तु उसे इस बात पर आपत्ति थी कि राजा द्वारा फ्रेन्डस मिशन को भूमि दिये जाने से पूर्व उससे विचार विमर्श नहीं किया गया । फिरभी उसका विचार था कि फ्रेन्डस मिशन की शाखा हरपालपुर में खुल जाने से कोई हानि न थी बल्कि यह एक अच्छा कार्य था ।[1] उसके अनुसार यदि मिशन द्वारा कोई परेशानी पैदा की जायेगी तो राजा उनसे भूमि वापिस ले सकता था । अतः किसी लिखित समझौते की आवश्यकता न थी किन्तु वह यह चाहता था कि इस प्रकार मिशनरियों को भूमि दिये जाने सम्बन्धी महत्वपूर्ण कार्यों की पूर्व सूचना पोलिटिकल एजेन्ट को अवश्य दी जानी चाहिए थी ।[2]

हरपालपुर में मिशन द्वारा बनाई जाने वाली इस इमारत के संदर्भ में अलीपुरा के राजा ने सूचित किया कि यह भूमि मिशन को लीज़ (lease) पर नहीं दी गई है बल्कि उसने मिशन से इस सम्बन्ध

---

1. **फाइल संख्या** - 105/1905 - अर्धशासकीय पत्र सं. 575/सी दिनांक 30 जनवरी, 1905 - पोलिटिकल एजेन्ट का मध्य भारत के गवर्नर जनरल के एजेन्ट के प्रथम सहायक को पत्र
2. वही

में एक लिखित समझौता कर लिया है । मिशन को उपलब्ध करायी जाने वाली भूमि का यह टुकड़ा 250×150 वर्ग फुट का था [1] राजा ने पोलिटिकल एजेन्ट को लिखा कि वह हरपालपुर में व्यापारिक गतिविधियां बढ़ाने के उद्देश्य से वहां इमारत बनाने के लिए किसी को भी, उसके द्वारा मांगे जाने पर इस प्रकार भूमि दे देता है । फिर भी उसने विश्वास दिलाया कि मिशन के सम्बन्ध में वह पोलिटिकल एजेन्ट के निर्देशों के अनुसार ही कार्य करेगा ।[2]

हरपालपुर में केन्द्र स्थापित करने का यह कार्य अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की महिला मिशनरी मिस डी·फिश्लर द्वारा किया जा रहा था । मिशन द्वारा बनायी जाने वाली यह इमारत वहां एक दवाखाना खोलने के लिए थी । दवाखाने के साथ ही डाक्टर के रहने के लिए आवास की भी व्यवस्था थी । पोलिटिकल एजेन्ट के निर्देश पर अलीपुरा के राजा ने मिशन की सुपरिंटेंडेंट को लिखा कि फिलहाल उस भूमि पर

1· **फाइल संख्या**-105/1905-अर्धशासकीय पत्र सं· 20, दिनाक 12 फरवरी, 1905-राजा अलीपुरा का पोलिटिकल एजेन्ट को पत्र·

2· वही

तब तक कार्य शुरू न किया जाये जब तक उसे इस संबंध में पुनः सूचित न किया जाये ।[1] ऐसा लगता है कि मिस डेलिया फिश्लर हरपालपुर में यह केन्द्र स्थापित किये जाने के लिये बहुत उत्सुक थी । अतः उसने सीधे पोलिटिकल एजेन्ट मिस्टर जारडीन को एक पत्र लिखा जिसमें उसने लिखा कि "आपसे पूर्व अधिकारी ने मुझे बताया था कि भूमि के लिये अलीपुरा के राजा की अनुमति ही पर्याप्त थी अतः अलीपुरा के राजा की अनुमति प्राप्त हो जाने पर मैंने समझा कि इस भूमि पर इमारत इत्यादि बनाने के लिये यह अनुमति पर्याप्त थी । इसीलिये मैंने इमारत की नींवें भरने एवं अन्य सामग्री एकत्र करने का कार्य शुरू कर दिया था किन्तु दो हफ्ते पहले राजा द्वारा मुझे सूचित किया गया कि इस कार्य के लिये आपकी अनुमति की आवश्यकता है और तब से मैंने यह मामला सुलझने तक सारा कार्य बन्द करवा दिया है ।[2] उसने लिखा कि "हम वर्षा से पहले

---

1. **फाइल संख्या-** 105/1905-अर्द्धशासकीय पत्र सं.-20 दिनांक 12 फरवरी, 1905 - राजा अलीपुरा का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को
2. **फाइल संख्या-** 105/1905-पत्र दिनांक 21 फरवरी 1905-डेलिया फिश्लर का पोलिटिकल एजेंट को पत्र

इस इमारत में आ जाने के लिये उत्सुक हैं और समय कम होने के कारण आपसे प्रार्थना है कि इस सम्बन्ध में शीघ्र से शीघ्र अनुमति देने की कृपा करें ।[1]

पोलिटिकल एजेन्ट द्वारा शीघ्र ही इस कार्य की अनुमति दे दी गई । गवर्नर जनरल के एजेन्ट को भी अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन द्वारा हरपालपुर में केन्द्र खोले जोने के सम्बन्ध में कोई आपत्ति न थी । इस प्रकार नौगांव के बाद 1905 ई॰ में इस मिशन ने हरपालपुर में अपना केन्द्र स्थापित किया । नौगांव में पले हुए बुन्देलखण्ड के ही इसाई विलियम प्रसाद को आगरा भेज कर तीन वर्ष की फार्मेसी की ट्रेंनिंग कराई गई ।[2] ट्रेनिंग प्राप्त करने के बाद विलियम प्रसाद ने हरपालपुर दवाखाने की देख रेख का कार्य आरम्भ कर दिया किन्तु दुर्भाग्य से 1911 ई॰ से लेकर लगभग 1919 ई॰ तक के 8 वर्ष इस मिशन केन्द्र

1· **फाइल संख्या-** 105/1905-पत्र दिनांक 21 फरवरी, 1905-डेलिया फिश्लर का पोलिटिकल एजेंट को पत्र·

2· आहियो ईयरली मीटिंग मिनट्स 1909 पृष्ठ 42·

के लिए बड़े कष्टदायी थे । ईस्थर बार्ड, जो नौगांव में एक नर्स के रूप में आयी थीं, वह बीमारी के कारण 13 फरवरी, 1911 को अवकाश लेकर वापिस चली गई ।[1] उसके वापिस जाने के कारण बुन्देलखण्ड मिशन के अन्तर्गत चल रही चिकित्सा सेवा प्रभावित हुई । परिणामस्वरूप हरपालपुर का दवाखाना बन्द हो गया ।[2] जिस समय यह महिला नर्स अपने घर वापिस जा रही थी उसे इस बात की बहुत चिन्ता थी कि दवाखाने में आने वाले रोगियों के विभिन्न रोगों की पहचान डाक्टर के अभाव में कैसे हो सकेगी । यहां तक कि अलीपुरा के राजा, जिसने हरपालपुर मिशन के लिये भूमि दान में दी थी, को भी यह जानकर बहुत दुःख हुआ कि हरपालपुर का दवाखाना बन्द हो गया है किन्तु 1912 ई॰ में जब विलियम प्रसाद फार्मेसी की ट्रेनिंग करके हरपालपुर वापिस आया तो उसने इस दवाखाने के कार्य को पुनः शुरू किया ।[3] प्रतिदिन औसत

1· ओहियो ईयरी मीटिंग मिनट्स 1909 पृष्ठ 42·

2· वही

3· ई·एन्ना निकसन - ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग पृष्ठ - 38·

60 रोगी हरपालपुर के दवाखाना में आया करते थे ।[1] किन्तु प्रथम विश्व युद्ध के शुरू होने पर मिशन को प्राप्त होने वाली सहायता बन्द हो गई थी जिस कारण मिशन के स्टाफ में छंटनी करनी पड़ी । हरपालपुर के दवाखाना पर भी इसका असर पड़ा जहां कार्य करने वाले स्टाफ में कमी करनी पड़ी ।[2] 1915 ई. के अन्त तक पुनः इन मिशनरियों को अमेरिकी बोर्ड से सहायता की धनराशि प्राप्त होने लगी थी । इस धनराशि से हरपालपुर में रोगियों की देख-रेख तथा रात्रि विश्राम के लिए दो कमरों के निर्माण का कार्य आरम्भ किया गया । इससे पहले हरपालपुर में रोगियों को दवा देकर वापिस घरों को लौटा दिया जाता था क्योंकि वहां रोगियों को रखने के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी ।[3] इस दवाखाना के लिए अलीपुरा के राजा द्वारा भी उदारतापूर्वक आर्थिक सहायता प्रदान की गई थी ।[4]

---

1. ई. एन्ना निकसन - ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग पृष्ठ - 55.
2. वही
3. वही
4. वही पृष्ठ 61.

नौगांव छतरपुर सड़क पर 13 मील पोस्ट के निकट अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन द्वारा एक बंगले का निर्माण

अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की यह मिशनरियां धीरे-धीरे बुन्देलखण्ड के अन्य क्षेत्रों में भी मिशन का कार्य शुरू कर रही थीं। 6 मार्च, 1919 को फ्रेन्डस मिशन की सुपरिंटेंडेन्ट मिस ई·ई·बार्ड ने बुन्देलखण्ड में पोलिटिकल एजेन्ट कर्नल ए·बी·मिन्चन (Col. A.B. Minchin) को पत्र लिखा कि छतरपुर के राजा ने उसे बिल्डिंग बनाने के लिये नौगांव छतरपुर सड़क पर 13 मील पोस्ट के निकट लगभग एक एकड़ भूमि दी है जिस पर वह एक छोटा चार कमरे का बंगला तथा आउट हाउस और एक कुंआ बनवाना चाहती है।[1] उसने लिखा कि अगर उसे पोलिटिकल एजेन्ट द्वारा इस कार्य के लिए सरकार की स्वीकृति प्रदान कर दी जाये तो वह इस कार्य को उन लोगों की मदद से पूरा करना चाहती है जो अकाल पीड़ित हैं। ताकि इससे उनकी सहायता भी हो सके।[2] उसका यह पत्र प्राप्त होने पर

1· फाइल संख्या - 62-डी/1919 - बुन्देलखण्ड एजेन्सी फाइल।

2· वही

8 मार्च, 1919 को एजेन्ट ने पत्र द्वारा छतरपुर के दीवान से पूछा कि क्या मिस बार्ड द्वारा कही गईं उपरोक्त बातें सही हैं ।[1] लेकिन यह आश्चर्य की बात थी कि छतरपुर के दीवान पंडित सुखदेव बिहारी मिश्रा ने पोलिटिकल एजेन्ट को यह जानकारी दी कि यद्यपि अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन को बिल्डिंग बनाने हेतु भूमि दिये जाने हेतु बातचीत की गई थी किन्तु बाद में ऐसा न करने का निर्णय किया गया है ।[2]

उपरोक्त पत्र के संदर्भ में 17 मार्च, 1919 को कर्नल मिन्चन ने छतरपुर के दीवान को लिखा कि "मिस बार्ड के कथनानुसार आप और महाराजा छतरपुर दोनों ने निश्चित रूप से यह भूमि उसे दी थी और उसे कहा था कि वह शीघ्र ही इसका कब्जा ले सकती है । अगर यह बात सच है तो मेरे विचार में आपको अपने वायदे से हटना नहीं चाहिए ।"[3] उसने लिखा कि अच्छा होगा अगर भूमि का पट्टा मिस बार्ड को दे दिया जाये । उसने यह भी सुझाव दिया कि पट्टा

---

1. **फाइल संख्या** -62-डी/1919-बुन्देलखण्ड एजेन्सी फाइल
2. **फाइल संख्या**- 62-डी/1919 - पत्र संख्या-2207/1918-1919 दिनांक 16 मार्च, 1919 - दीवान छतरपुर का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को -
3. **फाइल सं**.- 62-डी/1919-बुन्देलखंड एजेंसी फाइल.

देते समय छतरपुर दरबार यह शर्त रख सकता है कि दरबार एक महीने का पूर्व नोटिस देकर एवं मिशन द्वारा बनायी गई इमारतों का मुआवजा देकर यह भूमि मिशन से कभी भी वापिस ले सकता है । यह मुआवजा उस समय के मूल्य के अनुसार निर्धारित किया जायेगा जब भूमि वापिस ली जायेगी ।[1]

इस पत्र से एक बात स्पष्ट थी कि इस क्षेत्र में मिशनरी कार्यों को पोलिटिकल एजेन्ट का समर्थन प्राप्त था । उसने यह स्पष्ट कर दिया था कि वह अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन को भूमि दिये जाने के पक्ष में था । उसकायह पत्र उसकी ओर से एक प्रकार की स्वीकृति प्रतीत होता है जिसके उत्तर में छतरपुर के दीवान पंडित सुखदेव बिहारी मिश्रा ने मिस बार्ड को भूमि दिये जाने से सम्बन्धित कुछ तथ्य स्पष्ट करते हुए 19 मार्च, 1919 को पोलिटिकल एजेन्ट को एक लम्बा गोपनीय पत्र लिखा । छतरपुर के दीवान ने बताया

---

1. **फाइल संख्या** - 62 डी/1919 - अर्द्धशासकीय पत्र संख्या-631-डी, दिनांक 17 मार्च, 1919 - पोलिटिकल एजेन्ट का पत्र छतरपुर दीवन को -

कि "शुरू में मिस बार्ड ने छतरपुर के महाराजा से इस विषय पर बातचीत की थी जिन्होंने उसे कोई जगह देने का वायदा किया था । मुझे कोई उचित जगह सुझाने के लिये कहा गया और मैंने ऐसा किया लेकिन शहर के लोगों को इस बात का पता लग गया और उन्होंने इसे पसन्द नहीं किया ।"[1] लोगों को इस बारे में मालूम हो जाने पर 90 से भी अधिक व्यक्तियों द्वारा हस्ताक्षरित एक प्रार्थना पत्र महाराजा को दिया गया जिसमें इस प्रस्ताव का विरोध प्रकट किया गया था । तब महाराजा छतरपुर द्वारा दीवान से कहा गया कि वह नम्र शब्दों में मिस बार्ड को भूमि उपलब्ध कराये जाने सम्बन्धी प्रस्ताव के लिये मना कर दें ।[2] अतः छतरपुर के दीवान ने मिस बार्ड को लोगों के विचारों से अवगत कराते हुए एक पत्र लिखा जिसके साथ उन व्यक्तियों द्वारा दिये गये शिकायती प्रार्थना पत्र का अनुवाद भी उसे भेजा गया ।[3] छतरपुर के दीवान ने

---

1. **फाइल संख्या-** 62-डी/1919, दिनांक 19 मार्च, 1919 का गोपनीय पत्र - छतरपुर दीवान का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को -
2. वही
3. वही

पोलिटिकल एजेन्ट को लिखा कि महाराजा और मिस बार्ड के बीच इस विषय पर फिर बातचीत हुई और ऐसा प्रतीत होता था कि महाराजा उसकी सहायता करना चाहते थे । दीवान ने भी महाराजा की बात का समर्थन किया और तब उसे एक जगह सुझायी गई ।[1] दीवान छतरपुर ने मिस बार्ड को बताया कि वह उस भूमि पर इमारत का निर्माण शुरू कर सकती है और उससे यह वायदा किया कि इससे सम्बन्धित अनुमति पत्र उसे शीघ्र ही दे दिया जायेगा ।[2] इस सम्बन्ध में महाराजा छतरपुर की दो शर्तें थीं, जो दीवान छतरपुर द्वारा मिस बार्ड को बता दी गई थीं । पहली शर्त के अनुसार राज्य में किसी भी व्यक्ति को इसाई धर्म में नहीं बदला जायेगा और दूसरी शर्त के अनुसार राज्य में गौ हत्या नहीं होगी । यहां तक कि गौमांस को कहीं से भी राज्य में लाने की अनुमति नहीं दी जायेगी ।[3]

---

1. **फाइल संख्या** - 62-डी/1919, दिनांक 19 मार्च, 1919 का पत्र - दीवान छतरपुर का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को -
2. वही
3. वही

यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि यह दोनों ही शर्तें महत्वपूर्ण थीं । स्पष्ट था कि क्षेत्र के राजा यद्यपि मिशनरियों की उनके कार्यों में सहायता करने के लिये तैयार थे किन्तु उन्हें डर था कि इन इसाई मिशनरियों के आ जाने से लोगों की धार्मिक भावनाओं को ठेस लगेगी और राज्य में हिन्दू धर्म को हानि हो सकती थी । दीवान ने एजेन्ट के नाम इस पत्र में बताया कि "मिस बार्ड ने बातचीत के दौरान इन शर्तों को मान लिया था अतः इस के अनुसार एक योजना बनाई गई और जब इस सम्बन्ध में इन शर्तों सहित बनाई गई योजना के आधार पर इस कार्य के लिये राज्य के सामान्य नियमों के अन्तर्गत स्वीकृति दिये जाने सम्बन्धी पत्र मिस बार्ड को लिखा जाने वाला था तभी उसे पोलिटिकल एजेन्ट से इस सम्बन्ध में विचार करने का सोभाग्य प्राप्त हुआ । यह पत्र अमेरिकन मिशन के लिये नहीं बल्कि मिस बार्ड को व्यक्तिगत रूप से लिखा जाना था ।" [1]

1· **फाइल संख्या-** 62-डी/1919-बुन्देलखण्ड एजेन्सी फाइल - दिनांक 19 मार्च, 1919 का पत्र - छतरपुर दीवान का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को-

दीवान के अनुसार मिस बार्ड को यह स्पष्ट कर दिया गया था कि उनका प्रस्ताव राज्य के लोगों को बहुत ही अप्रिय था । इस प्रस्ताव का यह विरोध वास्तव में काफी जोरदार था ।[1] इसलिए मिस बार्ड को यह बताया गया चूंकि राज्य के लोग उनके इस प्रस्ताव से सहमत न थे, अतः उसे यह भूमि देना सम्भव न होगा । मिस बार्ड को यह जानकर अत्यन्त निराशा हुई किन्तु दीवान द्वारा यह स्पष्ट रूप से विनम्रतापूर्वक बता दिया गया कि लोगों द्वारा नापसन्द किये जाने के कारण उसके प्रस्ताव को स्वीकार करना सम्भव न होगा ।[2] दीवान ने लिखा - "ऐसा लगता है कि शायद इसके बाद मिस बार्ड ने आपसे मुलाकात की । इसीलिए मैंने अपने पत्र द्वारा आपको सूचित किया था कि उसे भूमि देने का यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया है ।"[3] लोगों को इस प्रस्ताव के अस्वीकार हो जाने के बारे में

---

1. **फाइल संख्या** - 62-डी/1919 - बुन्देलखण्ड एजेन्सी फाइल - दिनांक 19 मार्च, 1919 का पत्र - दीवान छतरपुर का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को -
2. वही
3. वही

मालूम हो चुका है और वह इससे काफी प्रसन्न थे ।[1] "इसी बीच मुझे आपका पत्र प्राप्त हुआ कि मिशन को भूमि दे दी जाये । यद्यपि मैं आपसे यह प्रार्थना नहीं करता कि आप अपनी सलाह वापिस ले लें, न ही व्यक्तिगत रूप से मुझे इस पर कोई आपत्ति है किन्तु मैं आपसे यह अवश्य कहना चाहूंगा कि आप इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अपनी अन्तिम राय दें ।"[2]

इस महत्वपूर्ण पत्र द्वारा बहुत सी बातें स्वतः स्पष्ट हो जाती हैं । जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि मिशनरियों के आगमन से यहां के राजाओं को इस बात का डर था कि यह मिशनरियां लोगों को धीरे-धीरे इसाई धर्म में परिवर्तित कर लेंगी । उन्हें यह भी डर था कि इसाई लोग गौमांस खाते थे जो हिन्दू धर्म में वर्जित था । इन इसाईयों के यहां बस जाने से गौहत्या और गौमांस के इस क्षेत्र में आने का भय भी उचित ही था । इसके अतिरिक्त

---

1. **फाइल संख्या** - 62-डी/1919-छतरपुर दीवान का पत्र दिनांक 19 मार्च, 1919.
2. वही

उन्हें इस बात का आभास था कि क्षेत्र के लोग इन इसाई मिशनरियों को पसन्द नहीं करते । अतः जब लोगों द्वारा मिस बार्ड के प्रस्ताव के विरोध में महाराजा छतरपुर को प्रार्थना पत्र दिया गया तो उन्होंने मिस बार्ड को भूमि देने सम्बन्धी विचार त्याग दिया । इसीलिए छतरपुर के दीवान द्वारा यह जानकारी दी गई कि मिशनरियों को भूमि दिये जाने के सम्बन्ध में जो बातचीत की गई थी, बाद में ऐसा न करने का फैसला किया गया था । पत्र की भाषा से ऐसा प्रतीत होता है कि रियासती राजा पूरी तरह से बुन्देलखण्ड के पोलिटिकल एजेन्ट की इच्छा के सामने नतमस्तक थे और न चाहते हुए भी कभी-कभी ऐसे कार्यों को करने के लिये विवश थे जो न तो उन्हें और न ही उनकी जनता को प्रिय थे । यह भी स्पष्ट था कि पोलिटिकल एजेन्ट अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की मदद करना चाहता था । शायद यह उस ब्रिटिश नीति का ही परिणाम था जिसके अनुसार सरकार द्वारा इन मिशनरियों को समर्थन एवं सहायता दी जाती थी ताकि एक ऐसे वर्ग का निर्माण किया जा सके जो ब्रिटिश सरकार की नीतियों का समर्थक हो और अंग्रेजी

शासन के प्रति वफादार हो । यह बात पोलिटिकल एजेन्ट के 22 मार्च, 1919 के पत्र से और भी स्पष्ट हो जाती है । उसने दीवान छतरपुर को लिखा - "आपके पत्र को पढ़ने से ऐसा लगता है कि मिस बार्ड का यह कहना कि उसे भूमि का टुकड़ा दिया गया था वास्तव में सच है । ऐसी परिस्थिति में मेरे विचार में आप अपने वायदे को पूरा करने के लिये प्रतिबद्ध हैं । जहां तक आपका यह कहना है कि भूमि मिस बार्ड को दी गई थी, मिशन को नहीं, आप अच्छी तरह जानते हैं कि भूमि की आवश्यकता मिशन के लिये है । मिस बार्ड को अपने लिये उसकी कोई आवश्यकता नहीं है ।[1] अतः यदि आप भूमि देने का निर्णय लें तो वह मिशन के लिये होना चाहिए ।"[2] उसने आगे लिखा कि - "इस मामले का निर्णय आपको महाराजा के आदेश के अनुसार करना चाहिए । मैंने मिस बार्ड को बता दिया है कि मैं न तो उसके पक्ष में

---

1. **फाइल संख्या-** 62-डी/1919 - अर्द्धशासकीय {गोपनीय} पत्र संख्या 659 दिनांक 22 मार्च, 1919 पोलिटिकल एजेन्ट का दीवान छतरपुर को पत्र ।

2. वही

और न ही उसके विरोध में कोई हस्तक्षेप करूंगा । यद्यपि सामान्य रूप से मैं यूरोपीय और अमेरिकन लोगों को रियासती राज्यों में इमारतें बनाने के लिये अनुमति दिये जाने के पक्ष में नहीं हूं ।[1] यदि आप भूमि देने का निर्णय लें तो मेरे विचार में मेरे 17 मार्च, 1919 के पत्र में दिये गये सुझाव की शर्त पर यह भूमि देनी चाहिए । यह भी अच्छा रहेगा यदि आप मिशन को इस बात के लिए बाध्य कर लें कि वह जो भी इमारत बनाना चाहें, काम शुरू करने से पहले उसकी योजना की स्वीकृति आपसे ले ली जाये । इस प्रकार आप यह सुनिश्चित कर सकेंगे कि अगर कभी भविष्य में भूमि की इस अनुमति को निरस्त कर दिया गया, ऐसी स्थिति में मिशन द्वारा बनायी गई इमारत दरबार के लिये उपयोगी रहेगी ।"[2]

यद्यपि पोलिटिकल एजेन्ट द्वारा यह कहा गया था कि वह न तो इस महिला मिशनरी के पक्ष में

---

1. **फाइल संख्या-** 62-डी/1919-अर्द्धशासकीय (गोपनीय) पत्र संख्या-659 दिनांक 22 मार्च, 1919-पोलिटिकल एजेन्ट का दीवान छतरपुर को पत्र.
2. वही

और न ही उसके विरोध में कोई हस्तक्षेप करेगा लेकिन पत्र में भूमि दिये जाने से सम्बन्धित सुझावों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वह मिशन के पक्ष में था । रियासती राजा उसे अप्रसन्न नहीं करना चाहते थे । अतएव दिनांक 4 अप्रैल, 1919 को दीवान छतरपुर ने उसे अवगत कराया कि मिस बार्ड को कुछ शर्तों पर भूमि दे दी गई है ।[1] दीवान और मिस बार्ड के बीच बातचीत के दौरान इन शर्तों में कुछ संशोधन स्वीकार कर लिया गया है ।[2] इन संशोधित शर्तों के अनुसार राज्य क्षेत्र में गौहत्या नहीं की जायेगी और न ही बाहर से राज्य में गाय का मांस लाया जायेगा ।[3] दूसरी शर्त के अनुसार राज्य के लोगों को जबरदस्ती इसाई नहीं बनाया जायेगा ।[4] इन दोनों शर्तों को ध्यान में रखते हुए मिशन द्वारा उस भूमि पर, जो उसे दरबार द्वारा दी गई थी, दरबार द्वारा इमारत का नक्शा

---

1. **फाइल संख्या-** 62-डी/1919-पत्र दिनांक 4 अप्रैल, 1919-दीवान छतरपुर का पत्र पोलिटिकल एजेंट को
2. वही
3. **फाइल संख्या-** 62-डी/1919-पत्र सं॰-2318 दिनांक 29 मार्च, 1919-दीवान छतरपुर का पत्र मिस बार्ड, अमेरिकन फ्रैन्डस मिशन, नौगांव को -
4. वही

स्वीकार किये जाने के बाद, इमारत का निर्माण किया जा सकता था । किन्तु दरबार ने यह शर्त भी रखी कि यह अनुमति एक माह का पूर्व नोटिस देकर दरबार द्वारा कभी भी वापिस ली जा सकती थी और ऐसी स्थिति में दरबार द्वारा मिशन को अनुमति वापिस लिये जाने के समय इमारत का अनुमानित मूल्य देना होगा ।[1] इस प्रकार अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन द्वारा छतरपुर में केन्द्र खोला गया ।

बुन्देलखण्ड मिशन ने चिकित्सा के कार्य को प्रभावी रूप से चलाने के लिये मिशन बोर्ड को एक पत्र लिखकर एक गाड़ी खरीदने के लिये मांग की ।[2] बुन्देलखण्ड के बीहड़ और पिछड़े हुए क्षेत्रों में सड़कों का नितान्त अभाव था । इसलिए महिला चिकित्सक एवं मिशन के डाक्टर आसानी से गांवों में नहीं पहुंच सकते थे । बोर्ड ने गाड़ी खरीदने की अनुमति प्रदान कर दी ।[3] अतः 1 सितम्बर, 1919 को इन

---

1. **फाइल संख्या**- 62-डी/1919-पत्र सं.-2318 दिनांक 29 मार्च, 1919-दीवान छतरपुर का पत्र मिस बार्ड, अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन, नौगांव को
2. रेसिल पिम का पत्र ईस्थर बार्ड को-दिनांक 3 सितंबर 1917-ए सेंचुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ 63-64.
3. वही

मिशनरियों ने हरपालपुर रेलवे स्टेशन से एक मोटर प्राप्त की जो मिशन बोर्ड द्वारा प्रदान की गई थी । बुन्देलखण्ड मिशन को यह मोटर प्राप्त हो जाने पर चिकित्सा सेवाओं का विस्तार करने तथा धर्म प्रचार का कार्य करने में एक नई आशा का संचार हुआ ।[1]

1 अप्रैल, 1921 को बुन्देलखण्ड के फ्रैन्डस मिशन की 25वीं वर्षगांठ मनाई गई । इस समय मिशन के कार्यों की समीक्षा भी की गई । इस अवधि के दौरान मिशन में कार्य करने वालों की संख्या में कुछ वृद्धि हो चुकी थी जिससे धर्म प्रचार एवं चिकित्सा कार्यों में काफी प्रगति हुई ।

दतिया में महिला अस्पताल की स्थापना

दतिया के राजा का विचार था कि दतिया में महिलाओं के लिये एक अस्पताल खोला जाये । इस सम्बन्ध में 1923 में जय आरोग्य अस्पताल, लश्कर, ग्वालियर में कार्यरत सब असिस्टेंट सर्जन डा॰ (श्रीमती) एम॰ जोसफसन ने दतिया के दीवान को एक पत्र लिखा कि उसने आगरा मेडिकल स्कूल से एल॰एम॰पी॰

---

1. रेसिल पिम का पत्र ईस्थर बार्ड को-दिनांक 3 सितंबर, 1917-ए सेन्चुरी ऑफ प्लांटिंग - पृष्ठ 63-64.

परीक्षा पास की है और उसे यूनियन मिशन जनाना अस्पताल, झांसी में दस वर्ष कार्य करने का अनुभव प्राप्त है ।[1] उसने लिखा कि वह लगभग एक वर्ष से जे.ए.अस्पताल, ग्वालियर में कार्यरत थी किन्तु उसकी पुत्री का स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण वह ग्वालियर छोड़ना चाहती थी । इसलिए वह दतिया में खोले जाने वाले जनाना अस्पताल में कार्य करने को तैयार थी ।[2] इस प्रार्थना पत्र द्वारा उसने दतिया के दीवान से यह भी जानना चाहा कि इस महिला अस्पताल में कार्य करने की शर्तें क्या होंगी और क्या डाक्टर के रहने के लिये क्वार्टर उपलब्ध कराया जायेगा ।[3] उसका यह प्रार्थना पत्र दतिया के दीवान काजी अज़ीजुद्दीन अहमद द्वारा 26 जनवरी, 1923 को एजेन्सी सर्जन के पास उसके विचार जानने हेतु भेजा गया ।[4] जिसके उत्तर में एजेन्सी सर्जन ने जोसफसन को लिखा कि इस नियुक्ति के लिए रूपये 100/- प्रतिमाह और रहने के लिये क्वार्टर दिया जायेगा ।[5] जोसफसन ने अपने

---

1. **फाइल संख्या-** 111/1923-एजेन्सी सर्जन कार्यालय की फाइल-दतिया में जनाना अस्पताल की स्थापना-श्रीमती जोसफसन का प्रार्थना पत्र-
2. वही
3. वही
4. **फाइल संख्या-** 111/1923-अजीजुद्दीन अहमद का पत्र कर्नल जे.आर.जे.टैरिल, एजेन्सी सर्जन-बुन्देलखंड, नौगांव को-
5. **फाइल संख्या-** 111/1923-पत्र दिनांक 31 जनवरी, 1923-एजेन्सी सर्जन का पत्र जोसफसन को-

अगले पत्र में एजेन्सी सर्जन को लिखा कि उनके पत्र में आने जाने का भत्ता रूपये 25/- का जिक्र नहीं था । वह यह भी जानना चाहती थी कि रहने के लिये जो क्वार्टर उपलब्ध कराया जायेगा, उसमें रहने के लिये फर्नीचर वगैरह की व्यवस्था है अथवा नहीं ।[1]

इसी बीच, जबकि जोसफसन की नियुक्ति के बारे में यह पत्र व्यवहार चल रहा था, दतिया के दीवान ने 16 जून, 1923 को एजेन्सी सर्जन को एक महत्वपूर्ण पत्र लिखा जिससे ज्ञात होता है कि दतिया के इस महिला अस्पताल का कार्य कुछ मिशनरियां अपने हाथ में लेना चाहती थीं । उसने लिखा कि "मुझे ज्ञात हुआ है कि डॉ॰ अरनेस्ट यहां एक महिला डाक्टर भेजने का प्रबन्ध कर रही हैं । अगले महीने धौलपुर जनाना मिशन ≬Dholpore Zenana Mission ≬ की ओर से मिस हेमपटन ≬ Hampton ≬ मुझे मिलने आ रही हैं । उसने मुझे आज सूचित किया है कि डा॰ अरनेस्ट

1· फाइल संख्या- 111/1923 - पत्र दिनांक 6 फरवरी 1923 - जोसफसन का पत्र एजेन्सी सर्जन को -

द्वारा लेन्डूर (Landour) से एक महिला डाक्टर को बुलाया जा रहा है ताकि वह धौलपुर डिस्पेन्सरी को देख ले जिससे दतिया का काम शुरू किया जा सके।"[1] उसने एजेन्सी सर्जन से इस पत्र द्वारा पूछा कि दतिया महिला डिस्पेन्सरी अमेरिकन मिशन को हस्तान्तरित करने के बारे में डा· अरनेस्ट से पता किया जाये।[2] इस पत्र में दतिया दीवान द्वारा यह भी पूछा गया था कि क्या अमेरिका में बोर्ड ने यह डिस्पेन्सरी दो हजार रूपये प्रतिवर्ष पर लेना स्वीकार कर लिया है।[3] दीवान द्वारा यह सूचना मांगे जाने का कारण यह था कि एक दूसरा मिशन भी यह कार्य करने के लिये इस क्षेत्र में आना चाहता था। दतिया दीवान ने लिखा "चूंकि वह इन दोनों मिशन में कोई मतभेद नहीं पैदा करना चाहता था इसलिए डा· अरनेस्ट को धौलपुर मिशन के बारे में कुछ भी न बताया जाये।"[4]

1· **फाइल संख्या** - 111/1923-अर्द्धशासकीय पत्र संख्या-3729, दिनांक 16 जून, 1923-दतिया के दीवान का पत्र·

2· वही

3· वही

4· वही

यह पत्र दतिया में महिला अस्पताल के लिये अमेरिकी मिशनरियों की सहायता प्राप्त करने की दिशा में दतिया के दीवान की ओर से एक महत्वपूर्ण कदम था । इस सन्दर्भ में डा· अरनेस्ट ने यह जानकारी दी कि यद्यपि उनका बोर्ड दतिया में यह कार्य उनके द्वारा किये जाने का इच्छुक था । लेकिन इस कार्य के लिये धन भेजने के बारे में बोर्ड द्वारा कुछ भी नहीं कहा गया था और वह झांसी के कोष से इस काम के लिये धन देने में असमर्थ थी ।[1] डा· अरनेस्ट ने यह भी बताया कि अभी तक वहां रहने के लिये किसी डाक्टर की व्यवस्था भी नहीं हो सकी थी । इन परिस्थितियों में उसने यह कार्य शुरू करने के लिये दतिया के दीवान से कुछ और समय मांगा । उसके अनुसार यद्यपि उस वर्ष वह इस कार्य को प्रारम्भ कर सकने में अपने आपको असमर्थ पा रही थी लेकिन उसने यह इच्छा व्यक्त की कि वह महीने में दो बार डिस्पेन्सरी कार्य के लिये दतिया जाने

111/1923

1· **फाइल संख्या**/- अर्द्धशासकीय पत्र संख्या - 1702, दिनांक 18 जून, 1923 - एजेन्सी सर्जन का पत्र -

को तैयार थी और अस्पताल में भर्ती कराये जाने वाले रोगियों को झांसी में अपने अस्पताल में ले जा सकती थी । उसके अनुसार उन्हें शीघ्र अमेरिका से एक और डाक्टर आने की आशा थी लेकिन उसे इसकी कोई निश्चित सूचना न थी ।[1]

डॉ॰ अरनेस्ट द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर यह लगता है कि यह अमेरिकी मिशनरी जिसने झांसी के झोकनबाग में मिशन अस्पताल की स्थापना की थी, दतिया में भी चिकित्सा कार्य करने की इच्छुक थी लेकिन धन और उपयुक्त डाक्टर के अभाव में उसके लिये दतिया में महिला अस्पताल का कार्य करना सम्भव न हो पा रहा था ।

सम्बन्धित फाइल से कुछ अन्य महत्वपूर्ण बातें भी सामने आयीं । एजेन्सी सर्जन ने दतिया दरबार के दीवान को इस बात के लिये सहमत कर लिया कि जब तक डॉ॰ अरनेस्ट को अमेरिका से धन प्राप्त नहीं होता तब तक दरबार द्वारा उसे यह धन उपलब्ध

1· **फाइल संख्या-** 111/1923-अर्द्धशासकीय पत्र संख्या-1702 पैड (Pd.)-18 जून, 1923-एजेन्सी सर्जन का पत्र·

कराया जाये । उसने डॉ॰ अरनेस्ट को यह भी बताया कि वह और दतिया दरबार दोनों ही इस मिशनरी द्वारा दतिया में यह कार्य किये जाने के इच्छुक हैं ।[1] इन परिस्थितियों में जबकि डॉ॰ अरनेस्ट ने दतिया में महिला अस्पताल का कार्य शुरू करने की इच्छा व्यक्त की थी, एजेन्सी सर्जन के अनुसार यह कार्य धौलपुर मिशन को नहीं दिया जाना चाहिए था ।[2] उसका विचार था कि धौलपुर के डाक्टर के स्थान पर डॉ॰ अरनेस्ट दतिया में अधिक अच्छी तरह यह कार्य कर सकेगी और उसे ही इस कार्य के लिये पहले निमंत्रित किया गया था । अतः यह काम उसे ही सौंपा जाना चाहिए ।[3]

एजेन्सी सर्जन की सिफारिश पर दतिया के राजा ने डॉ॰ अरनेस्ट द्वारा इस महिला अस्पताल का कार्य शुरू किये जाने के सम्बन्ध में उसे आर्थिक सहायता देना स्वीकार कर लिया ।[4] चूंकि यह कार्य डॉ॰ अरनेस्ट

---

1. **फाइल संख्या**- 111/1923-पत्र संख्या-1702-18 जून 1923 - एजेन्सी सर्जन का पत्र॰
2. वही
3. वही
4. **फाइल संख्या**-111/1923-पत्र दिनांक 28 जून, 1923 दीवान दतिया दरबार का पत्र॰

के सुपुर्द किये जाने का निर्णय कर लिया गया था इसलिये दतिया के दीवान ने धौलपुर मिशन की महिलाओं को यह सूचित कर दिया कि इस कार्य के लिये अब उनकी सेवाओं की आवश्यकता नहीं थी ।[1]

अमेरिकन महिला मिशनरी को दतिया के इस महिला अस्पताल का कार्य भार सौंपने के लिये दतिया राज्य द्वारा कुछ शर्तें रखी गईं थीं जो दीवान द्वारा 28 अगस्त, 1923 को एजेन्सी सर्जन के विचारार्थ भेजी गईं[2] महिला अस्पताल, दतिया अमेरिकन महिला मिशन को निम्न शर्तों के आधार पर हस्तांतरित करने का फैसला किया गया था :-

पहली शर्त के अनुसार राज्य इस कार्य के लिये दो हजार रूपये प्रतिवर्ष देगा । दूसरी शर्त के अनुसार यह तय किया गया कि अस्पताल में जो भी दवाईयां, फर्नीचर, कपड़े, मशीनें इत्यादि थीं वह मिशन को दे दी जायेंगी । इस समझौते की तीसरी शर्त यह रखी गई

---

1. **फाइल संख्या-** 111/1923-पत्र दिनांक 28 जून, 1923-दीवान दतिया दरबार का पत्र
2. **फाइल संख्या-** वही - अर्द्धशासकीय पत्र सं० - 622, 28 अगस्त, 1923-दीवान दतिया राज्य का पत्र एजेन्सी सर्जन को -

कि अस्पताल में भारतीय महिला डाक्टर की नियुक्ति होने पर उसे रहने के लिये मुफ्त फर्नीचर रहित क्वार्टर अस्पताल के निकट उपलब्ध कराया जायेगा । अगर किसी यूरोपियन महिला डाक्टर की नियुक्ति होगी तो उसे उपयुक्त आवास, अगर सम्भव हो, दिया जायेगा । मिशन को अस्पताल में एक प्रशिक्षित महिला डाक्टर की नियुक्ति करनी होगी । समझौते की पांचवी शर्त यह थी कि अस्पताल की महिला डाक्टर राजपरिवार की निःशुल्क चिकित्सा करेगी । एक महत्वपूर्ण शर्त जो इस महिला अस्पताल को अमेरिकन् महिला मिशन को दिये जाने के सम्बन्ध में रखी गई उसके अनुसार मिशन को अस्पताल में या मरीजों के घर पर बाइबिल पढ़ाने अथवा धार्मिक गान की स्वतंत्रता केवल मरीजों की सहमति से ही होगी और उनकी भावनाओं को आहत नहीं किया जायेगा । अस्पताल में आवश्यकतानुसार दवाईयों और जरूरी मशीनों का पूरा भण्डार रखा जायेगा और गरीब मरीजों की निःशुल्क चिकित्सा की जायेगी । यह समझौता किसी भी पक्ष द्वारा तीन महीने का पूर्व नोटिस देकर बिना हरजाने के खत्म किया जा सकता था । इसकी अन्तिम शर्त यह थी कि किसी मतभेद की दशा में एजेन्सी सर्जन

एवं दीवान का निर्णय अन्तिम होगा ।[1]

इस प्रकार महिला अस्पताल, दतिया को अमेरिकी महिला मिशनरियों को दिये जाने के सम्बन्ध में दतिया के दीवान द्वारा उपरोक्त नौ शर्तें रखी गई । एजेन्सी सर्जन ने यह सुझाव दिया कि अस्पताल के डाक्टर द्वारा रोगियों का रजिस्टर बनाया जाये और निर्धारित प्रपत्र, जो अस्पताल को दरबार द्वारा उपलब्ध कराया जायेगा, पर अस्पताल द्वारा वार्षिक लेखा-जोखा एजेन्सी सर्जन को भेजा जाये ताकि उसे मध्य भारत एजेन्सी के विवरण में शामिल किया जा सके ।[2] उसे दतिया दरबार द्वारा बतायी गई अन्य शर्तें स्वीकार थीं ।[3]

एजेन्सी सर्जन की स्वीकृति मिल जाने के बाद दीवान ने डॉ॰ अरनेस्ट को इस कार्य के सम्बन्ध में

1· **फाइल संख्या-** 111/1923-अर्द्धशासकीय पत्र सं॰-622 दिनांक 28 अगस्त, 1923-दतिया दीवान का पत्र एजेन्सी सर्जन को -

2· **फाइल संख्या-** वही - पत्र दिनांक 6 सितम्बर, 1923 एजेन्सी सर्जन का पत्र दतिया दीवान को·

3· वही

दतिया दरबार की उपरोक्त शर्तों से अवगत कराया । ऐसा प्रतीत होता है कि इस महिला मिशनरी को दतिया दरबार की समझौते की कुछ शर्तें स्वीकार नहीं थीं । इस सम्बन्ध में दीवान के 8 अक्तूबर, 1923 के पत्र संख्या - 1041 से, जो झांसी में कार्यरत डा॰ अरनेस्ट को लिखा गया था, बहुत महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है । पत्र के अनुसार दीवान ने डॉ॰ अरनेस्ट को सूचित किया कि "उसके 21 सितम्बर, 1923 के पत्र के संदर्भ में समझौते का जो नया प्रारूप भेजा गया है उस पर सावधानी पूर्वक विचार किया गया तथा इस सम्बन्ध में दरबार को कुछ आपत्ति है ।" [1] उसने लिखा कि "आपको इस सम्बन्ध में लिखे जाने से पूर्व नागरिकों की एक मीटिंग बुलायी गई थी और उन्होंने यह फैसला किया कि बाइबिल का उपदेश और दूसरे धार्मिक गान सम्बन्धित व्यक्तियों की स्वीकृति से ही होने चाहिएं और किसी भी दशा में यह प्रत्येक व्यक्ति पर थोपे नहीं

---

1. **फाइल संख्या** - 111/1923 - अर्द्धशासकीय पत्र संख्या - 1041 दिनांक 8 अक्तूबर, 1923 - दतिया दीवान का पत्र डॉ॰ ए॰एल॰अरनेस्ट, एकरमेन-होयत मेमोरियल अस्पताल, झांसी को -

जाने चाहिएं । मरीजों की भावनाओं का आदर करना बहुत आवश्यक है ।"[1] इस पत्र के साथ दतिया दीवान ने डॉ. अरनेस्ट द्वारा भेजे गये समझौते के प्रारूप की कुछ शर्तों पर अपनी टिप्पणियां भी भेजीं । उसने लिखा कि "उसे आशा है कि दरबार द्वारा प्रस्तावित शर्तें, जो बहुत उचित हैं, मिशन को मान्य होंगी और मिशन द्वारा शीघ्र ही यह कार्य शुरू कर दिया जायेगा ।"[2]

स्पष्ट था कि दतिया दरबार मिशन द्वारा दतिया में महिला अस्पताल शुरू किये जाने के पक्ष में था । उसके द्वारा प्रस्तावित शर्तें भी बहुत कठोर नहीं थीं बल्कि परिस्थितियों के अनुकूल ही थीं । वह किसी भी दशा में लोगों पर जबरदस्ती इसाई-मत थोपे जाने के पक्ष में नहीं था । ऐसा प्रतीत होता है कि डॉ. अरनेस्ट को दतिया दरबार की यह शर्तें स्वीकार

---

1. **फाइल संख्या** - 111/1923 - अर्द्धशासकीय पत्र संख्या 1041, दिनांक 8 अक्तूबर, 1923 - दतिया दीवान का पत्र डॉ. अरनेस्ट को -
2. **फाइल संख्या** - वही पत्र संख्या-1315 दिनांक 1 नवम्बर, 1923 - दतिया दीवान का पत्र एजेन्सी सर्जन को -

नहीं थी क्योंकि सम्भवत: दतिया में महिला अस्पताल खोलने के साथ–साथ उनका इरादा वहाँ के लोगों को ईसाई धर्म में परिवर्तित करना था जो इस समझौते के लागू होने पर सम्भव नहीं था। अत: दरबार द्वारा प्रस्तावित शर्ते मानने से मिशन के लोगों ने इन्कार कर दिया ।[1]

परिणाम स्वरूप दतिया दरबार द्वारा महिला डाक्टर जोसफसन को, जिसने इस अस्पताल में कार्य करने के लिए आवेदन किया था, यहाँ नियुक्त कर लिया गया।[2] उसे सौ रूपये प्रतिमाह वेतन, पच्चीस रूपये आने जाने का खर्च, रहने के लिए क्वार्टर एवं राज्य के नियमों के अनुसार छुट्टी तथा पेन्शन इत्यादि दिया जाना तय किया गया था, यद्यपि वह अस्पताल के अतिरिक्त भी मरीजों को फीस लेकर देख सकती थी लेकिन उसे राजघराने की महिलाओं को नि:शुल्क सेवा उपलब्ध करानी पड़ती थी। उसे प्रारम्भ में एक वर्ष के लिए नियुक्त किया गया था । यह

---

1. **फाइल संख्या,** वही–पत्र संख्या 1315 दिनांक 1 नवम्बर 1923–दीवान दतिया का पत्र एजेन्सी सर्जन को–
2. वही

अवधि पूरी होने पर किसी भी तरफ से सेवा समाप्ति के लिए एक महीने का पूर्व नोटिस पर्याप्त था।[1] इन सेवा शर्तो में कुछ संशोधन किया गया जिसमें उसे सौ रूपये प्रतिमाह वेतन के साथ प्रोविडेन्ट फन्ड सात रूपये दिया जाना भी स्वीकार किया गया जो उसके खाते में स्टेट बैंक दतिया में जमा किया जाना था।[2]

इस प्रकार यद्यपि दतिया दरबार और एजेन्सी सर्जन दोनों ही इस क्षेत्र मे अमेरिकन मिशनरी द्वारा चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराये जाने के इच्छुक थे, लेकिन मिशन द्वारा इस कार्य में अधिक दिलचस्पी न दिखायी जाने के कारण यह कार्य दतिया दरबार द्वारा ही शुरू किया गया, मिशन के व्यवहार से यह स्पष्ट था कि वह चिकित्सा सेवा के साथ-साथ क्षेत्र के लोगों को ईसाई धर्म में परिवर्तित करना चाहते थे किन्तु दतिया दरबार द्वारा इस बात का स्पष्ट शब्दों में विरोध किये जाने पर इस मिशन ने

---

1. **फाइल संख्या** 111/1923-पत्र दिनांक 15 नवम्बर 1923-दीवान दतिया दरबार का पत्र एजेन्सी सर्जन को-
2. पत्र दिनांक 20 नवम्बर 1923-दतिया दीवान का पत्र

अस्पताल के कार्य में भी अधिक रूचि नहीं दिखायी ।

छतरपुर में अस्पताल की स्थापना

छतरपुर के महाराजा जिनकी शिक्षा थियोडोर मोरिसन **Theodore Morison** की देख रेख में हुई थी, इस क्षेत्र में अस्पताल की स्थापना के महत्व से पूरी तरह परिचित थे ।[1] 1921 में उन्होंने अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन की महिला मिशनरी ईस्थर बार्ड से कहा कि मिशन द्वारा इस क्षेत्र में एक अस्पताल का निर्माण किया जाये तथा इस उद्देश्य के लिए महाराजा ने उदारतापूर्वक भूमि भी दान में दे दी।[2] किन्तु इस कार्य के लिए ईस्थर बार्ड को आर्थिक सहायता आसानी से उपलब्ध नहीं हो सकी । उसने निराश होकर कहा था कि, "बहुत से ओहियो मित्र अस्पतालों की अपेक्षा चर्च बनाना अधिक पसन्द करेंगे ।" छतरपुर में इस अस्पताल का

---

1. **मारजोरिस साइक्स** – कवेकरस इन इण्डिया–कवेकर इम्बैसीज़–पृष्ठ 133–134
2. वही

कार्य पूरा करने में लगभग दस वर्ष लगे । [1] लेकिन शीघ्र ही इस अस्पताल को बहुत ख्याति प्राप्त हुई तथा इसके स्टाफ द्वारा नेपाल में क्रिश्चियन अस्पताल खोलने के लिए महत्वपूर्ण सहायता प्रदान की गयी । [2] अभी भी इस अस्पताल के कार्य की देख रेख एक ईसाई संगठन द्वारा ही की जाती है तथा यह इमेनुअल हास्पिटल एसोसिएशन आफ इवेनजिलकिल क्रिश्चियन हास्पिटल का सदस्य है । [3]

नौगांव में अस्पताल निर्माण के कार्य में अधिकांश ऐसे मजदूरों को लगाया गया था जो अकाल के कारण रोजगार की तलाश में थे । इस नयी इमारत की योजना ईस्थर बार्ड, डा. रूथ हुल बेनिट तथा एजेन्सी सर्जन मेजर लेजर ने तैयार की थी । [4] बुन्देलखण्ड की गरम जलवायु को देखते हुए नौगांव अस्पताल का निर्माण इस प्रकार किया गया कि गर्मी के मौसम में मरीजों पर

---

1. मारजोरी **साइक्स**– क्वेकरस इन इण्डिया:– क्वेकर इम्बैसीज – पृष्ठ 133–134
2. वही
3. वही
4. **ए सेन्चुरी आफ प्लांटिग** – पृष्ठ 92–93

अधिक गर्मी का प्रभाव न पड़े ।[1] उन दिनों बुन्देलखण्ड मिशन बोर्ड का अध्यक्ष क्लाड रोने था जो नौगांव के इस अस्पताल के निर्माण के लिए अत्यन्त उत्सुक था, जब उसे यह पता चला कि मिस बार्ड को इस नये कार्य को करने में आर्थिक कठिनाई उठानी पड़ रही है तो उस समय उसने धनराशि भेजकर ईस्थर बार्ड को सहायता प्रदान की ।[2] कई वर्षो तक बुन्देलखण्ड के मिशनरियों को यह जानकारी नहीं थी कि नौगांव के अस्पताल के निर्माण के लिए धन कहाँ से प्राप्त हो रहा है बाद में उन्हें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि यह नया अस्पताल एलिजाबेथ जेन की स्मृति में उनकी पुत्रियों कैथरीन तथा डा. जौनी द्वारा दी गयी भेंट राशि के आधार पर बन रहा है ।[3] एलिजाबेथ जेन अमेरिका की निवासी थीं उसका जन्म 29 जनवरी, 1841 को हुआ था उसकी मृत्यु 24 अगस्त 1893 में हुई उसी की स्मृति में उसकी पुत्रियों द्वारा

---

1. **ईस्थर बार्ड की डायरी** जुलाई 19, 1929
2. **लुई ऐलिट का पत्र ईस्थर बार्ड को**–मई 6, 1930
3. **ए सेन्चुरी आफ प्लांटिग**–पृष्ठ 92–93 तथा **कैथरीन स्टाकर का पत्र ईस्थर बार्ड को**, जुलाई 24, 1929

उपलब्ध करायी गयी आर्थिक सहायता के आधार पर इस इमारत का निर्माण कराया गया । [1] जिस समय इस इमारत के निर्माण का कार्य चल रहा था, उस समय बुन्देलखण्ड मिशन की सुपरिटेन्डन्ट ईस्थर बार्ड को अनेक बीमारियों का शिकार होना पड़ा, अस्पताल के कार्य की देख रेख करने वाले ईसाई स्तुति प्रकाश तथा दयालचन्द्र सिंह को भी काफी कठिनाई उठानी पड़ी लेकिन उन्हें यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई कि दिसम्बर 1930 में भारत के वाइसराय स्वयं इस अस्पताल का उद्‌घाटन करेंगे । [2]

अस्पताल में कार्य करने के लिए एलिजाबेथ वार्ड की नियुक्ति की गई थी, मिशन बोर्ड ने डा. वार्ड की सेवाओं की तथा उनके सादे चरित्र की प्रशंसा की । [3] 1924 में उसकी नियुक्ति लुधियाना हो जाने के पश्चात् 28 जनवरी 1925 को डा.फ्लेमिंग

---

1. **ए सेन्चुरी आफ प्लांटिग** – पृष्ठ 92 – 93
2. वही
3. वही – पृष्ठ 83

को बुन्देलखण्ड के इस अस्पताल में भेजा गया, डा. फ्लेमिंग ने डाक्टरी की शिक्षा प्राप्त करने के बाद ईरान में रहकर पॉच वर्ष तक कार्य करने का अनुभव भी प्राप्त किया था। [1] तथा कुछ वर्ष तक दक्षिण भारत में रहकर चिकित्सा का कार्य भी किया था, डा. रूथ हुल बेनिट नवम्बर 1928 को भारत पहुँची तथा 1929 तक इस महिला मिशनरी ने छतरपुर के अस्पताल में अपने सेवा कार्य का आरम्भ किया, उस अस्पताल में दो नर्से ऐलेना काकिन्स तथा नेल लेविस, डा. हुल की सहायता करती थी। [2]

अमेरिकन फ्रेन्ड्स मिशन की मिस ईस्थर बार्ड द्वितीय श्रेणी केसर – ए – हिन्द मेडल से सम्मानित

फ्रेन्ड्स मिशन नौगांव की महिला मिशनरी मिस बार्ड की सेवाओं को देखते हुए 1 जनवरी 1930 को उसके सेवा कार्य हेतु उसे वाइसराय द्वारा केसर – ए – हिन्द का चॉदी का मेडल प्रदान

---

1. **ए सेन्चुरी आफ प्लांटिग** – पृष्ठ 83
2. वही पृष्ठ 91

करने का फैसला किया गया पोलिटिक्ल एजेन्ट बुन्देलखण्ड को सचिव मध्य भारत इन्दौर की तरफ से एक तार (टेलीग्राम) प्राप्त हुई जिसमें यह कहा गया था कि मिस बाई के लिए जिस सम्मान की सिफारिश की गयी थी वह स्वीकार कर लिया गया है । [1]

इसके लिए उसे सेन्ट्रल इण्डिया द्वारा सीधे भी बधाई दी जायेगी ।[2]

केसर – ए – हिन्द मेडल की स्थापना 10 अप्रैल 1900 के अधिनियम के अनुसार की गयी थी और इन नियमों में क्रमशः 8 जुलाई 1901 एवं 9 जुलाई 1912 में कुछ संशोधन किये गये थे । इस मेडल की स्थापना इग्लैंड के सम्राट द्वारा भारत में ब्रिटिश राज्य में जनसेवा के कार्यो को बढ़ावा देने हेतु की गयी थी, इस सम्बन्ध में कुछ नियम भी निर्धारित किये गये जिनमें मुख्य यह थे –

(1) इस सम्मान का नाम भारत में जनसेवा के लिए "केसर – ए – हिन्द मेडल" होगा ।

---

1. **फाइल संख्या** 1 – ए/1930 – सचिव मध्य भारत का तार पोलिटिकल एजेन्ट को
2. वही

(2) यह मेडल जाति, व्यवसाय, स्थिति अथवा लिंग के भेदभाव के बिना किसी भी उस व्यक्ति को दिया जा सकेगा जिसने भारत में जनसेवा के कार्यों को बढ़ावा देने के लिए कोई महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सेवा का कार्य करके अपनी एक पहचान बनाई हो ।

(3) इस सम्मान से सम्बन्धित तीसरे नियम के अनुसार सम्मान की दो श्रेणियाँ होंगी – "भारत में जनसेवा के लिए प्रथम श्रेणी का "केसर – ए – हिन्द मेडल" और "भारत में जनसेवा के लिए द्वितीय श्रेणी का केसर – ए – हिन्द मेडल" ।

(4) प्रथम श्रेणी के मेडल का सम्मान सम्राट और उसके उत्तराधिकारियों द्वारा दिया जायेगा और यह सेक्रेटरी आफ स्टेट फार इण्डिया की सिफारिश पर ही प्रदान किया जायेगा ।

(5) द्वितीय श्रेणी का मेडल भारत में गवर्नर जनरल द्वारा प्रदान किया जायेगा।

(6) इस मेडल में ओवल के आकार का एक बैज होगा, प्रथम

श्रेणी के लिए यह सोने का होगा और द्वितीय श्रेणी के लिए यह मेडल चाँदी का होगा इसके ऊपर एक तरफ सम्राट की मुहर होगी और दूसरी तरफ "भारत में जनसेवा के लिए केसर – ए – हिन्द मेडल" लिखा होगा और यह सीने पर बांयी ओर एक गहरे नीले रिबन द्वारा लटकाया जायेगा ।

(7) जिन व्यक्तियों को किसी भी श्रेणी का यह मेडल प्रदान किया जायेगा उनका नाम भारत के गजट एवं स्थानीय सरकार, जिसके क्षेत्र में उन्होंने सेवा की है, के गजट में प्रकाशित किया जायेगा और सभी सिविल तथा सरकारी सूचियों में शामिल किया जायेगा एवं भारत सरकार के विदेश विभाग के कार्यालय में उनके नाम का रिकार्ड रखा जायेगा ।

(8) यदि कोई सोने अथवा चाँदी का मेडल प्राप्त करता है और उसके बाद कोई ऐसा कार्य करता है जिसके अनुसार वह इस मेडल को प्राप्त करने का अधिकारी है, ऐसी और सेवा के लिए रिबन में, जिसके द्वारा मेडल

लटकाया गया है, एक बार (Bar) लगा दी जायेगी और ऐसी हर अतिरिक्त सेवा के लिए एक अतिरिक्त बार जोड़ी जा सकती है ।

9. यदि कोई व्यक्ति मेडल प्राप्त करने के बाद किसी अपराध अथवा दुराचार का दोषी पाया जाता है, ऐसी स्थिति में प्रथम श्रेणी के मेडल के लिए सम्राट की आज्ञा से राज्य के किसी मुख्य सचिव द्वारा प्रतिहस्ताक्षरित करके उसका नाम उन व्यक्तियों की सूचियों से हटा दिया जायेगा जिन्हें यह सम्मान प्राप्त हुआ है। दूसरी श्रेणी के मेडल के लिए इस नियम के अनुसार उसका नाम उन व्यक्तियों की सूचियों में से हटा दिया जायेगा जिन्हें इस श्रेणी का यह मेडल प्रदान किया गया है ऐसा भारत में गवर्नर जनरल के आदेश पर किया जायेगा उसे अपना मेडल गवर्नर जनरल को लौटाना होगा। इस नियम के अनुसार मेडल प्राप्त करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को निर्धारित प्रपत्र पर हस्ताक्षर करने होंगे कि अगर उपरोक्त शर्त के अनुसार उसका नाम सम्बन्धित सूची से

हटा दिया गया तो वह अपना मेडल वापस कर देगा। इस प्रकार लौटाये गये मेडल को पुनः प्रदान करने का अधिकार प्रथम श्रेणी के मेडल के लिये सम्राट या उसके उत्तराधिकारी तथा द्वितीय श्रेणी के मेडल के लिये भारत में गवर्नर जनरल का होगा ।

10\. इन नियमो को समाप्त करने, बदलने, संशोधन करने, बढाने, इनकी व्याख्या करने इत्यादि का पूरा अधिकार सम्राट या उसके उत्तराधिकारी को होगा ।[1]

इस प्रकार केसर–ए – हिन्द मेडल भारत में जन सेवा के लिये किये गये कार्यो के उपलक्ष में ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रदान किया जाने वाला एक महत्वपूर्ण सम्मान था। मिस ईस्थर वार्ड, जिसका पूरा नाम ईस्थर इयूजीनिया बार्ड (Esther Eugenia Baird) था, को यह सम्मान शिक्षा और नैतिकता के क्षेत्र में की गई उल्लेखनीय सेवाओं के लिये प्रदान किया गया था ।[2]

---

(1) **फाइल संख्या–** 1–ए/1930–केसर–ए – हिन्द मेडल से सम्बन्धित नियम ।

(2) ए सेन्चुरी आफ प्लान्टिग –पृष्ठ – 95

एक सरकारी अधिसूचना में यह घोषणा की गई कि इस मेडल को प्रदान करने के लिये वाइसराय स्वयं नौगाव आयेंगे और उसी समय नये अस्पताल की इमारत का उद्घाटन भी किया जायेगा।[1] यह मेडल 5 दिसम्बर 1930 को वाइसराय द्वारा मिस वार्ड को प्रदान किया गया ।[2] बुन्देलखन्ड में सभी मिशनरियां, वाइसराय तथा उनकी पत्नी इस समारोह में शामिल हुये, इसी समय वाइसराय ने नये अस्पताल के लिये महाराजा छतरपुर की ओर से दिये गये दो हजार रूपये की एक थैली भी मिस वार्ड को भेंट की।[3] दूसरे दिन वाइसराय की पत्नी श्रीमति इरविन ने स्वयं जाकर अस्पताल का निरीक्षण किया । वाइसराय की यात्रा के दौरान सुरक्षा की कड़ी व्यवस्था की गई थी। नौगांव के अस्पताल में नैल लेविस, किन्डर, एलेना काकिन्स, डा0 हुल आदि ने कठोर परिश्रम करके उक्त समारोह के आयोजन में सहायता की थी ।

---

(1) ए सेन्चुरी आफ प्लान्टिग पृष्ठ– 95

(2) **फाइल संख्या**–1–ए/1930–पत्र संख्या 1472–ए–मेजर फिशर का पत्र मध्य भारत, इन्दौर में गर्वनर जनरल के एजेन्ट के सचिव को–

(3) ए सेन्चुरी आफ प्लान्टिग पृष्ठ–95

जिस समय यह समारोह समाप्त हुआ उसके तुरन्त बाद छतरपुर की महारानी ने भी अस्पताल का निरीक्षण किया ।[1]

दिसम्बर के अन्त में अस्पताल की इमारत के निर्माण का कार्य पूरा हुआ । दूसरे दिन ही कर्नल टिरेल, एजेन्सी सर्जन ने इस अस्पताल के आरम्भ किये जाने की घोषणा की। 23 दिसम्बर, 1930 को इसाई समुदाय का एक सम्मेलन हुआ जिसमें नये अस्पताल के निर्माण कार्य की सराहना की गई, 26 जनवरी 1931 को अधिकारिक रूप से कर्नल टिरेल ने चांदी की चाबी से इस अस्पताल के गेट को खोला।[2] इस समय जो समारोह हुआ उसमें इसाई, हिन्दू, मुसलमान सभी शामिल हुये इसके अतिरिक्त छतरपुर के महाराजा भी इसमें शामिल थे ।[3]

---

(1) ए सेन्चुरी आफ प्लान्टिग – पृष्ठ– 95

(2) वही

(3) वही

अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन द्धारा नौगांव के वाचनालय के लिये कुछ समाचार पत्र मंगाये जाने के सम्बन्ध में सरकार की अनुमति प्राप्त करना

नौगांव के चर्च में, जिसकी स्थापना 1904 में की गई थी, एक रीडिंग रूम भी था। 9 मार्च 1931 को अमेरिकन महिला मिशनरी मिस कैरी बी. वुड (Miss C.B. Wood) ने पालिटिकल एजेन्ट मेजर फिशर को लिखा कि "नौगांव के लोगों के लिये बाजार क्षेत्र में हमारा एक रीडिंग रूम है और हमारी लाइब्रेरियन का कहना है कि लोग चाहते है कि हम उन्हे हिन्दी में "भारत" और अंग्रेजी में "लीडर" नामक समाचार पत्र दिया करें, मै हिंन्दी में "भारत" की एक प्रति भेज रही हूँ। कृपया यह बताये कि क्या यह दोनो समाचार पत्र नौगांव के लोगों को उपलब्ध कराने के लिये ठीक है।"[1] इस सम्बन्ध में पोलिटिकल एजेन्ट के कार्यालय में विचार किया गया। यह निर्णय लिया गया कि "लीडर" बहुत लोकप्रिय है और ऐसा प्रतीत होता है कि वह एक अच्छा समाचार पत्र है। "भारत" पोलिटिकल एजेन्ट के कार्यालय में नही आता था इसलिये उसके बारे में अधिक जानकारी

---

(1) **फाइल संख्या** – 11–ए/1931– पत्र दिनॉक 9 मार्च 1931 – सी0ई0 वुड का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को ।

नही थी किन्तु मिस वुड द्धारा भेजी गई समाचार पत्र की प्रति से ऐसा लगता था कि वह समाचार पत्र नरम विचार धारा का है और खरीदा जा सकता है। अतः पोलिटिकल एजेन्ट द्वारा मिस वुड के उपरोक्त पत्र के सन्दर्भ में यह उत्तर दिया गया कि "जहां तक जानकारी है, फिलहाल इन दोनो समाचार पत्रो की विचारधारा असाधारण नही है, लेकिन इस बात का प्रबन्ध करना होगा कि इन समाचार पत्रो में छपने वाली खबरो का समय–समय पर किसी जिम्मेदार व्यक्ति द्धारा निरीक्षण कराया जाये और किसी अनचाही विषय सामग्री के छपने का प्रथम संकेत पाते ही इनकी खरीद बन्द कर दी जाये"। [1]

इस प्रकार बुन्देलखण्ड में अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन द्धारा न केवल चर्च, अस्पताल और अनाथालय इत्यादि के कार्य किये जा रहे थे बल्कि इस मिशन ने लोगों के मनोरंजन हेतु साधन उपलब्ध कराने की कोशिश भी की इस तरह यह मिशन क्षेत्र के लोगों को अपने कार्यो से प्रभावित कर रहा था ।

---

(1) **फाइल संख्या** – 11–ए/1931, पत्र दिनॉक 9 मार्च, 1931– सी0ई0 वुड का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को

मलेहरा में साप्ताहिक दवाखाना का आरम्भ

23 फरवरी, 1931 को जबलपुर से प्रकाशित समाचार पत्र "लोकमत" ⟮पेज 9, कालम 4⟯ में यह खबर छपी कि छतरपुर के महाराजा द्वारा राज्य के अन्दरूनी हिस्से मलेहरा में एक साप्ताहिक दवाखाना खोला गया है जिसमें बीमार लोगों का इलाज किया जायेगा और उन्हे मुफ्त दवा दी जायेगी ।[1] हर सोमवार इस शहर में बाजार लगता है इसीलिये यह दवाखाना सोमवार को खुलेगा ।[2] यदि किसी मरीज को प्रतिदिन चिकित्सा की आवश्यकता हुई तो उसकी देखभाल का प्रबन्ध छतरपुर के पुरूष एवं महिला अस्पतालों में किया जायेगा ।[3] इस समाचार के अनुसार महाराजा छतरपुर, महारानी, सरस्वती सदन के सदस्य एवं शहर के कुछ व्यापारियों द्वारा

⟮1⟯ **फाइल संख्या**– 7/1931– एजेन्सी सर्जन कार्यालय फाइल– 23 फरवरी 1931 को "लोकमत" में प्रकाशित लेख का अनुवाद।

⟮2⟯ वही

⟮3⟯ वही

ईश्वर को धन्यवाद देने के फलस्वरूप एक अच्छी भेंट बुन्देलखन्ड के पोलिटिकल एजेन्ट को दी गई जो उसने किसी दानधर्म के कार्य में लगाये जाने हेतु बुन्देलखन्ड में एजेन्सी सर्जन मेजर लेजर को दे दी थी ।[1] यह भेंट पोलिटिकल एजेन्ट और मालवा भील कोर्पस के कमांडर पर कुछ लोगों द्वारा प्राणघातक हमला किये जाने एवं उनके सुरक्षित बच जाने के कारण दी गई थी।[2] इस धन का उपयोग मलेहरा में साप्ताहिक डिस्पेन्सरी (दवाखाना) खोलने के लिये किया गया ।[3] इस डिस्पेन्सरी का नाम पोलिटिकल एजेन्ट के नाम पर "फिशर साप्ताहिक डिस्पेन्सरी" रखा गया ।[4] इस सम्बन्ध में एक अन्य समाचार पत्र अजीजी हिन्द ने लिखा कि "हम महाराजा और पोलिटिकल एजेन्ट को इस शुभ कार्य के लिये बधाई देते है और विश्वास व्यक्त करते है कि दूसरे राज्य भी इसी प्रकारआम जनता की भलाई के लिए

---

(1) **फाइल संख्या** – 7/1931– एजेन्सी सर्जन कार्यालय फाइल –23 फरवरी 1931 को "लोकमत" में प्रकाशित लेख का अनुवाद।

(2) वही–तथा
फाइल संख्या 12–ए/1931, पोलिटिकल एजेन्सी फाइल–"अजीजी हिन्द" दिनांक 21 फरवरी 1931 से अनुवाद

(3) वही

(4) वही

साप्ताहिक डिस्पेन्सरियों का प्रबन्ध करेगें"।[1] अजीजी हिन्द ने लिखा कि यह एक बहुत अच्छा कार्य था और आशा की जाती है कि यह डिस्पेन्सरी छतरपुर के लिये मेजर फिशर एवं मालवा भील कोर्पस द्धारा की गई सेवाओं की याद के रूप में एक वर्ष के बाद प्रतिदिन खोली जायेगी ।[2] यह डिस्पेन्सरी हर सोमवार सुबह से शाम तक खुली रहेगी ।[3] महिला डाक्टर मिस हुल तथा डाक्टर गुलाब फूल खान ((जी 0पी0 खान)) प्रत्येक सोमवार को इस दवाखाना में मरीजो को देखेगें ।[4]

डिस्पेन्सरी खोलने के सम्बन्ध में मेजर लेजर ने 18 फरवरी 1931 को छतरपुर के दीवान पंडित इकबाल किशन को सूचित किया कि यह धनराशि बढकर लगभग 700/- रूपये हो गई है ।[5] इस धनराशि से मलेहरा में खोला जाने वाला यह दवाखाना पर्याप्त दवाईयों एवं अन्य सामान के साथ

((1)) **फाइल संख्या** – 12–ए/1931– पोलिटिकल एजेन्सी फाइल– "अजीजी हिन्द" दिनॉक 21 फरवरी 1931 से अनुवाद।

((2)) वही

((3)) वही

((4)) वही

((5)) **फाइल संख्या** –7/1931– एजेन्सी सर्जन फाइल– मेजर लेजर का पत्र छतरपुर के दीवान को ।

लगभग एक वर्ष तक चलाया जा सकता है।[1] डा0 हुल जो छतरपुर के महिला अस्पताल में कार्यरत है, सप्ताह में एक बार सोमवार को, जो बाजार का दिन होता है, यहां आ सकती है।[2] डा0 हुल स्त्री और पुरूष दोनो ही मरीजो को देखेगी किन्तु महिलाओं और बच्चो के लिये उनकी सेवा विशेष रूप से महत्वपूर्ण रहेगी।[3] इस दवाखाना के खुल जाने के फलस्वरूप क्षेत्र के लोगों को सही इलाज एवं राय प्राप्त हो सकेगी। यह दवाखाना मलेहरा के साथ – साथ महाराजपुर एवं आस पास के अन्य गांवो के लोगों के लिये भी लाभ प्रद होगा ।[4] मेजर लेजर के अनुसार उसे यह दवाखाना खोलने के लिये किराया रहित अथवा मामूली किराये पर दो कमरे की उचित इमारत की आवश्यकता थी, एक वर्ष के पश्चात् राज्य इस दवाखाने को अपने खर्च पर चला सकता है अथवा इसके उचित रख रखाव के लिये इसे अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन को सौप सकता है।[5] उसने लिखा कि – "मैने इस सम्बन्ध में मिस बार्ड से बातचीत की है जिसने इस

---

(1) **फाइल संख्या** – 7/1931–एजेन्सी सर्जन फाइल– मेजर लेजर का पत्र दीवान छतरपुर को –18 फरवरी 1931

(2) वही

(3) वही

(4) वही

(5) वही

कार्य में बहुत रूचि लेते हुए यह आशा व्यक्त की है कि एक वर्ष के बाद उसका मिशन निश्चित रूप से इस दवाखाने का प्रबन्ध कर लेगा।"[1]

चूंकि इस दवाखाने का नाम पोलिटिकल एजेन्ट मेजर फिशर के नाम पर रखने का निर्णय किया गया था अतः उसने इस सम्बन्ध में मध्य भारत में गवर्नर जनरल के एजेन्ट के सचिव को दवाखाने से सम्बन्धित जानकारी देते हुए यह जानना चाहा कि क्या नियमों के अनुसार डिस्पेन्सरी का नाम उसके नाम पर रखा जा सकता है ?[2] उसके अनुसार छतरपुर के महाराजा एवं महारानी एवं नागरिकों द्वारा दी गई यह धनराशि तब तक बढ़कर 1034/- रूपये हो गई थी जो उसे किसी दान धर्म के कार्य के लिये सिंगपुर की घटना के सम्बन्ध में भेंट की गई थी।[3] गवर्नर जनरल के एजेन्ट द्वारा इस

---

1. फाइल सं.- 7/1931-एजेन्सी सर्जन फाइल-पत्र सं.- 369 दिनांक 18 फरवरी, 1931 - मेजर लेजर का पत्र दीवान छतरपुर को.
2. फाइल सं.- 12-ए/1931-अर्द्धशासकीय पत्र सं.- 301-ए/दिनांक 26/28 फरवरी, 1931-पोलिटिकल एजेंट का पत्र मध्य भारत में गवर्नर जनरल के एजेंट के सचिव को.
3. वही

सम्बन्ध में कोई आपत्ति नहीं की गई ।[1]

इस दवाखाने का उद्घाटन 2 मार्च, 1931 को किया गया । महाराजा छतरपुर यद्यपि इस उद्घाटन समारोह में शामिल नहीं हो सके[2] किन्तु उद्घाटन समारोह में उनका भाषण उनके निजी सचिव द्वारा पढ़ा गया ।[3]

डिस्पेन्सरी के उद्घाटन समारोह पर महाराजा विश्वनाथ सिंह का यह भाषण इस प्रकार था - "मुझे दुःख है कि मैं फिशर दवाखाना के उद्घाटन समारोह में शामिल नहीं हो सका हूं । मैं मलेहरा में साप्ताहिक दवाखाना शुरु किये जाने के सुझाव के लिये मेजर लेजर को बधाई देता हूं । मुझे खुशी है कि इस दवाखाने का नाम मेजर फिशर के नाम पर रखा गया है । यद्यपि आज यह एक बहुत छोटा कार्य प्रतीत होता है किन्तु मैं आशा करता हूं कि यह दवाखाना मेजर फिशर द्वारा इस राज्य के लिये की गई सेवाओं एवं ईश्वरीय महिमा के फलस्वरूप

---

1. **फाइल सं·-** 12-ए/1931-मध्य भारत के गवर्नर जनरल के एजेंट के सचिव का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट बुन्देलखण्ड को
2. **फाइल सं·-**-7/1931-दीवान छतरपुर का पत्र एजेंसी सर्जन मेजर लेजर को - दिनांक 24 फरवरी, 1931·
3. **फाइल सं·-** 12-ए/1931-दीवान छतरपुर का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को - दिनांक 1 मार्च, 1931·

उनकी जान बच जाने की यादगार का एक स्थायी प्रतीक बन जायेगा एवं अत्याधिक उपयोगी होगा । मलेहरा के लोग भाग्यशाली हैं जिन्हें इस शहर के बच्चों एवं महिलाओं के लाभ के लिये इस प्रकार का दवाखाना प्राप्त हुआ है । महिलाओं एवं बच्चों की भलाई के कार्य को कोई भी राज्य अनदेखा नहीं कर सकता । मुझे प्रसन्नता है कि इस दवाखाने के खुल जाने से राज्य में उपयोगी कार्य को बढ़ावा मिला है । मैं एक बार फिर मेजर फिशर एवं उन महिलाओं और अधिकारियों को धन्यवाद देता हूं जिन्होंने अपनी असुविधाओं के बावजूद मेरे राज्य के लिये इतनी मेहनत की । मैं इस संस्था की सफलता के लिये शुभ कामनाएं देता हूं । मैं इसकी उन्नति के लिये पूरा-पूरा ध्यान दूंगा ।"[1] महाराजा के इस भाषण के बाद, जो उनके निजी सचिव द्वारा पढ़ा गया, मेजर फिशर द्वारा इस दवाखाने का उद्घाटन किया गया ।[2]

1· **फाइल सं·-** 12-ए/1931 - महाराजा विश्वनाथ सिंह का भाषण ।

2· **फाइल सं·-** 12-ए/1931-

यह दवाखाना शीघ्र ही स्थानीय लोगों में बहुत प्रसिद्ध हो गया । 1 मई, 1931 को डॉ॰ ई॰रूथ हुल ने एजेन्सी सर्जन मेजर लेजर को अपने एक पत्र में लिखा कि यहां मरीजों की कमी न थी । उन्हें दोपहर तक लगभग 150 से 200 मरीज देखने होते थे । एक दिन में अधिक-से-अधिक मरीजों की संख्या लगभग 217 थी जिसमें स्त्री, पुरूष और बच्चे सभी शामिल थे ।[1] इस प्रकार धीरे-धीरे इस दवाखाने की लोकप्रियता बढ़ती गई । डॉ॰ हुल द्वारा प्रारम्भ की गई चिकित्सा सेवा का परिणाम यह भी हुआ कि वहां शीघ्र ही इसाई समर्थकों की संख्या बढ़ने लगी । चिकित्सा सेवा से प्रेरित होकर लोग इसाई मत स्वीकार करने लगे ।[2] धर्म प्रचार का कार्य करने वाले लोगों में प्रमुख बुन्देलखण्ड के ही इसाई धर्म में दीक्षित तथा मिशन कार्य में लगे मोतीलाल, पंचमसिंह,

---

1· **फाइल सं॰**- 7/1931-पत्र दिनांक 1 मई, 1931- डॉ॰ हुल का पत्र मेजर लेजर को·

2· ए सेन्चुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ - 99·

स्तुति प्रकाश, हीरा सिंह, दयालचन्द्र सिंह आदि थे ।[1]

इसी बीच डा· हुल 1931 के मध्य में डाक्टरी के प्रशिक्षण से सम्बन्धित एक नये कोर्स के लिये कलकत्ता चली गईं । उनकी अनुपस्थिति में ऐलेना काकिन्स और नैल लेविस यहां का कार्य देखती रहीं ।[2] इन दोनों महिलाओं को आस-पास के गांवों में जाकर भी दवायें इत्यादि देनी पड़ती थीं । अतः थोड़े ही दिन पश्चात् मिस बार्ड की कार इन महिलाओं को प्राप्त हो गई जिससे उन्हें आने जाने की सुविधा हो गई ।[3]

1932 तक इस दवाखाने का एक वर्ष पूरा हो रहा था । इसी बीच मेजर लेजर के स्थान पर एजेन्सी सर्जन के रूप में आर·हे (R. Hay) की नियुक्ति हो चुकी थी । छतरपुर के दीवान इकबाल किशन के स्थान पर पंडित चम्पाराम मिश्रा दीवान का कार्यभार संभाल चुके थे । 29 फरवरी, 1932 को

1· ए सेन्चुरी आॅफ प्लांटिंग पृष्ठ - 99·

2· वही

3· वही तथा ओहियो ईयरली मीटिंग मिनट्स 1931 पृष्ठ - 51·

एजेन्सी सर्जन ने दीवान को सूचित कियाकि वह 2 मार्च, 1932 को छतरपुर आना चाहते हैं ताकि 1 अप्रैल, 1932 से किये जाने वाले फिशर दवाखाने के प्रबन्ध एवं खर्चे इत्यादि के सम्बन्ध में बातचीत की जा सके ।[1] मलेहरा के फिशर दवाखाने के सम्बन्ध में 2 मार्च, 1932 को हुई इस बातचीत के दौरान यह तय किया गया कि तत्कालिक आर्थिक कठिनाइयों के बावजूद राज्य द्वारा भविष्य में इस दवाखाने को चलाये रखने का प्रबन्ध किया जायेगा ।[2] डॉ॰ हुल द्वारा महिला मरीजों को देखने के लिये सप्ताह में एक बार इस दवाखाने में आना जारी रखने की स्वीकृति दे दी गई[3] एवं उसके आने जाने का खर्च मिशन द्वारा दिया जाना स्वीकार कर लिया गया ।[4] चूंकि फिशर दवाखाना कोष को एक विशेष उद्देश्य के लिये बनाया गया था अतः एजेन्सी सर्जन हे ने सुझाव दिया कि इस कोष से मलेहरा दवाखाना के लिये, जो भी औजार मशीनें इत्यादि खरीदीं गई थीं

1· फाइल सं॰-7/1931- पत्र सं॰-542 दिनांक 29 फरवरी, 1932 - मेजर आर॰हे॰, एजेन्सी सर्जन का पत्र छतरपुर दीवान को॰

2· फाइल सं॰- 7/1931-पत्र सं॰-785 दिनांक 29 मार्च, 1932 - एजेन्सी सर्जन का पत्र दीवान छतरपुर को॰

3· फाइल सं॰-7/1931-

4· वही

वे इसी दवाखाने द्वारा प्रयोग के लिये रखे जायें एवं उन्हें राज्य के दूसरे दवाखानों को न दिया जाये ।[1] इस समय तक "फिशर डिस्पेन्सरी कोष" में बकाया धनराशि केवल रूपये 54/- रह गई थी जिसे एजेन्सी सर्जन द्वारा दीवान को भिजवा दिया गया ताकि फिशर दवाखाना के लिये आगामी वर्ष में इसका उपयोग किया जा सके ।[2] यह भी तय किया गया कि भविष्य में दवाईयां तथा दवाखाने के अन्य सामान का प्रबन्ध मलेहरा के डाक्टर के सुपुर्द कर दिया जाये ।[3] डिस्पेन्सरी शुरू होने के प्रथम वर्ष में इसका प्रबन्ध चूंकि "फिशर फन्ड" से किया जाता था जो एजेन्सी सर्जन के अधीन रखा गया था । अतः प्रथम वर्ष में दवाईयां एवं अन्य सामान मंगाने के लिये एजेन्सी सर्जन की अनुमति लेनी पड़ती थी ।[4]

इस प्रकार डा॰ हुल की सेवाओं के परिणामस्वरूप

1· **फाइल सं॰**- 7/1931-पत्र सं॰-785 दिनांक 29 मार्च, 1932-एजेन्सी सर्जन का पत्र दीवान छतरपुर को·

2· वही

3· वही

4· **फाइल सं॰**-7/1931-विभिन्न मेडिकल कम्पनियों द्वारा प्रस्तुत बिलों इत्यादि का विवरण·

मलेहरा में यह दवाखाना शुरू किया जा सका । समय-समय पर एजेन्सी सर्जन द्वारा अन्य डिस्पेन्सरियों एवं अस्पतालों की भांति ही इस दवाखाने का भी निरीक्षण किया जाता था । लेकिन आश्चर्य की बात यह थी कि 8 फरवरी, 1934 को किये गये निरीक्षण के दौरान एजेन्सी सर्जन ने इस डिस्पेन्सरी के रखरखाव पर अप्रसन्नता व्यक्त की ।[1] इस निरीक्षण की रिपोर्ट में एजेन्सी सर्जन ने लिखा - "उसने देखा कि तश्तरियों एवं कटोरों पर धूल जमी हुई थी जिसे दो या तीन दिन से साफ नहीं किया गया था । मलेहरा और महाराजपुर दोनों ही स्थानों पर दवाखानों का प्रबन्ध अस्वच्छ और गन्दा था । उसे बेहतर किया जा सकता था ।" "उसने देखा कि भंडार में पुरानी दवाईयां बड़ी मात्रा में थीं और ऐसा प्रतीत होता था कि डाक्टर ने उन्हें प्रयोग नहीं किया बल्कि और दवाईयां मंगवायी जाती रहीं । यह धन का अनावश्यक दुरूपयोग था । नई दवायें मंगवाने से पहले पुरानी दवाओं का प्रयोग

1· **फाइल सं·**- 7/1931-पत्र सं·-512/7-31 दिनांक 14 फरवरी, 1934-दीवान छतरपुर को पत्र एजेंसी सर्जन का·

किया जाना चाहिये था । अगर वे दवायें प्रभावी नहीं थीं तो उन्हें किसी जिम्मेदार व्यक्ति के सामने नष्ट किया जाना चाहिये था ।"[1]

एजेन्सी सर्जन की इस रिपोर्ट से आभास होता है कि 1934 तक सम्भवतः डिस्पेन्सरी के रखरखाव में लापरवाही बरती जाने लगी थी । यह भी हो सकता है कि धन के अभाव के कारण राज्य द्वारा इस दवाखाने की ओर उचित ध्यान न दिया जा रहा हो ।

अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन के कार्यों का मूल्यांकन

हमने देखा कि बुन्देलखण्ड के नौगांव क्षेत्र में 1896 में स्थापित अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन ने धीरे-धीरे इस क्षेत्र के अन्य भागों को भी अपनी गतिविधियों का केन्द्र बना लिया । यद्यपि इनका प्रमुख उद्देश्य क्षेत्र के लोगों में इसाई धर्म का प्रचार करके उन्हें इस धर्म में परिवर्तित करना था लेकिन उनके द्वारा स्थापित अनाथालय एवं चिकित्सा केन्द्रों के कारण लोग इनकी ओर आकृष्ट हुए । चिकित्सा सुविधायें उपलब्ध करवा कर, अकाल पीड़ितों की सहायता करके एवं अनाथालय, चर्च इत्यादि का निर्माण करके इन मिशनरियों ने क्षेत्र में ऐसे जनकल्याणकारी

1· **फाइल सं·**-7/1931-पत्र सं·-512/7-31 दिनांक

कार्य किये जिनके फलस्वरूप निश्चित रूप से इस क्षेत्र का विकास हुआ । इन मिशनरियों को अपने कार्यों के संचालन हेतु ब्रिटिश अधिकारियों का पूरा-पूरा समर्थन प्राप्त था जिसके पीछे ब्रिटिश शासन का उद्देश्य सम्भवतः इनके सहयोग से जनता का विश्वास प्राप्त करना था । विभिन्न रियासती राजाओं द्वारा भी इस मिशन को समय-समय पर उदारतापूर्वक सहायता उपलब्ध कराई गई । यद्यपि इन राजाओं को भय था कि कहीं इन मिशनरियों के आ जाने से जनता की धार्मिक भावनाओं को ठेस न लगे किन्तु इस मिशन द्वारा प्रस्तावित कल्याणकारी योजनाओं से वे अत्याधिक प्रभावित हुये और लोगों की धार्मिक भावनाओं का पूर्ण आदर करते हुये उन्होंने इन मिशनरियों की सहायता की । जहां इसाई धर्म के जबरदस्ती प्रचार का भय था अथवा राज्य में गौहत्या या गौमांस लाये जाने की आशंका थी वहां इन मिशनरियों की सहायता करने में पूरी सतर्कता बरती गई ।

चिकित्सा एवं धर्म प्रचार के अतिरिक्त शिक्षा के क्षेत्र में भी इस मिशन द्वारा महत्वपूर्ण कार्य किया गया जिसका अध्ययन हम अगले अध्याय में करेंगे ।

बुन्देलखण्ड के अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन के बारे में मारजोरी साइक्स ने लिखा है कि - "बुन्देलखण्ड का कवेकर मिशन बहुत धीरे-धीरे विकसित हुआ तथा बहुत वर्षों तक निर्धन रहा । इसमें उन दो महिलाओं के अतिरिक्त जो लखनऊ से मिशन कार्य के लिये आयी थीं, बाहर से अन्य किसी व्यक्ति को काम करने के लिये मिशन द्वारा नियुक्त नहीं किया गया । उन बच्चों में से जो मिशन द्वारा सर्वप्रथम अनाथालय में रखे गये थे, बहुत से योग्य बच्चे बड़े होकर अध्यापक तथा मिशन के कार्य को संभालने वाले अग्रणी बने ।" [1]

इस प्रकार ओहियो कवेकर संगठन की यह मिशनरियां बुन्देलखण्ड क्षेत्र में इसाई धर्म के प्रचार एवं प्रसार का कार्य करती रहीं तथा लोगों को अपने कार्यों द्वारा प्रभावित करके इसाई धर्म में परिवर्तित करने का प्रयास करती रहीं ।[2] कभी-कभी इस कार्य में उन्हें लोगों के जबर्दस्त विरोध का सामना भी करना पड़ता था । एक बार एक गांव में लोगों की उग्र भीड़ इसाई धर्म का उपदेश देने वाले उन सदस्यों के एक समूह पर आक्रमण करने के लिये उस समय एकत्र हो गई जब वे

---

1. मारजोरी साइक्स-कवेकरस इन इंडिया-ए फोरगोटन सेन्चुरी - पृष्ठ 114.
2. वही

प्रार्थना की तैयारी कर रहे थे ।[1] तब एक सज्जन पुरूष ने, जो स्वयं एक मुस्लिम था, हस्तक्षेप करके उनकी जान बचाई । उसने गांव वालों को डांटा तथा उनका ध्यान इस्लाम धर्म की उन शिक्षाओं की ओर दिलाया जिनके अनुसार वे जो प्रार्थना करने वाले व्यक्तियों की प्रार्थना में विघ्न डालते हैं, उनसे अल्लाह नाराज हो जाता है ।[2] मारजोरी साइक्स के अनुसार इस घटना का जिक्र करते हुए मिशनरियों ने अपनी रिपोर्ट में लिखा कि "यह एक आम अन्धविश्वास था ।" किन्तु उन्होंने उस व्यक्ति के साहस और अच्छाई का कहीं जिक्र नहीं किया जिसने उनकी जान बचाई थी ।[3]

अमेरिका की महिलाओं द्वारा स्त्रियों में इसाई धर्म के प्रचार की आवश्यकता पर भी बल दिया गया । 1860 ई॰ में न्यूयार्क में वीमेन यूनियन मिशनरी सोसायटी की स्थापना एक महिला श्रीमती डोरामस ‍॥ Mrs. Doramus ‍॥ के प्रयत्नों के फलस्वरूप की गई ।[4]

1· मारजोरी साइक्स-कवेकरस इन इंडिया-ए फोरगोटन सेन्चुरी-पृष्ठ 115·

2· मारजोरी साइक्स-कवेकरस इन इंडिया पृष्ठ-115·

3· वही

4· पाठक, एस·एम·-अमेरिकन मिशनरीज एंड हिन्दुज्म पृष्ठ-65·

इस सोसायटी की तरफ से भारत में प्रथम महिला मिशनरी मिस ब्रिटेन को भेजा गया । भारत में कलकत्ता और उसके आस-पास के क्षेत्रों में मिशन कार्य को प्रारम्भ करके वह जापान चली गई ।[1] 1860 ई. के बाद अमेरिका में बहुत सी महिला मिशनरी सोसाइटियों की स्थापना की गई । उनके द्वारा भारत में स्त्रियों के विकास के लिये महत्वपूर्ण योगदान दिया गया ।[2]

झांसी में वीमेन यूनियन मिशनरी सोसायटी क्रिश्चियन अस्पताल की स्थापना

झांसी में वीमेन यूनियन मिशनरी सोसायटी द्वारा 1901 में एक अस्पताल की स्थापना की गई । यह पहले एकरमेन-होयट मेमोरियल अस्पताल (Ackerman - Hoyt Memorial Hospital) के नाम से प्रसिद्ध था । इसके लिये न्यूयार्क के डाक्टर ई.पी.होयट ने धन दिया था ।[3] यह अस्पताल झांसी के झोकन बाग में स्थित है । इसकी स्थापना का श्रेय भी अमेरिका की महिला मिशनरियों को है ।[4] लेकिन यहां पर उल्लेखनीय है

---

1. एम.एस.पाठक-अमेरिकन मिशनरीज एंड हिन्दुज्म-पृष्ठ-65
2. वही
3. यू.पी.डिस्ट्रिक्ट गजेटियर झांसी पृष्ठ-293.
4. आफिस रिकार्ड मिशन अस्पताल, झोकनबाग,झांसी.

कि नौगांव, छतरपुर, हरपालपुर आदि स्थानों पर कार्यरत मिशनरियों से पृथक इस अस्पताल की स्थापना का कार्य डॉ॰ एलिस अरनेस्ट नामक अमेरिकी महिला मिशनरी ने किया । आरनेस्ट का यह प्रयास किसी चर्च से सम्बद्ध नहीं था ।[1] अमेरिका में वीमेन यूनियन मिशनरी सोसायटी की स्थापना 1860 ई॰ हो चुकी थी । यह सोसायटी चीन और भारत के क्षेत्रों में जाकर स्त्रियों तथा बच्चों के लिये चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध कराना चाहती थी । इस कार्य को करने के लिये डा॰ आरनेस्ट नामक महिला मिशनरी ने 1897 ई॰ में झांसी शहर में दवाई देने का कार्य आरम्भ किया ।[2] स्त्रियों एवं बच्चों के स्वास्थ्य की रक्षा के उद्देश्य से यहां चिकित्सा सेवा आरम्भ की गई थी । आरम्भ में लोग इस महिला चिकित्सक के पास जाना पसन्द नहीं करते थे ।[3] क्योंकि रूढ़िवादी विचारों से ग्रस्त हिन्दू लोग इसाईयों से घृणा करते थे किन्तु धीरे-धीरे उन्हें अपने रोगों के निदान के लिये इस महिला चिकित्सक

---

1. आफिस रिकार्ड - मिशन अस्पताल झोकनबाग, झांसी
2. वही
3. वही

की सेवायें लेनी पड़ीं ।

डॉ॰ आरनेस्ट ने 20 सितम्बर, 1898 को झोकनबाग झांसी में अस्पताल खोलने के उद्देश्य से जमीन खरीदी ।[1] इस भूमि के लिये तथा अस्पताल बनाने के लिये डॉ॰ ई॰पी॰ह्ोयट ने आर्थिक सहायता दी थी । इसलिये इस अस्पताल का नाम डॉ॰ ह्ोयट के नाम पर रखा गया । ऐसा कहा जाता है कि डा॰ आरनेस्ट की मुलाकात न्यूयार्क में डॉ॰ ह्ोयट के साथ हुई जो दन्त चिकित्सक थे तथा जिन्हें डॉ॰ अरनेस्ट अपना दांत दिखाने गई थी । बातचीत के दौरान उन्होंने डॉ॰ ह्ोयट को बताया कि वह मध्य भारत के झांसी नामक स्थान पर एक मिशनरी के रूप में कार्य कर रही हैं और वहां स्त्रियों और बच्चों के लिये एक अस्पताल की स्थापना करना चाहती हैं ।[2] डॉ॰ ह्ोयट ने लगभग 18000 डालर की धनराशि उन्हें इस अस्पताल की स्थापना के उद्देश्य से दी ।[3] इस धन की सहायता से डॉ॰ ऐलिस आरनेस्ट ने

1· आफिस रिकार्ड - मिशन अस्पताल झोकनबाग झांसी

2· वही

3· वही

झांसी के सेठ रामलाल और रघुवर दयाल से झोकनबाग झांसी में अस्पताल बनाने के लिये जमीन खरीद ली[1] और यहीं पर 1898 ई॰ में अस्पताल का निर्माण आरम्भ हुआ ।[2] 1903 में नर्सों के रहने के लिये क्वार्टर सरकार द्वारा उपलब्ध कराई गई धनराशि से बनाये गये और अस्पताल का सर्जिकल वार्ड तथा आपरेशन कक्ष डॉ॰ होयट द्वारा दी गई सहायता से बनाये गये ।[3] 1905 में नर्सों को प्रशिक्षण देने के लिये इसी अस्पताल में एक स्कूल आरम्भ किया गया ।[4]

झोकनबाग का यह अस्पताल स्त्रियों और बच्चों की चिकित्सा के लिये शीघ्र ही एक विख्यात संस्था के रूप में सामने आया । इस मिशन अस्पताल में काम करने वाले लोग चिरगांव, बबीना, दतिया, गड़ियाफाटक तथा छावनी क्षेत्र में भी सप्ताह में लगभग दो-दो दिन जाकर दवायें देते थे और

1· आफिस रिकार्ड-मिशन अस्पताल झांसी-सेल डीड ऑफ लैंड

2· आफिस रिकार्ड - मिशन अस्पताल झांसी

3· यू·पी· डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - झांसी पृष्ठ - 293·

4· आफिस रिकार्ड - मिशन अस्पताल, झोकनबाग झांसी

लोगों की चिकित्सा किया करते थे ।[1] 1931 में इस अस्पताल में एक प्रयोगशाला आरम्भ की गई ।[2] आज भी यह संस्था चिकित्सा के क्षेत्र में अद्वितीय कार्य कर रही है ।

---

1. आफिस रिकार्ड - मिशन अस्पताल, झोकनबाग झांसी
2. यू॰पी॰डिस्ट्रिक्ट गजेटियर झांसी पृष्ठ - 293.

अध्याय षष्ट्म

शिक्षा सम्बन्धी कार्य

पिछले अध्याय में हमने देखा कि अमेरिका की विभिन्न मिशनरियों द्वारा बुन्देलखण्ड में चिकित्सा एवं धर्म प्रचार के क्षेत्र में अद्वितीय कार्य किये गये । इनकी चिकित्सा सेवाओं के परिणामस्वरूप धीरे-धीरे लोगों ने इनका विरोध करना छोड़ दिया । अपने इस कार्य के द्वारा उन्होंने आम जनता का हृदय जीत लिया । मिशनरियों द्वारा की जाने वाली चिकित्सा सेवाओं के फलस्वरूप लोगों ने चिकित्सा कार्य के लिये धन की सहायता भी की । मिशनरी कार्यों से प्रभावित होकर लोगों ने अस्पताल की इमारतें बनाने हेतु भूमि भी दान में दी । इससे स्पष्ट होता है कि मिशनरियों ने अपने कार्यों के परिणामस्वरूप क्षेत्र की जनता को काफी प्रभावित किया । चिकित्सा कार्यों के साथ साथ इनका प्रमुख उद्देश्य लोगों में इसाई धर्म का प्रचार करना था । वे अपने इस कार्य में सफल भी हुई । इन मिशनरियों द्वारा किया जाने वाला एक अन्य महत्वपूर्ण कार्य लोगों में शिक्षा का प्रसार करना था । उन्हें शिक्षित करने का एक मुख्य उद्देश्य

उन्हें इसाई धर्म की शिक्षाओं से अवगत कराना था । छतरपुर के महाराजा द्वारा अस्पताल के लिये भूमि दान में दिये जाने पर ईस्थर वार्ड को इमारत के निर्माण के लिये आर्थिक सहायता आसानी से उपलब्ध न हो सकने पर उसने निराश होकर कहा था - "बहुत से ओहियो मित्र अस्पतालों की अपेक्षा चर्च बनाना अधिक पसन्द करेंगें ।"[1] यह इस बात की पुष्टि करता है कि मिशनरियों का मुख्य उद्देश्य क्षेत्र में इसाई धर्म का प्रचार करना था जिसके लिये यह आवश्यक था कि लोगों को शिक्षित किया जाये ताकि वे इसाई धर्म की शिक्षाओं को भली भांति समझ कर उसे अपना सकें ।

मिशनरियों के आगमन से पूर्व बुन्देलखण्ड में शिक्षा की स्थिति

हम देख चुके हैं कि बुन्देलखण्ड क्षेत्र अनेक कारणों से आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा

---

1. मारजोरी साइक्स - क्वेकरस इन इण्डिया पृष्ठ- 133 - 134.

रहा । लगभग यही स्थिति शिक्षा के क्षेत्र में भी रही । प्राचीन काल में इस क्षेत्र में भी भारत के अन्य क्षेत्रों की भान्ति ही शिक्षा का सम्बन्ध परिवार से हुआ करता था । अध्यापक एवं विद्यार्थी सामान्यतः ब्राह्मण ही होते थे । शिक्षा का अर्थ धार्मिक पुस्तकों का ज्ञान प्राप्त करना एवं गणित, आयुर्वेद, व्याकरण, अर्थशास्त्र इत्यादि विषयों से सम्बन्धित था ।[1] 12वीं शताब्दी के बाद जब क्षेत्र के कुछ स्थानों जैसे एरेच इत्यादि में मुस्लिम बस गये, तब उन्होंने वहां अपने मकतब (स्कूल) स्थापित किये जिसमें उस समुदाय के बच्चों को इस्लाम धर्म के अनुसार शिक्षा दी जाती थी ।[2] यह शिक्षा धार्मिक शिक्षकों द्वारा दी जाती थी और कुरान के नियमों पर आधारित थी । अधिकांश मकतब मस्जिदों के साथ जुड़े थे । चौदहवीं एवं पन्द्रहवीं शताब्दी में एरेच इस्लाम

---

1. यू.पी. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - झांसी डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ - 267.

2. वही

शिक्षा का महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया । तारीखे-मुहम्मदी के लेखक मुहम्मद बिहमद खान के अनुसार इस काल में बहुत से प्रसिद्ध साधु एवं विद्वान इस शहर में आये । आज भी यहां दार-उल-उलूम {विश्वविद्यालय} के अवशेष मिलते हैं ।[1] झांसी जिले के अन्य भागों में बुन्देलों के शासन के अन्तर्गत शिक्षा की हिन्दू पद्धति प्रचलित थी । 18वीं से 19वीं शताब्दी के बीच झांसी जिले के एक बड़े भाग पर मराठों का अधिकार था जिन्होंने शिक्षा के प्रसार में विशेष रूचि ली । राजा गंगाधर राव साहित्य एवं सांस्कृतिक कार्यों में रूचि के लिये प्रसिद्ध थे ।[2]

क्षेत्र में ब्रिटिश शासन स्थापित हो जाने के बाद अंग्रेजों ने प्रारम्भ में शिक्षा के नये केन्द्र नहीं खोले बल्कि जो संस्थायें पहले से कार्यरत थीं उनका प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया किन्तु 1857-58 में

1· यू·पी· डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - झांसी डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ - 268·

2· वही

फैली गड़बड़ी के कारण शिक्षा कार्य प्रभावित हुआ । 1858 ई॰ में पुनः शान्ति स्थापित हो जाने पर झांसी जिले में आठ तहसीली स्कूल खोले गये । यह स्कूल झांसी, काराहरा, पाछौर, मोठ, भान्डेर, मऊ, पन्डवाहा और गरौठा में थे । इसके साथ ही जिले में 38 ग्राम स्कूलों की स्थापना भी की गई जिनमें 1859-60 में लगभग 2141 विद्यार्थी थे ।[1] इसी वर्ष ललितपुर, महरौनी तथा मन्दौरा में तीन और तहसीली स्कूलों की स्थापना की गई । 1861 ई॰ में झांसी जिले का कुछ भाग ग्वालियर को दे दिये जाने के कारण झांसी, पाछौर और काराहरा के स्कूलों के स्थान पर तीन नये स्कूल बरूआसागर, चिरगांव तथा रानीपुर में खोले गये । इस प्रकार 1862 ई॰ में जिले में 76 ग्राम स्कूल थे । सरकारी स्कूलों के साथ-साथ अनेक प्राइवेट स्कूल भी थे जिनके निरीक्षण का अधिकार सरकार को

1· यू॰पी॰ डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - झांसी डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ - 268·

प्राप्त था ।[1]

बुन्देलखण्ड के अन्य क्षेत्रों में भी शिक्षा की लगभग यही स्थिति थी । क्षेत्र में ब्रिटिश शासन की स्थापना के समय हिन्दू पाठशालाओं में और मुसलमान मकतबों में शिक्षा ग्रहण करते थे । कुछ प्रारम्भिक धार्मिक स्कूल भी थे जिनमें पढ़ना - लिखना एवं थोड़ा सा गणित पढ़ाया जाता था ।[2] व्यवसाय में लगे लोग अपने बच्चों को व्यवसाय से सम्बन्धित प्रशिक्षण देते थे । जिनमें बढ़ईगिरी, लुहार, दर्जी इत्यादि के व्यवसाय से सम्बन्धित प्रशिक्षण प्रमुख थे ।[3] लड़कियों की शिक्षा का अधिक प्रचलन न था किन्तु वे शिक्षा से अनभिज्ञ अथवा अशिक्षित नहीं थीं । उन्हें घर की महिलाओं द्वारा खाना पकाना, गृह सज्जा, सिलाई-कढ़ाई इत्यादि का प्रशिक्षण देने के साथ-साथ धर्म के मूलभूत तथ्यों का ज्ञान भी दिया जाता था । धीरे-धीरे शिक्षा का यह

---

1. यू·पी· डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - झांसी डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ - 268·
2. यू·पी· डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - हमीरपुर डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ - 223·
3. वही

स्वरूप सरकारी केन्द्रों में परिवर्तित होने लगा जो अंग्रेजों द्वारा प्रारम्भ किये गये थे । इन्हें तहसीली और हलकाबन्दी स्कूल कहा जाता था ।[1]

हमीरपुर जिले में 1855 ई. में आठ तहसीली स्कूलों की स्थापना की गई जो क्रमशः हमीरपुर, सुमेरपुर, गहरौली, जैतपुर, मदौहा, पनवाड़ी, महोबा एवं राठ में थे । इसके पश्चात् गांव में प्राइमरी स्कूल खोले गये । 1861 ई. में जिले में ऐसे 28 स्कूल थे । 1862 ई. में हमीरपुर में एक एंग्लों-वर्नाकुलर स्कूल खोला गया । अगले वर्ष एक सरकारी मिडिल स्कूल खोला गया तथा गांव स्कूलों की संख्या 71 कर दी गई । लड़कियों की शिक्षा के लिये 1864 ई. में 5 स्कूल खोले गये जिनमें शिक्षा ग्रहण करने वाली लड़कियों की कुल संख्या 54 थी ।[2] मदौहा एवं महोबा में भी एक-एक ऐंग्लो-

---

1. यू.पी. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - हमीरपुर डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ - 223.

2. वही

वर्नाकुलर स्कूल खोला गया । 1867 ई. में हमीरपुर के ऐंग्लो-वर्नाकुलर स्कूल को जिला स्कूल में बदल दिया गया और हमीरपुर तथा पनवाड़ी के मिडिल स्कूलों को समाप्त कर दिया गया । इस प्रकार 1870 ई. में हमीरपुर जिले में 6 तहसीली स्कूल थे जिनमें 280 विद्यार्थी थे, 52 ग्राम स्कूल जिनमें 1754 विद्यार्थी थे एवं 45 पुराने शिक्षा केन्द्र थे जिनमें 556 विद्यार्थी थे ।[1] जिले मे लड़कियों की शिक्षा के लिये दो प्राथमिक स्कूल थे, जिनमें 36 लड़कियां थीं ।[2]

झांसी जिले मे लड़कियों की शिक्षा प्रारम्भ होने का वर्ष 1866 माना जा सकता है । जब ललितपुर में लड़कियों के लिये एक स्कूल की स्थापना की गई । 1868 ई. में जिला स्कूलों तथा ललितपुर में लड़कियों की शिक्षा में वृद्धि हुई और बालिकाओं के लिये चार अन्य स्कूल महरौनी में खोले गये । 1870 ई. में इन पांच स्कूलों में शिक्षा ग्रहण करने

---

1. यू.पी.डिस्ट्रिक्ट गजेटियर-हमीरपुर डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ 223.
2. वही
3. यू.पी.डिस्ट्रिक्ट गजेटियर-झांसी डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ 268.

वाली लड़कियों की कुल संख्या 116 थी । 1872 ई. में झांसी में 7 ऐसे स्कूलों की स्थापना की गई तथा ललितपुर में लड़कियों के स्कूलों की संख्या बढ़ा कर दस कर दी गई ।[1] इनमें कुल 384 विद्यार्थी थे किन्तु 1875 ई. में यह अनुभव किया गया कि लड़कियों के इन स्कूलों में उपस्थिति बहुत कम थी । अतः 6 स्कूल बन्द कर दिये गये । 1880 ई. में झांसी जिले में लड़कों के लिये स्कूलों की संख्या 98 थी जिनमें कुल 2190 विद्यार्थी थे तथा लड़कियों के लिये कुल 3 स्कूल थे जिनमें केवल 60 लड़कियां थीं ।[2]

बांदा जिले में भी शिक्षा की लगभग यही स्थिति थी । 1850 ई. से पूर्व जिले में शिक्षा के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त नहीं होती । 1850 ई. में बांदा जिले में लगभग 135 शिक्षण केन्द्र थे जिनमें अरबी, संस्कृत और फारसी की शिक्षा दी जाती

---

1. यू.पी. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - झांसी डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ - 268.

2. वही

थी । इनमें लगभग 1100 विद्यार्थी थे ।[1] ड्रेक ब्रोकमेन के अनुसार 1857 ई॰ की क्रान्ति के पूर्व बांदा जिले में कोई सरकारी स्कूल नहीं था ।[2] 1856 ई॰ में अमेरिकन प्रेसबिटेरियन मिशन द्वारा मिस्टर पाल ﴾Paul﴿ के नेतृत्व में एक किराये के मकान में एक स्कूल खोला गया । 1857 ई॰ की क्रान्ति के बाद पुनः शान्ति स्थापित हो जाने पर इसे मिशन की इमारत में ले जाया गया और कलेक्टर मैन के प्रभुत्व के कारण इसे तहसीली स्कूल में परिवर्तित किया जा सका । उसी वर्ष तिन्दवारी, सिहोन्दा, कालिन्जर, तराउन, सिन्धाकलां तथा कामासिन में तहसीली स्कूलों की स्थापना की गई । बबेरू तथा मऊ में अगले वर्ष तहसीली स्कूल खोले गये ।[3] पहले कुछ वर्षों तक इनमें छात्रों की कुल संख्या 500 से अधिक नहीं था । 1863 ई॰ मे बांदा शहर के स्कूल को ऐंग्लों - वर्नाकुलर स्कूल बना दिया गया एवं 1867

---

1. ड्रेक ब्रोकमेन डी॰एल॰ - बांदा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - 1909 - पृष्ठ 152॰
2. वही
3. वही

ई॰ में यह तीसरी कक्षा तक जिला स्कूल बना दिया गया । 1874 ई॰ में यह एक अच्छी श्रेणी का जिला स्कूल बन गया था । बाद में 1901 ई॰ एवं 1906 ई॰ में इसके शिक्षकों की संख्या भी बढ़ा दी गई ।[1]

किन्तु जिले में शिक्षा का स्तर सन्तोषजनक नहीं था । 1871 ई॰ से 1880 ई॰ के दशक में तहसीली स्कूलों की संख्या घटकर सात रह गई थी एवं औसत उपस्थिति घटकर 271 रह गई थी ।[2] इसी समय ग्राम स्कूलों की संख्या 180 से कम करके 156 कर दी गई जिनमे उपस्थिति का औसत भी पिछले दशक के 3972 विद्यार्थी की अपेक्षा कम होकर 3694 रह गया था ।[3]

ड्रेक ब्रोकमेन के अनुसार जिले में कुछ मिशन स्कूल भी थे । सोसायटी फार दि प्रोपेगेशन ऑफ दी गास्पल मिशन द्वारा बांदा और कर्वी शहरों में स्कूलों की स्थापना की गई जिनमें से बांदा के स्कूल को जिला तथा नगर निगम बोर्ड द्वारा आर्थिक

---

1. ड्रेक ब्रोकमेन, डी॰एल॰-बांदा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर पृष्ठ 152॰
2. वही पृष्ठ 153॰
3. वही

सहायता प्रदान की जाती थी । इसी मिशन द्वारा दो कन्या स्कूलों को तथा एक निजी स्कूल को भी सहायता दी जाती थी । इस निजी मिशन स्कूल तथा एक अन्य सहायता प्राप्त स्कूल में मुसलमान विद्यार्थियों द्वारा शिक्षा ग्रहण की जाती थी जबकि दूसरे स्कूल में हिन्दू विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते थे ।[1]

इस प्रकार 19वीं शताब्दी के अन्त में पूरे बुन्देलखण्ड क्षेत्र में शिक्षा का समुचित विकास नहीं हुआ था । लोगों की शिक्षा के प्रति रूचि कम रही । सम्भवतः इसका कारण क्षेत्र में समय-समय पर आने वाली प्राकृतिक आपदायें एवं तत्कालिक ब्रिटिश नीति थी । 1881 ई॰ में झांसी जिले में पुरुष साक्षरता दर केवल 5·4 प्रतिशत एवं स्त्री साक्षरता दर 0·07 प्रतिशत थी तथा 1891 ई॰ में यह दर क्रमशः 7·2 प्रतिशत एवं 0·22 प्रतिशत थी ।[2] हमीरपुर जिले में 1881 ई॰ में 5 प्रतिशत पुरुष एवं 0·03 प्रतिशत स्त्रियां साक्षर थीं । 1891 ई॰ के आंकड़ों के अनुसार

1· ड्रेक ब्रोकमेन, डी॰ एल॰ -बांदा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर पृष्ठ 153·

2· यू॰ पी॰ डिस्ट्रिक्ट गजेटियर - झांसी डिस्ट्रिक्ट पृष्ठ 270·

यह दर 5·5 प्रतिशत एवं ·05 प्रतिशत थी ।[1] क्षेत्र के अन्य जिलों में भी शिक्षा का अधिक विकास नहीं हुआ था ।

अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन द्वारा किये गये शिक्षा संबंधी कार्य

अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की मिशनरियों द्वारा बुन्देलखण्ड में लोगों को शिक्षित करने की आवश्यकता अनुभव की गई । इंग्लैंड फ्रेन्डस मिशन की एक अवकाश प्राप्त महिला एलिजा फ्रेन्क लैन्ड की सहायता से नौगांव के अनाथालय में पल रहे बच्चों के लिये एक स्कूल की व्यवस्था की गई । बुन्देलखण्ड एजेन्सी की वर्ष 1905 की फाइल सं·-105 के आधार पर यह जानकारी प्राप्त होती है कि नौगांव बाजार में अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन द्वारा चर्च एवं स्कूल की स्थापना की गई थी । हम देख चुके हैं कि नौगांव के बाजार क्षेत्र में चर्च निर्माण की अनुमति 1904 ई· में ही प्रदान कर दी गई थी । इसके

1· यू·पी·डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर - हमीरपुर डिस्ट्रिक्ट·

साथ ही 100 किताबों का एक वाचनालय एवं स्कूल भी खोला गया ।[1] इसकी देखभाल अन्ना एजेटर नामक मिशनरी कर रही थी । कुछ समय पश्चात् अन्ना एजेटर के अपने देश वापिस लौट जाने पर उसके स्थान पर ईवा ऐलिन को नियुक्त किया गया । उसकी देख-रेख में नौगांव के मिशन स्कूल में विद्यार्थियों की संख्या निरन्तर बढ़ती गई ।[2]

नौगांव के बाजार क्षेत्र में इस स्कूल की स्थापना के अतिरिक्त शिक्षा की दिशा में अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन द्वारा एक अन्य महत्वपूर्ण कार्य किया गया । 1904 ई॰ में मिशन द्वारा नौगांव में एक औद्योगिक स्कूल की स्थापना की गई । शुरू में इस औद्योगिक स्कूल में 14 बच्चे थे एवं इसकी देख-रेख का कार्य ईस्थर बार्ड स्वयं करती थी ।[3] इसमें बागवानी, बढ़ईगिरी, कपड़े की सिलाई, कुर्सियों की बुनाई, कारीगरी, जूता बनाना आदि का प्रशिक्षण दिया जाता था । धीरे-धीरे इसमें कुशल शिक्षकों को

1· **फाइल सं॰**- 105/1905-पोलिटिकल एजेन्ट डब्ल्यू॰ई॰ जारडीन की टिप्पणी -

2· ए॰ सेन्चुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ -23·

3· वही

नियुक्ति कर ली गई ।[1]

नौगांव में स्कूल एवं औद्योगिक केन्द्र की स्थापना के बाद इन महिला मिशनरियों द्वारा आस-पास के क्षेत्र में शिक्षा के प्रसार की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी । लोगों में इसाई धर्म के प्रचार के उद्देश्य को पूरा करने के लिये उन्हें शिक्षित करना आवश्यक था । अतः कन्जरपुर गांव में इस मिशन द्वारा एक स्कूल खोला गया । यहां के अधिकांश लोग आपराधिक प्रवृत्ति के थे । उन्हें इन अपराधों से दूर रखने के लिये एवं इसाई धर्म में दीक्षित करने के उद्देश्य से इन मिशनरियों ने सर्वप्रथम गांव के कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों जैसे पंचम सिंह एवं प्रेमदास को इसाई धर्म में दीक्षित किया । इसके परिणामस्वरूप कन्जर जाति के कुछ अन्य लोग भी इसाई मत से प्रभावित हुये । अतः 1910 ई॰ में एक स्कूल की स्थापना की गई जिसमें प्रारम्भ में 8 बच्चे थे ।[2] इनमें प्रेमदास तथा

1· ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिंग पृष्ठ - 23·

2· वही - पृष्ठ -32·

याकूब को अध्यापन कार्य के लिये नियुक्त किया गया। रविवार को धार्मिक सभाओं का आयोजन भी प्रेमदास ही करता था। 1911 ई॰ में पोलिटिकल एजेन्ट द्वारा कन्जरपुर का दौरा किया गया जिसके पश्चात् उसने सरकारी खर्चे पर चर्च के लिये एक स्कूल के निर्माण की अनुमति दे दी।[1]

इस प्रकार 1910 ई॰ तक इन मिशनरियों द्वारा नौगांव एवं कन्जरपुर में प्राथमिक स्कूलों की स्थापना की गई जिनमें कुल 50 बच्चे थे।[2] इसके अतिरिक्त इस समय तक बुन्देलखण्ड क्षेत्र में मिशनरियों द्वारा 6 औद्योगिक स्कूल भी स्थापित किये जा चुके थे जिनमें 21 लड़के तथा 5 लड़कियां प्रशिक्षण ग्रहण कर रही थीं। क्षेत्र में 2 रविवारीय स्कूल भी थे जिनमें इसाई धर्म की शिक्षा दी जाती थी। इनकी कुल सदस्य संख्या 140 के लगभग थी।[3]

मिशन से सम्बन्धित वर्ष 1910 के लिये प्राप्त

1· ए सेन्चुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ - 32·

2· एस·एडी - इंडिया अवेकनिंग पृष्ठ 259·

3· वही

आंकड़ों से पता चलता है कि मिशन द्वारा उच्च शिक्षा केन्द्र नहीं खोले गये थे ।[1] इसका स्पष्ट कारण यह था कि बुन्देलखण्ड में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति ही अच्छी नहीं थी । अतः उच्च शिक्षा केन्द्र स्थापित करने का प्रश्न ही नहीं उठता था । बुन्देलखण्ड में मिशनरी गतिविधियों पर रोशनी डालते हुए एडी ॥ Eddy ॥ ने निम्न आंकड़े प्रस्तुत किये हैं ।[2]

मिशन का नाम	फ्रेन्डस फारेन मिशनरी सोसायटी ओहियो ईयरली मीटिंग
भारत में कार्य करने का का प्रथम वर्ष	1896·

वर्ष 1910 तक की स्थिति -

कुल मिशनरियां	6
- महिला चिकित्सक	1
- अन्य	5
स्थानीय कार्यकर्ता	18
प्रमुख केन्द्र	1
अन्य केन्द्र	1

1· एस·एडी - इन्डिया अवेकनिंग पृष्ठ 259·

2· वही - आंकड़े विश्व एटलस ऑफ क्रिश्चियन मिशन ॥1910॥ पर आधारित -

धार्मिक कार्य

चर्च	1
रविवारीय स्कूल	2
रविवारीय स्कूलों की कुल सदस्य संख्या	140
कुल स्थानीय इसाईयों की संख्या	310
इसाई धर्म स्वीकार करने वालों की संख्या	60

शिक्षा

उच्च शिक्षा

कालेज एवं विश्वविद्यालय		शून्य

औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र

संख्या		6
विद्यार्थी	लड़के	21
	लड़कियां	5
	कुल विद्यार्थी	26
प्राथमिक एवं गांव स्कूल		2
विद्यार्थी		50

चिकित्सा

अस्पताल	शून्य

दवाखाना	1
दवाखाने में चिकित्सा प्राप्त करने वालों की संख्या	2615
दवाखाने में आने वाले बाह्य रोगी	95
कुल रोगी	2710

नौगांव एवं कन्जरपुर में स्कूलों की स्थापना करने के पश्चात् अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन द्वारा इस कार्य के लिये हरपालपुर को अपना केन्द्र बनाया गया 1905 ई॰ में अलीपुरा के राजा द्वारा मिशन को इमारत बनाने हेतु कुछ भूमि मुफ्त दे दी गई थी । क्योंकि राजा को विश्वास था कि फ्रेन्डस मिशन की शाखा हरपालपुर में स्थापित हो जाने पर उसके राज्य के निर्धन लोगों की सहायता हो सकेगी क्योंकि यह मिशन चिकित्सा और निःशुल्क शिक्षा का कार्य कर रहा था ।[1] यहां मिशन द्वारा पंचम सिंह की की देख-रेख में स्कूल खोला गया ।[2] यह स्कूल 2 अक्तूबर,

---

1· **फाइल संख्या** - 105/1905 - पत्र दिनांक 13 जनवरी, 1905-अलीपुरा के राजा का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को -

2· ए सेन्चुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ - 37·

1911 को प्रारम्भ हुआ जिसमें शुरू में 60 विद्यार्थी थे । स्कूल का इंचार्ज गोरेलाल सिंह को बनाया गया जिसका पालन-पोषण मिशन के अनाथालय में ही हुआ था । उसके प्रयासों के फलस्वरूप हरपालपुर में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की संख्या बढ़ने लगी और शीघ्र ही यह 90 तक पहुंच गई ।[1] हरपालपुर के मिशन कार्य की मुख्य अधिकारी ईस्थर बार्ड थी । प्रारम्भ में यह स्कूल राज्य के एक भवन में शुरू किया गया गया था । कुछ समय बाद अलीपुरा के राजा द्वारा मिशन दवाखाने के साथ ही दक्षिण में स्कूल के लिये भूमि दे दी गई ।[2] यह भूमि प्राप्त हो जाने पर मिशन इंचार्ज ईस्थर बार्ड ने 28 अप्रैल, 1916 को पोलिटिकल एजेन्ट कर्नल स्पेन्स को पत्र लिखा जिसमें उसने पोलिटिकल एजेन्ट से पूछा कि अलीपुरा के राजा द्वारा उपलब्ध कराई गई भूमि पर मिशन द्वारा स्कूल की इमारत बनाये जाने के सम्बन्ध में सरकार को कोई आपत्ति तो नहीं है।[3]

1· ए सेन्चुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ - 37·

2· **फाइल संख्या**-104-डी/1916-पत्र दिनांक 28 अप्रैल 1916 - ई·ई·बार्ड का पत्र पोलिटिकल एजेन्ट को।

3· -वही

चूंकि स्कूल से पहले मिशन द्वारा एक दवाखाना चलाया जा रहा था जो इस क्षेत्र में काफी लोकप्रिय हो चुका था । अतः मिशन द्वारा स्कूल खोले जाने के सम्बन्ध में सरकार को कोई आपत्ति नहीं थी । यह जानकारी 2 मई, 1916 को ईस्थर बार्ड को लिखे गये सरकारी पत्र के आधार पर प्राप्त हुई ।[1] इस प्रकार 1916 ई॰ में स्कूल की इमारत के लिये भूमि प्राप्त हो जाने पर धीरे-धीरे इस इमारत का निर्माण कर स्कूल को उसमें स्थानान्तरित कर लिया गया ।

हरपालपुर में मिशन की स्थापना के बाद अमेरिकन मिशनरियों ने छतरपुर में अपना केन्द्र स्थापित करना चाहा । 31 मार्च, 1919 को छतरपुर के महाराजा ने इन मिशनरियों को स्कूल तथा अस्पताल की स्थापना के लिये जमीन दान में दी ।[2] यहां शीघ्र ही निर्माण कार्य आरम्भ हुआ । सबसे पहले एक छोटे बंगले का निर्माण हुआ जिसमें पानी के लिये एक कुंए की व्यवस्था भी थी । इसके पश्चात् वहां स्कूल तथा अस्पताल का निर्माण हुआ

1· **फाइल सं**·-104-डी/1916-पत्र दिनांक 2 मई, 1916 -ईस्थर बार्ड को लिखा गया सरकारी पत्र -

2· ए सेन्चुरी ऑफ प्लान्टिग - पृष्ठ - 67·

3· वही पृष्ठ - 68·

छतरपुर में अस्पताल खोलने का मुख्य उद्देश्य चिकित्सा सेवा प्रदान करने के साथ-साथ मिशन के अनाथालयों में पोषित लड़कियों को नर्स की ट्रेनिंग देना भी था । इन्हे नर्स के रूप में प्रशिक्षित करके मिशन अस्पतालों में रोजगार दिलाया जा सकता था ताकि वे आत्म निर्भर बन सकें । इसलिये ऐलेना काकिन्स ने छतरपुर में लड़कियों के लिये एक ट्रेनिंग स्कूल भी खोल दिया ।[1]

हरपालपुर एवं अन्य मिशन केन्द्रों पर इसाई धर्म के प्रचार के जो तरीके अपनाये गये उसमें इसाई स्कूलों में बाइबिल के पठन-पाठन को अनिवार्य बना दिया गया था और इसमें परीक्षा पास करना भी अनिवार्य था ।[2] यहां के स्कूल में कुछ समय बाद फीस बढ़ा दी गई । जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं कि अलीपुरा के राजा द्वारा मिशन को हरपालपुर में इमारत बनाने के लिये भूमि मुफ्त दे दी गई थी क्योंकि राजा को विश्वास था कि फ्रेन्डस मिशन की स्थापना से यहां चिकित्सा और निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था हो सकेगी । अतः राजा द्वारा मिशन की नई नीति का विरोध किया गया । हरपालपुर की जनता तथा अलीपुरा के राजा हरपालपुर मिशन की इन्चार्ज किण्डर्स के कार्य करने

1· ए सेन्चुरी ऑफ प्लांटिंग पृष्ठ - 101·

2· वही पृष्ठ - 111-112·

के तरीकों को पसन्द नहीं करते थे । अतः ईस्थर बार्ड ने उसका स्थानान्तरण नौगांव कर दिया ।[1]

इस प्रकार ईस्थर बार्ड की देखरेख में कई वर्षों तक अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन द्वारा चिकित्सा एवं शिक्षा के क्षेत्र में अद्वितीय कार्य किया गया । मिशन के सम्मुख उत्पन्न विभिन्न समस्याओं की छानबीन करने के लिये 2 दिसम्बर, 1935 को वाल्टर विलियम्स बुन्देलखण्ड आया । अन्य बातों के साथ-साथ उसने अपनी रिपोर्ट में ईस्थर बार्ड के चिकित्सा एवं शिक्षा के क्षेत्र में किये गये महत्वपूर्ण मिशनरी कार्यों की सराहना की । 1936 में ऐवरेट तथा कैथरीन कैटेल नामक दो मिशनरियों को बुन्देलखण्ड भेजा गया । 12 अक्तूबर, 1936 को ईस्थर बार्ड ने हरपालपुर में इन मिशनरियों का स्वागत किया और उन्हें मिशन कार्यों में शिक्षित किया ।[2] इस प्रकार फ्रेन्डस मिशन का कार्य आगे बढ़ता रहा । इस मिशन ने बुन्देलखण्ड में सराहनीय कार्य करके न केवल सरकार एवं जनता का विश्वास प्राप्त किया बल्कि उनके इन कल्याणकारी कार्यों के फलस्वरूप लोगों को अपना जीवन स्तर ऊंचा उठाने में काफी सहायता मिली ।

1· ए सेन्चुरी आॅफ प्लान्टिंग पृष्ठ - 113·

2· वही पृष्ठ - 143·

अध्याय : सप्तम्

मिशनरी कार्यों का मूल्यांकन

1803 में बेसिन की सन्धि के पश्चात् बुन्देलखण्ड में अंग्रेजी सत्ता का उदय हुआ । पिछले अध्यायों में हमने देखा कि ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत यह क्षेत्र आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा रहा । अकाल एवं अन्य प्राकृतिक आपदाओं के कारण लोगों की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई । ऐसे में विभिन्न अमेरिकन मिशनरियों ने बुन्देलखण्ड में आकर मिशन केन्द्रों की स्थापना की । यहां आने वाली मिशनरियां मुख्यतः फ्रेन्डस फारेन मिशनरी सोसायटी की ओहियों ईयरली मीटिंग से सम्बन्धित थीं । 1896 ई. में बुन्देलखण्ड के नौगांव क्षेत्र में सर्वप्रथम अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की स्थापना की गई । धीरे-धीरे इन मिशनरियों द्वारा नौगांव के आस-पास के इलाकों में भी मिशन केन्द्र स्थापित किये गये ।

यद्यपि इनका मुख्य उद्देश्य लोगों मे इसाई धर्म का प्रचार करके उन्हें इस धर्म में परिवर्तित करना था किन्तु इन मिशनरियों द्वारा किये गये कार्य

निःसन्देह कल्याणकारी थे । 1896 में जब अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की महिला मिशनरियों ने बुन्देलखण्ड को अपना कार्य क्षेत्र चुना उस समय यहां भयंकर अकाल व्याप्त था जिसका वर्णन हम अध्याय दो में कर चुके हैं । अकाल की इस विभीषिका के समय लोगों को भोजन एवं कपड़ा इत्यादि उपलब्ध कराकर इन मिशनरियों ने वास्तव में अति प्रशंसनीय कार्य किया । पर्याप्त सुविधायें न होने के बावजूद ये मिशनरियां दूर-दूर तक क्षेत्र के गांवों में जातीं एवं भूखे लोगों को अनाज बांटती थीं । इस तरह स्वयं कष्ट उठा कर उन्होंने लोगों की जो सेवा की उससे लोगों का प्रभावित होना स्वाभाविक ही था । इतना ही नहीं, अकाल पीड़ित बच्चों के पालन पोषण की व्यवस्था के लिये इन मिशनरियों द्वारा अनाथालय की स्थापना भी की गई । यह भी एक मानवीय कार्य था । किन्तु अनाथालय की केवल स्थापना करके उसमें अकाल-पीड़ित बच्चों को लाकर भर्ती करने से ही समस्या का निदान नहीं था बल्कि इस अनाथालय में बच्चों की उचित देख-रेख एवं उनकी शिक्षा-दीक्षा की आवश्यकता भी इन मिशनरियों द्वारा अनुभव की गई एवं इस ओर पर्याप्त कदम उठाये

गये ।

इसके अतिरिक्त लोगों को चिकित्सा सेवायें उपलब्ध कराने के उद्देश्य से मिशन द्वारा नौगांव एवं आस-पास के पिछड़े इलाकों में अस्पताल एवं दवाखाने की व्यवस्था की गई जहां रोगियों की उचित देखभाल की जाती थी । शिक्षा के क्षेत्र में भी अमेरिका की विभिन्न मिशनरियों द्वारा बुन्देलखण्ड में अद्वितीय कार्य किये गये । सम्भवतः इसके पीछे उनका उद्देश्य लोगों को शिक्षित कर उन्हें इसाई धर्म की शिक्षाओं से अवगत कराना रहा हो । किन्तु इन मिशनरियों द्वारा किये गये सभी कार्य निश्चय ही क्षेत्र के लिये बहुत महत्वपूर्ण थे । इन कार्यों के परिणामस्वरूप लोगों का इन मिशनरियों की ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक ही था ।

एक महत्वपूर्ण बात जो इस अध्ययन से स्पष्ट हुई है, यह है कि बुन्देलखण्ड में मिशनरियों को अपनी गतिविधियां जारी रखनी हेतु ब्रिटिश शासकों की सहायता लगातार प्राप्त होती रही । शायद इस उदार ब्रिटिश नीति के परिणामस्वरूप ही इनका कार्यक्षेत्र शीघ्र ही नौगांव के आसपास के क्षेत्रों

में भी फैल गया था । इस नीति के पीछे ब्रिटिश शासकों का मुख्य उद्देश्य एक ऐसे वर्ग का निर्माण करना था जो इसाई धर्म की शिक्षाओं से प्रभावित होकर ब्रिटिश शासन के प्रति वफादार हो ।

लेकिन केवल ब्रिटिश शासकों द्वारा ही मिशनरियों को इस क्षेत्र में अपनी गतिविधियां आगे बढ़ाने में सहायता मिली हो ऐसा नहीं है । स्थानीय शासकों द्वारा मिशनरी कार्यों के लिये बहुत मदद की गई । इस सहायता के पीछे इन शासकों का उद्देश्य यह था कि उनके राज्य के लोगों को चिकित्सा सेवा उपलब्ध हो सकेगी एवं शिक्षा की प्रगति सम्भव हो सकेगी । चिकित्सा एवं शिक्षा दोनों ही ऐसे महत्वपूर्ण कार्य थे जो उनके राज्यों के विकास के लिये आवश्यक थे । इसके अतिरिक्त मिशनरियों की इस सहायता के पीछे एक कारण सम्भवतः इन राजा-महाराजाओं द्वारा ब्रिटिश शासकों को प्रसन्न करना भी हो सकता है ।

इन मिशनरियों द्वारा किये गये विभिन्न कार्य वास्तव में ही सराहनीय थे । इसका प्रत्यक्ष प्रमाण इस बात से मिलता है कि ईस्थर बार्ड को सरकार द्वारा केसर-ए-हिन्द मेडल प्रदान किया गया ।

यह मेडल भारत में जन सेवा के कार्य के लिये प्रदान किया जाता था । अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की महिला मिशनरी ईस्थर बार्ड को यह मेडल प्रदान कर सरकार द्वारा बुन्देलखण्ड में उसके द्वारा की गई सेवाओं को मान्यता दी गई । इससे स्पष्ट है कि अमेरिकन मिशनरियों द्वारा किये गये कार्य वास्तव में जनकल्याण के कार्य थे ।

अमेरिकन फ्रेन्डस मिशन की मिशनरियों के अतिरिक्त अमेरिका की अन्य मिशनरियों ने भी इस पिछड़े हुये क्षेत्र में आकर स्त्रियों एवं बच्चों की शिक्षा एवं चिकित्सा कार्य को अपने हाथ में लिया । झांसी में झोकनबाग स्थित अस्पताल एक अलग मिशनरी द्वारा प्रारम्भ किया गया था ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि यद्यपि क्षेत्र में इसाई धर्म का प्रचार करना इन मिशनरियों का प्रमुख उद्‌देश्य था किन्तु इस उद्‌देश्य की प्राप्ति के लिये उन्होंने जनकल्याण का मार्ग अपनाया जिससे बुन्देलखण्ड के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में बहुत सहायता मिली ।

....

BIBLIOGRAPHY

GAZETTEER

1. Atkinson, E.T. : Statistical Descriptive and Historical Account of the North West Provinces of India, Volume I (Bundelkhand), Allahabad, 1874.

2. Drake Brockman D. L. : Banda Gazetteer, Allahabad 1909.

3. Drake, Brockman D. L. : Jhansi; A Gazetteer, Allahabad, 1909.

4. Joshi, E. B. : U.P. District Gazetteer, Jhansi, 1965.

5. U. P. District Gazetteer : District Banda

6. U.P. District Gazetteer : District Hamirpur.

7. U.P. District Gazetteer : District Jalaun.

8. Imperial Gazetteer : United Provinces, Allahabad, 1905.

9. Imperial Gazetteer of India : Vol. II

10. Imperial Gazetteer of India : Vol IX

REPORTS & TREATIES

11. Aitchinson, C.U. : A collection of Treaties Engagements & Sanads, Vol III & V, 1909..

12. American Board : First Ten Annual Reports.

13. American Board : "Centenary of America's Christian Connection with India", Annual Report 1913.

14. Cadell, A : Settlement Report on the District of Banda (Exclusive of Karwi, Sub-Division), Allahabad, 1881, North West Provinces & Oudh Government.

15. The Charter Act of 1813 :

16. The Charter Act of 1833

17. Calcutta Review Vol. XIII : January 1850 -June

18. Franklin. J : Memoirs of Bundelkhand, 1825

19. Humphrees, M. : Final Report on the Revision of the Settlement of Banda District, Allahabad, 1909

20. Impey, W.H.L. & Meston, J.S. : Report on the Second Settlement of the Jhansi District (Excluding the Lalitpur Sub-division), North Western Provinces, Allahabad, 1892.

21. Jenkinson, E.G. : Report of the Settlement of Jhansi District, Allahabad, 1871

22. Ohio Yearly Meeting minutes- 1909

23. Office Record : Mission Hospital Jhokanbagh, Jhansi.

24. Pim, A. W. : Final Settlement Report on the Revision of the Jhansi District, including Lalitpur Sub-division, Allahabad, 1907.

25. Raw, W. : Final Report on the Revision of Settlement of the Hamirpur District, 1908.

26. White, Philip : Final Report of Revision of Settlement of a Certain Portion of Jalaun District Allahabad, 1889.

Original Files & other Record from Bundelkhand Agency

27. Home Department 1896, Nov. No. 10 : Ecclesiastical Part B, Proceedings

28. File No. 1571/1904 : Proposed Building of a Chapel in the Nowgong Bazar by American Friends Mission

29. File No. 105/1905-08 Grant of Site at Harpalpur to Friends Mission by Raja of Alipura.

30. File No. 104-D/1916 : Grant of site at Harpalpur by Raja of Alipura to American Friends Mission Nowgong for School purposes.

31. File No. 62-D/1919 Grant of a Site to American Friends Mission near the 13th mile post on the Nowgong Chattarpur Road for erecting a Bunglow.

32. File No. 111/1923 : Agency Surgeons's office File
- opening of a Zanana Hospital at Datia

33. File No. 1-A/1930 : Grant of the 2nd class Kaisar-i-Hind Medal to Miss E.E. Baird, Friends Mission Nowgong.

34. File No. 11-A/1931 : Enquiry by the American Friends Mission.

35. File No. 7/1931 :- Agency Surgeon's office file.
- opening of a dispensary at Malehra.
- Contains translation of an article dated 23rd Feb. 1931 published in 'Lokmat' on weekly dispensary in Chattarpur District.

36. File No. 12 A/1931 : Opening of a weekly dispensary at Malhera, Chattarpur in the name of Major Fisher, Political Agent.

37. Intordluctory note to : Bundelkhand Agency record, Vol I 1865-1915.

OTHER HISTORICAL WORKS

38. Andrew Gordon : Our India Mission, A Thirty Year History of the Indian Mission of the United Presbyterian Church.

39. Anna Nixon, E. : A Century of Planting : History of the American Friends Mission in India

40. Benson Y. Landis : Religion in the United States

41. Barclay, W.C. : History of Methodist Mission Part II.

42. Bearce, George D. : British Attitudes Towards India 1784-1858.

43. The Church Missionary: Intelligencer, Extracts 1897-1904

44. Dodewell, M.H. : The Cambridge History of India.

45. Eddy, S. : India Awakening

46. The Friends of India : Feb 12, 1857.

47. Gibbs, M.R. : The Anglican Church in India (1600-1970) New Delhi, Indian Society for Propagation of Christian knowledge, 1972.

48. Horace G. Alaxender : Quakerism and India

49. Heywood, John H : Our India Mission & our First Missionary, 1887.

50. Jessamyn West : The Quaker Reader.

51. Lowrie, John C. : Two Years in Upper India.

52. Marjorie Sykes : Quakers in India, 1980

53. Mayhew, Arthur : Christianity & the Government of India .

54. Mill & Wilson : History of British India, Vol 7

55. Mishra, A. S. : Nana Saheb Peshwa, Lucknow 1961

56. Pathak, S. P. : Jhansi during the British Rule

57. Pathak, S. M. : American Missionaries and Hinduism.

58. Russel, William Howard My Indian Mutiny Diary.

59. Rev. Sherring, M.A. : The History of Protestant Mission in India.

60. Sharma, R. B. : Christian Missions in North India 1813-1913.

61. Sardesai, G. S. : New History of the Maratha, Vol II.

62. Sen, S. N. : Eighteen fifty seven, the Publication Division, Govt. of India, 1957.

63. Tripathi, Motilal : Bundelkhand Darshan

64. Trueblood, D.E. : The People Called Quakers.